

---

डा. आर.एस. मिश्रा, परामर्शदाता एवं वरिष्ठ त्वचा विज्ञानी कॉम्प्लेटिक सर्जन एवं पूर्व अध्यक्ष, त्वचा, यौन संचरित रोग और कुष्ठ रोग तथा निर्देशक क्षेत्रीय यौन संचरित रोग अध्यापन, प्रशिक्षण और अनुसंधान केन्द्र, सफदरजंग अस्पताल, नई दिल्ली। डा. मिश्रा विख्यात त्वचा रोग, रतिज रोग और कुष्ठ रोग विशेषज्ञ हैं जिन्हें इन क्षेत्रों में अध्यापन तथा शोध का विस्तृत अनुभव है। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में सौ से अधिक लेखों के प्रकाशन के अतिरिक्त इन्होंने एड्स, कुष्ठ रोग और त्वचा विज्ञान पर अनेक पुस्तकों की रचना की है। स्वास्थ्य शिक्षा में इनकी गहरी रुचि है और इन्होंने जनसाधारण में स्वास्थ्य संबंधी क्षेत्रों में जागरूकता उत्पन्न करने के लिए हिंदी और अंग्रेजी, दोनों में, अनेक लोक-वैज्ञानिक लेख लिखे हैं।

---

प्रस्तुत पुस्तक में डा. मिश्रा ने केवल यौन संचरित रोगों और एड्स पर ही चर्चा नहीं की है वरन् यौन क्रियाओं तथा मनो-यौन विकार संबंधी विषयों पर भी पर्याप्त बल दिया है।

---

यौन,  
यौन संचरित रोग  
और एड्स

यौन  
यौन संचरित रोग  
और एड्स

डा. आर.एस. मिश्रा

अनुवादक :  
श्यामसुन्दर शर्मा



विज्ञान प्रसार

प्रकाशक

## विज्ञान प्रसार

सी-24, कुनूब इंस्टीट्यूशनल एरिया

नई दिल्ली-110 016

पंजीकृत कार्यालय : टेक्नोलॉजी भवन, नई दिल्ली-110 016

फोन : 6967532, 6864103, 6864157

फैक्स : 6965986

इंटरनेट : <http://www.vigyanprasar.com>

ई-मेल : [vigyan@hub.nic.in](mailto:vigyan@hub.nic.in)

## यौन, यौन संचरित रोग और एड्स

लेखक : डा. आर.एस. मिश्रा

अनुवादक : श्यामसुन्दर शर्मा

हिन्दी संपादक : डा. हरिकृष्ण देवसरे

शब्द संयोजन एवं पृष्ठ योजना : सुभाष चन्द्र

© विज्ञान प्रसार

मूल अंग्रेजी संस्करण, 1996

प्रथम हिंदी संस्करण, 2001

ISBN 81-7480-074-3

सर्वाधिकार सुरक्षित। प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना पुस्तक के किसी अंश का पुनः प्रकाशन अथवा फोटोकॉपी, रिकॉर्डिंग या किसी अन्य तरीके से पुनः प्रयोग नहीं किया जा सकता।

मुद्रक : शिवम् आफसैट प्रेस, ए-12/1, नरायणा इंडस्ट्रियल एरिया, फेज-1,  
नई दिल्ली-28

मूल्य : रु. 75.00

# विषय-सूची

दो शब्द : नरेन्द्र सहगल .....	.ix
कृतज्ञता ज्ञापन .....	xii
हिन्दी संस्करण की भूमिका .....	xiii
भूमिका .....	xiii
<b>अध्याय – 1 : यौन संचरित रोग : सदैव उग्रतर होती समस्या .....</b>	<b>1-12</b>
ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, – यौन रोग : वृद्धि के कारण, – रजित रोग, – यौन संचरित रोग, – जनन-मूत्र औषधि – अपेक्षाकृत नए यौन संचरित रोग – एच.आई.वी. और यौन संचरित रोग – यौन क्रियाओं की जानकारी और उनके प्रति रवैया ही यौन-व्यवहार के निर्धारक – यौन संचरित रोगों पर नियंत्रण।	
<b>अध्याय – 2 : यौन अंगों की संरचना और कार्य .....</b>	<b>13-25</b>
पुरुष के लैंगिक अंग – स्त्री के लैंगिक अंग।	
<b>अध्याय – 3 : जननांगों के व्रणीय रोग .....</b>	<b>26-47</b>
व्रणीय यौन संचरित रोग – सिफिलिस – शैंकराभ – डोनोवैनोसिस – रजित लसीका कणिकागुल्म – जननांगों का हर्पेज़ – शिश्नमुण्डशोथ और भगशोथ।	
<b>अध्याय – 4 : जनन-मूत्र विसर्जन .....</b>	<b>48-56</b>
पुरुषों में मूत्रमार्ग से विसर्जन – स्त्रियों में विसर्जन – बच्चों में मूत्रमार्ग से विसर्जन – जटिलताएं – उपचार	
<b>अध्याय – 5 : अन्य यौन संचरित रोग .....</b>	<b>57-70</b>
गुदा-मलाशय क्षेत्र के यौन संचरित रोग – आंत्र संक्रमण – स्केबीज – गुदा-जनन/रजित अधिमांस – मोलस्कम कॉटाजिओसम – जघन जुंओं का ग्रसन।	
<b>अध्याय – 6 : एच.आई.वी. रोग और एड्स .....</b>	<b>71-91</b>
एड्स पैदा करने वाला वायरस – ऐतिहासिक पृष्ठभूमि – भारत में स्थिति – रोग का प्राकृतिक इतिहास – एच.आई.वी. और गर्भावस्था-बच्चों में एच.आई.वी. संक्रमण – प्रतिवायरसी चिकित्सा। एच.आई.वी. संचरण की रोकथाम	

में बाधाएं – नियन्त्रण – एच.आई.वी. संक्रमण की रोकथाम।	
अध्याय – 7 : एच.आई.वी./एड्स का प्रबंधन .....	92-106
<p>एच.आई.वी. संक्रमण में परामर्श का महत्व-परामर्श का उद्देश्य – रोकथाम – स्वास्थ्य संवर्धन – बचाव – सामाजिक-मानसिक सामर्थ्य – एच.आई.वी. टेस्ट से पहले परामर्श-टेस्ट पूर्व परामर्श के मुख्य आधार – टेस्ट के बाद परामर्श – वायरस (विषाणु) प्रतिरोधी औषधियाँ – विषाणु प्रतिरोधी औषधियों की क्रिया-विधि – एच.आई.वी. पॉजिटिव गर्भवती मां से गर्भस्थ शिशु को एच.आई.वी. संक्रमण से बचाने के उपाय – स्वास्थ्य कर्मियों के लिए कामकाज के दौरान बचाव के उपाय</p>	
अध्याय – 8 : यौन समस्याएं .....	107-124
<p>मानव मनोविज्ञान और यौन. – मनोवैज्ञानिक कारक जिन पर सफल मैथुन निर्भर होता है – सामान्य यौन क्रियाएं – सामान्य यौन अनुक्रिया के चरण – पुरुषों में मैथुन से संबद्ध अंग और क्रियाएं – पुरुषों में यौन मनोविकार – स्त्रियों में यौन मनोविकार – यौन संचरित रोगों के परिणामस्वरूप उत्पन्न यौन मनोविकृतियाँ।</p>	
अध्याय – 9 : यौन संचरित रोगों की रोकथाम .....	125-135
<p>सुरक्षित यौन क्रियाएं – यौर संचरित रोगियों को परामर्श – कंडोम के उपयोग से यौन संचरित रोगों और एच.आई.वी. की रोकथाम – कंडोम का इस्तेमाल करने वालों के लिए निर्देश</p>	
अध्याय – 10 : यौन संचरित रोगों का प्रयोगशाला निदान .....	136-146
<p>बिना अभिरंजन के सीधे माइक्रोस्कोप के नीचे परीक्षण – डार्क फील्ड माइक्रोस्कोपी – सिफिलिस के लिए सीरमीय परीक्षण – अभिरंजन के साथ प्रत्यक्ष माइक्रोस्कोपी</p>	
परिशिष्ट एक : कुछ महत्वपूर्ण यौन संचरित रोगों के इलाज हेतु मार्गदर्शी सिद्धांत।.....	147-150
परिशिष्ट दो : पारिमाणिक शब्दावली/तकनीकी शब्दावली .....	151-172
चित्रों और सारणियों की सूची.....	173-174

## दो शब्द

यह पुस्तक उस माला का एक पुष्ट है जो विज्ञान प्रसार ने 1995 में राष्ट्रीय विज्ञान दिवस समारोह के अवसर पर प्रकाशित की थी और जिसका मुख्य विषय था “स्वास्थ्य के लिए विज्ञान”। इस मूल योजना के अंतर्गत सुप्रसिद्ध, चिकित्सकों द्वारा जो अपने विषयों के विशेषज्ञ हों, जनसाधारण की दैनिक रुचि के जाने-माने स्वास्थ्य विषयों पर अनेक लघु पुस्तकें या पुस्तिकाओं की रचना कराने की थी। परंतु यह योजना इतनी शीघ्रता से कार्यान्वित नहीं हो सकी कि राष्ट्रीय विज्ञान दिवस की सीमा-रेखा तक पूर्ण हो सके। अतएव इस प्रयास को पुनः आयोजित करने का निश्चय किया गया और फलस्वरूप “विज्ञान प्रसार स्वास्थ्य माला” का जन्म हुआ।

डा. आर. एस. मिश्र, परामर्शदाता और अध्यक्ष त्वचा, यौन संचरित रोग और कुष्ठ रोग तथा निदेशक क्षेत्रीय यौन संचरित रोग अध्यापन, प्रशिक्षण और अनुसंधान केन्द्र, सफदरजंग अस्पताल, नई दिल्ली, द्वारा रचित प्रस्तुत पुस्तक “यौन, यौन संचरित रोग और एड्स” उन यौन संचरित रोगों के बारे में है, जो न केवल काफी व्यापक रूप से फैले हुए हैं बरन् जिनसे घ्रस्त व्यक्तियों की संख्या हमारी आबादी के कुछ हिस्सों में बढ़ भी रही हैं। एड्स जो अधिकांशतः यौन संपर्कों द्वारा फैलता है ऐसा ही एक रोग है। यौन और यौन संबंधित समस्याओं के संबंध में व्याप्त अज्ञानता और गलतफहमियों को ध्यान में रखते हुए ही लेखक ने इन विषयों पर कुछ विस्तार से चर्चा की है। अपने व्यापक अनुभव के आधार पर उन्होंने यौन संचरित रोगों की रोकथाम और उपचार पर प्रमुख निर्देशक सिद्धांतों का संकलन किया है।

हमें आशा है कि पाठक, विशेष रूप से वे पाठक जिन्होंने अपने किसी घनिष्ठ संबंधी/मित्र को इन रोगों में से किसी से पीड़ित होते देखा है अथवा जिसके बारे में उन्हें ऐसी जानकारी है, उस रोग के उपचार और नियंत्रण की पृष्ठभूमि में निहित आधार-भूत सिद्धांतों की बेहतर सराहना कर सकेंगे तथा उसके फैलने के कारणों को बेहतर तरीके से समझ सकेंगे।

इस पुस्तक के या इस माला की अन्य पुस्तकों के संदर्भ में ही नहीं वरन् प्रकाशन योजना के अंतर्गत अन्य विषयों को शामिल करने के संदर्भ में भी सुझावों का स्वागत है।

नई दिल्ली

नरेन्द्र सहगल  
निदेशक, विज्ञान प्रसार

## कृतज्ञता ज्ञापन

मैं (स्व.) डा. सी.आर.सामंत एम.आर.सी.पी. (मनो.), एम.आर.सी.पी. (औषधि), परामर्शदाता, मनोविकार विज्ञानी और सफदरजंग अस्पताल में मेरे उस समय के सहयोगी के प्रति, जिन्होंने पाण्डुलिपि में यौन समस्याओं पर अध्याय लिखने में मदद की, आभारपूर्वक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। इस अध्याय की काफी सामग्री उन जानकारियों से ली गई है जो, उन्होंने उस समय तैयार की थी जब हम दोनों एक-साथ मनो यौन रोग चिकित्सालय चलाते थे। डा.डी.पोरीछा, एम.डी.रोगविज्ञानी, केन्द्रीय सरकार स्वास्थ्य योजना के प्रति, पाण्डुलिपि संकल्पनात्मक चित्र बनाने के लिए विशेष धन्यवाद प्रकट करता हूँ। पाण्डुलिपि में किए गए वर्णन के अनुसार एकदम सही चित्र बनाने में उन्होंने अपनी कलात्मक क्षमता का भरपूर उपयोग किया है। मैं प्रो. बी.एस.एन. रेड्डी, प्रोफेसर और अध्यक्ष, चर्म-रतिज रोग विभाग, मौलाना आजाद मेडीकल कालेज एंड ऐसोसिएटेड एल.एन.जे.पी. हास्पिटल के प्रति भी एक स्त्री रोगी में एल.जी.वी. के लक्षणों को दर्शाने वाले चित्र प्रदान करने हेतु धन्यवाद देता हूँ।

मैं डा. वी. रमेश, वरिष्ठ चर्मरोगविज्ञानी और विभाग में मेरे सहयोगी को, अमेरिका की संक्रामक रोग सोसायटी द्वारा आयोजित एड्स पर अंतर्राष्ट्रीय चिकित्सीय प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में डब्लू.एच.ओ. फैलो के रूप में भाग लेते समय जो अनुभव उन्होंने प्राप्त किया था उसके आधार पर “एच.आई.वी. रोग और एड्स अध्याय की पाण्डुलिपि” तैयार करने हेतु, धन्यवाद देता हूँ। यह पुस्तक त्वचा रोग, कुष्ठ और यौन संचरित रोग विभाग के अपने सब सहयोगियों के सामूहिक ज्ञान को प्रदर्शित करती है। मैं प्रत्येक नाम का उल्लेख नहीं कर रहा हूँ परंतु सबने विभिन्न तरीकों से मेरी सहायता की थी। मैं उन सब के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ।

मैं डा. नरेन्द्र के. सहगल, निदेशक विज्ञान प्रसार और उनकी योग्य टीम के प्रति धन्यवाद देता हूँ। मैं डा. सुबोध महंती को भी पाण्डुलिपि के प्रकाशन के लिए धन्यवाद देता हूँ।

अंत में मैं अपनी पत्नी डा. निशा मिश्रा और अपने सुपुत्र श्री मृत्युंजय को भी धन्यवाद देता हूँ।

—डा. आर.एस. मिश्र

## हिन्दी संस्करण की भूमिका

यह अत्यंत हर्ष का विषय है कि 'विज्ञान प्रसार' अपनी योजना के अनुरूप 'सेक्स, सेक्सुअली ट्रान्समिटिड डिज़ीज एन्ड एड्स का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करने में सफल हो सका है। हिन्दी अनुवाद प्रख्यात विज्ञान लेखक और भूतपूर्व सम्पादक 'विज्ञान प्रगति' द्वारा सम्पन्न हुआ है। अनुवादक ने भाषा को माध्यमिक स्तर तक के पाठकों को ध्यान में रखते हुए सरल और सुग्राह्य बनाने की यथासम्भव भरपूर कोशिश की है। इसके लिए अनुवाद के दौरान उन्होंने लेखक से समय-समय पर विचार विमर्श कर विषय को सरल भाषा में प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त की है, क्योंकि सफल अनुवाद वही है, जो पाठक को अनुवाद न दिख कर मूल की भाँति प्रतीत हो तथा जिसमें मूल लेखन का पूर्ण रूपेण संरक्षण भी हुआ हो।

अंग्रेजी प्रकाशन और हिन्दी अनुवाद की पांडुलिपि तैयार करने की अवधि में एड्स और एच.आई.वी. में महत्वपूर्ण नई जानकारियां उपलब्ध हुई हैं। एच.आई.वी के प्रसरण को रोकने, विशेषकर, स्वास्थ्य कर्मियों, गर्भवती महिलाओं, गर्भस्थ शिशु को एच.आई.वी. मुक्त रखने की कारगर एच.आई.वी. निरोधी औषधियां और उपाय अब उपलब्ध हैं। एड्स रोगियों की चिकित्सा भी प्रभावी एकाधिक एच.आई.वी. निरोधी औषधियों के आने से अब अधिक सफल है। केवल मात्र औषधियों का ऊंचा मूल्य और उसके पार्श्व प्रभाव इसमें कभी-कभी आड़े आते हैं। और किसी रोग की तुलना में एड्स का परिप्रेक्ष्य अधिक तीव्रता से बदल रहा है। यह सब जानकारी इस हिन्दी संस्करण में नए सिरे से समाहित की गई है। यौन संचरित रोग में प्रयुक्त होने वाली औषधियों के मूल्यों के परिवर्तन को भी ध्यान में रखकर उचित सुधार कर दिए गए हैं।

विस्तृत हिन्दी पाठक वर्ग को देखते हुए, विशेषकर वयसंधि और युवा वर्ग के युवक/युवतियों के लिए यह जानकारी बहुत लाभकारी सिद्ध होगी, क्योंकि जननांगों, यौन समस्याओं और यौन संचरित रोगों को एच.आई.वी./एड्स के बारे में हिन्दी भाषा में अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं है। साथ ही साथ और किसी विषय की भाँति इनके बारे में वे सभी से खुलकर पूछ नहीं सकते हैं। यह पुस्तक यदि इस अभाव की पूर्ति करने के अपने लक्ष्य में सफल होती है तो यह अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि होगी। अंत में विज्ञान प्रसार के सभी अधिकारियों, विशेषकर डा. सुबोध मंहती और डा. हरिकृष्ण देवसरे को धन्यवाद देता हूं जिन्होंने इस अनुवाद को प्रस्तुत करने में विशेष सक्रियता दिखाई। आशा है अन्य भारतीय भाषाओं में भी इसका अनुवाद शीघ्र उपलब्ध हो जाएगा।

डा. आर.एस.मिश्र  
वरिष्ठ त्वचा विज्ञानी  
कॉस्मेटिक सर्जन एवं एड्स फिजीशियन  
स्टिकन केंसर एंड कॉस्मेटोलॉजी सेन्टर  
पी-१, प्रसाद नगर, नई दिल्ली-११०००५

## भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक “यौन, यौन संचरित रोग और एड्स” उस अनुभव का परिणाम है जो लेखक को, उसके पास उपचार हेतु बड़ी संख्या में आने वाले मरीजों को इन रोगों के बारे में समझाने से प्राप्त हुआ है। उन मरीजों में केवल यौन संचरित रोगों से पीड़ित मरीज ही नहीं होते वरन् आमतौर से ऐसी यौन समस्याओं से ग्रस्त व्यक्ति भी होते हैं जिनका समाधान उन्हें अनथक प्रयास करने और कितनी ही राशि खर्च करने के बाद भी प्राप्त नहीं होता। उनके लिए ये समस्याएं अत्यंत महत्वपूर्ण होती हैं और अनेक बार इनके कारण ही अपने यौन सहभागी से उनके संबंध टूटने के कगार पर पहुंच जाते हैं। उनकी व्याधियां सदैव इतनी गंभीर नहीं होतीं कि उनके निदान और उपचार हेतु उच्च कोटि की तकनीकी दक्षता की आवश्यकता हो। अधिकांशतः मरीजों की समस्याओं को केवल सहानुभूतिपूर्वक सुनने और मरीजों को यौन क्रियाओं से संबंधित मानव अंगों की रचना और कार्य समझाने की ही जरूरत होती है।

मेरे इस दृष्टिकोण को, विभिन्न स्तरों के चिकित्सा कार्मिकों तथा त्वचा और यौन संचरित रोगों में स्नातकोत्तर अध्ययनरत विद्यार्थियों, चिकित्सा अधिकारियों तथा नर्सों, प्रयोगशाला तकनीशियनों, चिकित्सा-सामाजिक कार्यकर्ताओं, स्वैच्छिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं आदि को प्रशिक्षित करने के सफदरजंग अस्पताल के दौरान और भी बल मिला। क्षेत्रीय यौन संचरित रोग अध्यापन, प्रशिक्षण और अनुसंधान केन्द्र द्वारा चलाए जाने वाले प्रशिक्षण कार्यक्रमों के निदेशक के रूप में कार्य करने के दौरान मुझे ऐसी समुचित अध्यापन सामग्री, जो आमतौर से उपलब्ध नहीं होती, की आवश्यकता के प्रति अत्यंत जागरूक बना दिया। नब्बे के दशक के आरंभिक चरणों में पाठ्यक्रम में एड्स को सम्मिलित किए जाने और उसके यौन संचरित रोगों के साथ स्पष्ट संबंध ने इस आवश्यकता को और तीव्र कर दिया। इसके अतिरिक्त चार से सात दिनों के लघुकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भाग लेने वाले चिकित्सकों को ऐसी अध्यापन सामग्री की, जिसे वे आसानी से आत्मसात कर सकें, और जिसे वे रोगियों की जांच और उपचार के लिए अपने

साथ ले जा सकें, नितांत आवश्यकता थी।

विभिन्न पक्षों की बहुमुखी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए मैंने विषय को सुग्राहा बनाने का भरसक प्रयत्न किया है। इस संदर्भ में प्रस्तुत पुस्तक इस विषय की अन्य उपलब्ध पुस्तकों की सामग्री से भिन्न है। मेरा मुख्य उद्देश्य विषय-वस्तु को भारतीय या मोटे तौर पर एशियाई संदर्भ में प्रस्तुत करना तथा इस क्षेत्र के लोगों की समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित करना है। वैसे अपने आरंभिक दिनों से लेकर वर्तमान युग तक स्वयं यौन संचरित रोगों के प्रसार और उपचार में अत्यधिक बदलाव आए हैं। चालीस के दशक के आरंभिक वर्षों में एंटीबायोटिकों के उपयोग ने यौन संचरित रोगों की उपचार पद्धति में आमूल परिवर्तन कर दिए। सिफिलिस, सुजाक, एल. जी.वी. और डोनोवैनोसिस जैसे रोगों के बड़े पैमाने पर फैलने के बावजूद भी अब उनसे पीड़ित व्यक्ति दीर्घकाल तक अपंग और कमजोर नहीं बने रहते। परंतु यौन संचरित रोगों में अनेक परजीवी, बैक्टीरिया और वायरसजन्य विकार तथा गुद-जननांग विकार, गैर-सुजाकी मूत्रमार्ग शोथ और अंततः एड्स उत्पन्न करने वाले एच.आई.वी. शामिल हो गए हैं। इनमें से अनेक रोगों के इलाज अब भी समस्या बने हुए हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में लैंगिक अंगों की संरचना और कार्यों के वर्णन कुछ विस्तार से दिए गए हैं जिससे लोग उन बातों को जान सकें जिनके बारे में पूछने में उन्हें शर्म महसूस होती है। साथ ही पुस्तक में विश्व स्वारक्ष्य संगठन के प्रबंध-निर्देशक सिद्धांतों के अनुसार यौन संचरित रोगों की विवेचना “जननांग ब्रण रोग” और “मूत्रजनन विसर्जन” के अंतर्गत की गई है। एच.आई.वी. और एड्स के विवरण इस बात को ध्यान में रखकर दिए गए हैं कि मरीज और उसके परिवारजनों को असहनीय दुख पहुंचाने में इन रोगों का योग दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। पुस्तक के हिंदी संस्करण में एक नया अध्याय जोड़ा गया है – एच.आई.वी./एड्स का प्रबंधन। इसमें एच.आई.वी. संक्रमण में परामर्श का महत्व, एच.आई.वी. संक्रमण से सामान्य व्यक्तियों तथा स्वास्थ्य कर्मियों के लिए कामकाज के दौरान बचाव के उपायों को स्पष्ट किया गया है। साथ ही एड्स चिकित्सा संबंधी नयी प्रतिरोधी औषधियों की भी अद्यतन जानकारी सम्मिलित की गयी है।

मनुष्यों को होने वाले किसी अन्य रोग—समूह की रोकथाम इतनी महत्वपूर्ण नहीं है जितनी यौन संचरित रोगों की। यहां एक विचित्र विरोधाभास है। अधिकांश अवसरों पर व्यक्ति को आनन्द के क्षणों में यह बात याद नहीं रहती है कि वह असुरक्षित यौन संपर्कों से रोगग्रस्त हो सकता है। इसलिए यह जरूरी है कि रोग के गंभीर होने से पहले ही सावधानियां क्यों न अपना ली जाएँ? “यौन संचरित रोगों की रोकथाम” अध्याय में विभिन्न नियंत्रण—उपायों और उससे भी अधिक इस बात की चर्चा की गई है कि पीड़ित व्यक्ति स्वयं क्या कर सकता है।

पुस्तक में उन यौन समस्याओं का भी, जो यौन संचरित रोगों से सीधी संबंधित नहीं है का वर्णन भी काफी विस्तार से किया गया है जिससे लोग अपनी समस्याओं को अधिक स्पष्ट तरीके से समझ सकें और स्वयं ही प्रभावशाली तरीके से उनका मुकाबला कर सकें। “यौन संचरित रोगों के प्रयोगशाला निदान” अध्याय, जन स्वास्थ्य केन्द्रों में कार्यरत चिकित्सकों और प्रयोगशाला कर्मियों के लिए है जिससे वे स्वतंत्र रूप से सरल और आधारभूत सुविधाएं स्थापित करने हेतु आवश्यक ज्ञान अर्जित कर सकें। परिशिष्ट में कुछ महत्वपूर्ण यौन संचरित रोगों के उपचार हेतु निर्देशक सिंद्हातों की सूचनाएं दी गई हैं। कुछ औषधियों के व्यावसायिक नाम भी दिए गए हैं पर उनकी सूची पूर्ण नहीं है। ऐसा केवल कुछ उपयोगी औषधियों को उपलब्ध कर सकने की दृष्टि से और उनकी कीमत का अंदाजा कराने के लिए ही किया गया है क्योंकि औषधियों के मूल्य जल्दी—जल्दी बदलते रहते हैं। इसलिए बताए गए मूल्य हमेशा सही नहीं उतरेंगे। कुछ तकनीकी शब्दों को, जिन्हें पुस्तक में बार—बार इस्तेमाल किया गया है, “पारिभाषिक शब्दावली” शीर्षक परिशिष्ट में समझाया गया है। साथ ही अंग्रेजी के तकनीकी शब्दों की एक तालिका भी दी गई है।

यदि यह पुस्तक युवा वर्ग को यौन क्रियाओं के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण अपनाने और यौन संचरित रोगों से मुक्त जीवन बिताने में कुछ मदद कर सके तो यह अपने उद्देश्य में काफी हद तक सफल समझी जाएगी। चिकित्सक और सहायक चिकित्साकर्मी (पैरामेडिकल) इसे वर्तमान पाठ्य पुस्तकों से

एकदम भिन्न पाएंगे। इससे वे अपने रोगियों का बेहतर तरीके से इलाज कर सकेंगे।

भविष्य में पुस्तक की विषय-वस्तु में सुधार करने की दृष्टि से सुझावों और टिप्पणियों का स्वागत है।

—डॉ. आर.एस. मिश्रा

## यौन संचरित रोग : सदैव उग्रतर होती समस्या

### ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

प्राचीन चिकित्सा तथा अन्य ग्रंथों में अंकित वर्णनों के आधार पर कहा जा सकता है कि यौन संचरित रोगों का एक लंबा इतिहास है। यद्यपि अत्यंत प्राचीन ग्रंथों में इनका वर्णन बहुत सही नहीं है पर यह कहना उपयुक्त होगा कि प्राचीन काल में भी लोगों को यह स्पष्ट रूप से मालूम था कि ये रोग विवाहेतर यौन संबंधों तथा अन्य तरीकों से फैलते हैं। संस्कृत ग्रंथों में इनसे ग्रसित होने का श्रेय गुप्त यौन संबंधों को दिया गया है। यद्यपि प्राचीन चीन, मिस्र और ईसाई धर्म के अनेक ग्रंथों में विभिन्न यौन संचरित रोगों के वर्णन मिलते हैं पर भारतीय ग्रंथों में सिफिलिस का प्रथम उल्लेख सोलहवीं शताब्दी में रचे गए आयुर्वेद के ग्रंथ भावप्रकाश में पाया जाता है। इसमें उसे “फिरंगी रोग” (गोरे आदमी का रोग) कहा गया है।

एंटीबायोटिकों की खोज से पहले ये रोग पीड़ित व्यक्ति की सेहत का नाश कर देते थे और अंततः मौत ही इनसे छुटकारा दिला पाती थी। इन खतरनाक बीमारियों में सिफिलिसी हृद् रोग, तंत्रिका तंत्र की सिफिलिस (जिसमें रीढ़ भयंकर रूप से क्षतिग्रस्त हो जाती है, रोगी की मानसिक क्षमता कम हो जाती है और अंततः वह रोगी पागल हो जाता है), पुरुषों का सुजाक (जिसके कारण मूत्रमार्ग संकुचित हो जाता है और मूत्र त्यागने में भयंकर पीड़ा होती है; शिशुओं की उच्च मृत्यु दर और स्त्रियों का बांझपन शामिल थे।

चालीस के दशक के आरंभ में पेनीसिलिन के आगमन ने और बाद में अनेक रोगों के लिए कारगर एंटीबायोटिकों के विकास ने, पहली बार बैक्टीरियाजन्य यौन संचरित रोगों के कलेवर को ही बदल दिया। अब इन रोगों के अतिंम चरणों में होने वाली जटिलताएं आमतौर से नहीं देखी जातीं। परंतु इनमें से अनेक रोगों के प्रभावी उपचार उपलब्ध होने के बावजूद इलाज में ढील देने से उनसे ग्रसित लोगों की संख्या, अधिकाश विकसित देशों में

भी, कम नहीं हुई। यौन संचरित रोगों पर नियंत्रण, रोग के लक्षणों के इलाज के साथ ही समाप्त नहीं हो जाता। उसमें उपचार के बाद रोगियों के यौन संबंधों में सुधार तथा समाज में इन रोगों से संबंधित यौन और स्वास्थ्य शिक्षा प्रदान करना भी शामिल है। जिन स्थानों पर इन रोगों पर पूरी तरह काबू पाने में सफलता नहीं मिली है उनमें से अधिकांश में उक्त पहलुओं पर ध्यान नहीं दिया गया था।

## यौन रोग: वृद्धि के कारण

सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न होने वाले अन्य अनेक रोगों यथा निमोनिया, टायफायड, क्षय आदि के विपरीत यौन संचरित रोगों का कारण चिकित्सीय-सामाजिक अव्यवस्था है। इन रोगों से पीड़ित व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि होने के अनेक कारण हैं यथा :

- (1) अपेक्षाकृत कम आयु में ही लोगों का यौन रूप से परिपक्व हो जाना;
- (2) कम आयु में ही मैथुन आरंभ कर देना;
- (3) अधिक से अधिक लोगों का विवाह से पूर्व यौन संबंध;
- (4) मौखिक गर्भनिरोधक गोलियों के और अंतरायेनि युक्ति (आई.यू.डी.) के प्रचलन के परिणामस्वरूप महिलाओं के गर्भधारण करने के भय से मुक्ति पा लेने के परिणामस्वरूप प्रभावी भौतिक गर्भ-निरोधक यानि कंडोम के उपयोग का कम हो जाना। इससे असुरक्षित जननांगों पर यौन संचरित रोगों के सूक्ष्मजीवों का आक्रमण आसानी से हो जाता है।
- (5) रोजगार की तलाश में भटकने वाले लोग तथा अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने के इच्छुक लोग अधिक से अधिक संख्या में, बड़े शहरों की ओर आकर्षित हो रहे हैं। पर बड़े शहरों की गुमनामी की जिदंगी उन्हें अनजान लोगों से यौन संबंध स्थापित करने के लिए बढ़ावा देती है। इन संबंधों से यौन संचरित रोगों से ग्रसित होने के खतरे भी बढ़ जाते हैं।
- (6) कुछ लोग, यथा व्यापार के सिलसिले में अक्सर ही यात्रा करने वाले

व्यक्ति, पर्यटक, सैनिक, दूसरे देशों से आ बसे लोग, चिरसम्मत सामाजिक परिधि से बाहर अपेक्षाकृत अधिक यौन संबंध स्थापित कर लेते हैं। इसलिए उनके यौन संचरित रोगों से ग्रस्त होने के अवसर भी अधिक हो जाते हैं।

- (7) कुछ यौन संचरित रोगों यथा सुजाक, शैकराभ (शानक्रॉयड), डोनोवैनोसिस आदि के सूक्ष्मजीवों ने औषधियों के प्रति रोध विकसित कर लिया है।
- (8) नए वायरसों यथा वार्ट और हरपीज़ वायरसों का आगमन। इनमें सबसे बाद में आने वाला वायरस है एच.आई.वी. जो एड्स उत्पन्न करता है।
- (9) यौन संचरित रोगों से पीड़ित होने वाले लोगों की संख्या में वृद्धि होने के संदर्भ में उपलब्ध उपचार सुविधाएं और नियंत्रण उपाय, दोनों ही अपर्याप्त हैं।

### रतिज रोग (वी.डी.)

दो दशाब्द पूर्व तक ये रोग “रतिज रोग” (वेनेरियल डिजीजेज – वी.डी.) कहलाते थे। इनमें पांच रोग सिफिलिस, सुजाक, शैकराभ, डोनोवैनोसिस और रतिज लसीका कणिकागुल्म (लिम्फोग्रैनुलोमावेनेरियम) शामिल थे। आम आदमी इन्हें “गर्मी की बीमारी” कहता है। कदाचित् उनका इशारा मैथुन के दौरान पैदा होने वाली गर्मी की ओर रहता है। “रतिज” शब्द की उत्पत्ति कामदेव की पत्नी, रति, के नाम पर हुई है। इस उत्पत्ति का कारण कदाचित् यह भ्रम था कि ये रोग रति क्रिया के फलस्वरूप ही उत्पन्न होते हैं।

### यौन संचरित रोग

सत्तर के दशक में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इस समूह के रोगों का यह भ्रामक नाम बदलने का निश्चय किया। उसने इनके लिए एक नया नाम “यौन संचरित रोग” (सेक्सुअली ट्रांसमिटेड डिजीजेज – एस.टी.डी.) सुझाया जिससे कि इन रोगों के संचरित होने के सही कारण भी एकदम समझ में आ सकें। इन

रोगों से संक्रमित व्यक्ति अपने संक्रमण को, मैथुन द्वारा ही अपने स्वस्थ सहभागी के शरीर में पहुंचाता है।

वैसे सत्तर के दशक तक इस समूह में कई नए रोग शामिल हो गए थे जो बैकटीरिया के अतिरिक्त वायरस, प्रोटोजोआ, कवक या परजीवियों द्वारा भी उत्पन्न होते हैं। इनके शामिल होने से यौन संचरित रोगों की संख्या बढ़कर लगभग पच्चीस हो गई। अब पहले से ज्ञात पांच रोग “प्राचीन” (क्लासिकल) यौन संचरित रोग“ कहलाते हैं और अन्य “गौण यौन संचरित रोग“।

## जनन—मूत्र औषधि

जब विश्व स्वास्थ्य संगठन अपना उक्त निर्णय ले ही रहा था, लगभग उसी समय ब्रिटेन के रतिज रोग विशेषज्ञों ने अपनी विशेषज्ञता के क्षेत्र का नाम बदलकर “जनन—मूत्र औषधि” (जेनीटो—यूरेनरी मेडिसिन – जी.यू.एम.) करने का निश्चय किया। इससे चिकित्सा बिरादरी में न केवल उनका सम्मान बढ़ा वरन् रतिज रोग विशेषज्ञता को शल्यकर्म की शाखा के रूप में मान्यता देने के विपरीत उसे औषधि—आधारित बना दिया।

वर्ष 1981 में, एड्स के आगमन ने, इन रोगों का कलेवर ही बदल दिया। अब एक नया तथ्य सामने आ गया। एच.आई.वी. एक ऐसा रोग उत्पन्न करते हैं जिसके कुप्रभाव अनेक अंगों पर एक साथ पड़ते हैं और उनसे थोड़े समय में ही रोगी की मृत्यु हो जाती है। इससे भी अधिक खतरनाक होती है उसकी अलक्षणी अवस्था (वह अवस्था जिसमें रोग के कोई भी बाह्य लक्षण प्रकट नहीं होते) इसमें यह वायरस उन स्वस्थ लोगों को बड़ी संख्या में ग्रस्त कर लेता है जो (क) एच.आई.वी. से ग्रस्त व्यक्तियों के यौन संपर्क में आते हैं या (ख) उनका रक्त ग्रहण करते हैं, अथवा (ग) नशीले पदार्थों के सेवन के लिए साझी सुई का उपयोग करते हैं। इनके अतिरिक्त स्वस्थ समुदाय में वह अन्य खतरनाक तरीकों से भी फैलता है।

## अपेक्षाकृत नए यौन संचरित रोग

विभिन्न यौन संचरित रोगों के लक्षण उत्पन्न करने के लिए जिम्मेदार

सूक्ष्मजीवों की संख्या बहुत बड़ी है (तालिका- 1)। सूक्ष्मजीवों के बारे में हमारे ज्ञान में वृद्धि और जीवशास्त्र के क्षेत्र में हुई प्रगति ने उन सूक्ष्मजीवों की संख्या काफी बढ़ा दी है जिनके बारे में आज हमें जानकारी है।

### सारणी : 1

#### विभिन्न रोग उत्पन्न करने वाले यौन संचरित रोगाणु

रोगाणु	रोग
(क) बैकटीरिया	
1. ट्रिपोनमा पैल्लीडम	<ul style="list-style-type: none"> <li>● सिफिलिस</li> <li>● टी.ओ.आर.सी.एच.ई.एस. संलक्षण</li> <li>● समलैंगिक पुरुषों में मलाशयशोथ</li> <li>● पुरुषों में मूत्रमार्गशोथ</li> </ul>
2. निसीरिया गोनोरीया	<p>विस्तृत सुजाकी संक्रमण अधिवृष्ण शोथ योनि विसर्जन गर्भाशयग्रीवा शोथ कूलहे की सूजन (पी.आई.डी.) समलैंगिक पुरुषों में मलाशय शोथ नवजात शिशु में नेत्र-श्लेष्मलाशोथ</p>
3. हीमोफिलस डुक्रेई	<ul style="list-style-type: none"> <li>● शैंकराभ</li> </ul>
4. क्लेमीडिआ ट्रेकोमेटिस	<p>रतिजलसीकाकणिकागुल्म (एल.जी.वी.)</p>
सेरोवार एल1, एल2, एल3	<ul style="list-style-type: none"> <li>● गैर-सुजाक मूत्रमार्गशोथ</li> </ul>
सेरोवार डी.से.के. तक	<p>गर्भाशयग्रीवा शोथ योनि विसर्जन कूलहे की सूजन (पी.आई.डी.) मलाशयशोथ अधिवृष्ण शोथ, जननांगों के संक्रमण सहित तीव्र</p>

संधिशोथ,

शिशु निमोनिया,  
नवजात नेत्रश्लेष्मता शोथ,

5. कैलीम्माटो बैकटीरियम

ग्रैनुलोमेटिस

6. माइकोप्लाज्मा होमीनिस

7. यूरियाप्लाज्मा यूरियालाइटिकम

8. शिगेला प्रजातियां

9. कैम्पीलोबेक्टर प्रजातियां

10. समूह बी के स्ट्रेप्टोकोकस

11. बैकटीरिअल वैजाइनोसिस

संबद्ध सूक्ष्मजीव

- डोनोवैनोसिस

- योनि विसर्जन कूल्हे की सूजन

- पुरुषों में मूत्रमार्ग शोथ

- योनि विसर्जन

- समलैंगिक पुरुषों में शोथ

- समलैंगिक पुरुषों में शोथ

- नवजात पूतिता

- योनि विसर्जन

(ख) वायरस

1. एच. आई.वी.

- एड्स

2. ह्यूमन पैपिलोमा वायरस

- जनन और गुदा अधिमांस

3. मोलास्कम कंटिजिओसम वायरस

- मोलस्कम कंटिजिओसम

4. ह्यूमन (अल्फा) हर्पेंजवायरस

- जननांग व्रणोत्पत्ति

1 अथवा 2 (हर्पेंज

गर्भाशयग्रीवाशोथ

सिम्लैक्स वाइरस)

समलैंगिक पुरुषों में प्रोक्टाइटिस

टी.ओ.आर.सी.एच.ई.एस.संलक्षण

5. ह्यूमन (बीटा) हर्पेंज वायरस

- टी.ओ.आर.सी.एच.ई.एस.संलक्षण

(पहले साइटोमेगालो नाम

हेपेटाइटिस वायरस

से प्रचलित)

6. हेपेटाइटिस वायरस बी.

- हेपेटाइटिस

(ग) प्रोटोजोआ

1. ट्राइकोमोनास वैजाइनैलिस

- योनिशोथ

2. एन्टअमीबा हिस्टोलिटिका

- समलैंगिक पुरुषों में शोथ

## 3. जिआरडिआ लैमिला

- समलैंगिक पुरुषों में आन्त्रशोथ

## (घ) कवक

## 1. कैडिडा अल्बीकैन्स

- घोनिशोथ

## (च) बहिर्परजीवी

## 1. सारकोटेस स्क्रेबी

- स्केबीज़

## 2. थायरस प्यूबिस

- सघन जुंएं का रोग

गैर-सुजाकीय मूत्रमार्गशोथ जैसी अनेक नई बैक्टीरियाजन्य विकृतियों से तथा रतिज लसीका कणिका गुल्म (लिम्फोग्रैनुलोमा वेनेरियम – एल.जी.वी.) जैसी पहले से ज्ञात विकृतियों को उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीवों की समुचित पहचान और वर्गीकरण से इन रोगों के और इनके समुचित उपचार के बारे में हमारे ज्ञान में बहुत वृद्धि हुई है। (रतिज लसीका कणिका गुल्म अथवा लिम्फोग्रैनुलोमा वेनेरियम काफी बड़े नाम हैं और कुछ अटपटे भी। अतएव हम इस रोग के संक्षिप्त नाम, “एल.जी.वी.” का ही उपयोग करेंगे)। गुदा मैथुन और मुख मैथुन जैसी अप्राकृतिक यौन क्रियाओं के फलस्वरूप भी अनेक बैक्टीरियाजन्य बीमारियां, जो मुख्य रूप से उदर और आंतड़ियों की ही बीमारियां हैं, एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को पहुंच जाती हैं। इनमें शिगेला और साल्मोनेल्ला बैक्टीरिया से उत्पन्न होने वाली अमीबा-रुग्णता और डायरिया प्रमुख हैं। ट्राइकोमोनीयता जैसे कैडिडा और प्रोटोजोआ संक्रमण शिशनमुंडशोथ और योनि विसर्जन का कारण बन सकते हैं। बहिर्परजीवी द्वारा उत्पन्न स्केबीज और सघन जूँ संक्रमण जैसी बीमारियां गैर-लैंगिक घनिष्ठ सम्पर्क के अलावा अतिरिक्त यौन क्रियाओं द्वारा भी लग सकती हैं। हर्पीज जेनीटैलिस (जननांगों की हर्पीज) जैसी वायरसजन्य बीमारियां, अधिमांस वायरस तथा हेपेटाइटिस उत्पन्न करने वाले वायरस भी यौन सम्पर्कों से फैल सकते हैं। यद्यपि मानव रोगक्षमहीनता वायरस (ह्यूमन इम्यूनो डेफिसिएंसी वायरस – एच.आई.वी.) का पता हाल ही में चला है पर वह मानव जाति के अस्तित्व के लिए, विशेष रूप से अफ्रीका और एशिया के विकासशील देशों के लोगों के लिए, बहुत बड़ा खतरा बन गया है।

एंटीबायोटिकों के आगमन से पहले, 1940 के दशक से पूर्व, प्रभावशाली उपचार उपलब्ध न होने के कारण, यौन संचरित रोगों से पीड़ित होने की घटनाएं बहुत बढ़ गई थीं। परं पेनीसिलीन और अनेक रोगों के उपचार में उपयोगी, ब्रॉड स्पेक्ट्रम एंटीबायोटिकों की उपलब्धि के फलस्वरूप स्थिति में नाटकीय रूप से सुधार हुआ है। परंतु इन रोगों से पीड़ित व्यक्तियों की संख्या में तेजी से आरंभिक कमी के बाद, 1970 के दशक में, एक बार फिर तेजी से वृद्धि हुई। इस बारे में दो विकसित देशों, उदाहरणार्थ ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका के अनुभव सर्वथा भिन्न हैं। एंटीबायोटिकों के उपलब्ध हो जाने पर संयुक्त राज्य अमेरिका में यौन संचरित रोगों का इलाज करने वाले अस्पताल बंद कर दिए गए और इनके रोगियों को सामान्य जनस्वास्थ्य अधिकारियों को सौंप दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि सिफिलिस और सुजाक जैसे बैक्टीरियाजन्य रोगियों की संख्या में वृद्धि होने लगी। दूसरी ओर ब्रिटेन में रतिज रोग अस्पतालों को बंद नहीं किया गया वरन् रोग फैलाने वाले व्यक्तियों की खोज करके तथा स्वास्थ्य शिक्षा आंदोलन को जारी रखकर यौन संचरित रोगों को नियंत्रण में रखा जा सका। इसका परिणाम यह हुआ कि ब्रिटेन में एच.आई.वी. और एड्स के खतरों पर भी शीध काबू पा लिया गया। वैसे इस क्षेत्र में, विकसित देशों के अनुभव विकासशील देशों के लिए उपयोगी सिद्ध नहीं हुए हैं क्योंकि विकासशील देशों के पास चिकित्सा सुविधाओं की बहुत कमी थी। जिससे अन्य खतरनाक रोगों से निपटने में ही उनके साधन समाप्त हो जाते हैं। इसलिए इस सामाजिक-चिकित्सीय समस्या से निपटने के लिए उनके पास साधन ही नहीं बचते। साथ ही यौन संचरित रोगों के निदान कभी भी एकदम रामबाण नहीं होते। बहुत से रोगियों द्वारा अपने रोग की सूचना न देने और उन लोगों का पता न लग पाने से जिनके संपर्क में आने पर ये रोग उत्पन्न हुए थे तथा उनका इलाज न कर पा सकने की परिस्थितियों में विभिन्न यौन संचरित रोगों के महामारी के रूप में फैलने के बारे में कोई स्पष्ट चित्र उपलब्ध नहीं हो पाता। इसीलिए जिस प्रकार सागर में तिरते हुए हिमखंडों का केवल दसवां भाग ही हमें दिखाई देता है उसके नौ भाग पानी में डूबे रहते हैं – उसी प्रकार विकासशील देशों में यौन संचरित



**चित्र 1 :** जिन यौन संचरित रोगों की रिपोर्ट वर्ज करायी जाती है वे हिम खंड के पानी की सतह के ऊपर दिखने वाले भाग की भाँति होते हैं।

रोगों के फैलने के बारे में हमें बहुत ही कम जानकारी है। (चित्र 1) विश्वसनीय आंकड़ों के अभाव में यौन संचरित रोगों की समस्या को यौन रूप से सक्रिय आयु समूह में आने वाले सब लोगों की समझा समझा जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में भारत में इसे एक—तिहाई जनसंख्या की — लगभग 30 करोड़ लोगों की — समस्या समझा जाना चाहिए और उससे निपटने के लिए उसी के अनुरूप रणनीतियां अपनायी जानी चाहिए।

## एच.आई.वी. और यौन संचरित रोग

एड्स के फैलने के संदर्भ में यौन संचरित रोगों की रोकथाम का महत्त्व और बढ़ गया है। अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि एच.आई.वी. और यौन संचरित रोग फैलाने वाले अनेक कारक समान हैं। इसके अतिरिक्त एच.आई.वी. को फैलाने में यौन संचरित रोग सह—कारक का कार्य करते हैं। व्रणीय और गैर—व्रणीय, दोनों प्रकार के, यौन संचरित रोगों ने एच.आई.वी. के संक्रमण और एड्स के विकास के प्रति लोगों की संवेदनशीलता को

बढ़ाने में सहायता दी है। एच.आई.वी. संक्रमण में जननेन्द्रियों पर विक्षितियों की अनुपस्थिति ने वैज्ञानिकों को भी इस बात पर “क्या एच.आई.वी. को यौन संचरित रोग समझा जाना चाहिए” बहस करने के लिए प्रेरित कर दिया। विभिन्न स्रोतों यथा महिला यौन कर्मचारी और यौन रोगियों के संपर्क में आने वाले अन्य लोगों आदि के बारे में एकत्रित किए गए आंकड़ों से यह स्पष्ट रूप से प्रमाणित हो गया है कि एच.आई.वी. मुख्य रूप से यौन संबंधों द्वारा ही फैलता है। इस प्रकार यह किसी भी यौन संचरित रोग की भाँति ही यौन क्रियाओं द्वारा फैलने वाला एक यौन रोग है। लेकिन इसमें कोई जननांगीय क्षति नहीं होती है। एक अन्य महत्वपूर्ण यौन रोग, सिफिलिस होता है। उसका संचरण भी उसी प्रकार होता है जैसा कि गैर-यौन तरीकों यथा दूषित रक्त, नशे के आदी व्यक्तियों द्वारा साङ्झी सुई का उपयोग, रोगी मां से नवजात शिशु को होने वाला आदि।

## यौन क्रियाओं की जानकारी और उनके प्रति रवैया ही यौन-व्यवहार के निर्धारक

यौन क्रियाओं के प्रति हमारे रवैये पर ही, बहुत हद तक हमारा यौन व्यवहार आधारित होता है। इसके अतिरिक्त यौन व्यवहार के अंतर्गत आने वाले अनेक कार्य यौन संचरित रोगों से ग्रस्त होने अथवा न होने की संभावना को निर्धारित करते हैं। पूर्ण ब्रह्मचर्य ही किसी यौन संचरित रोग से सर्वथा मुक्ति की एकमात्र गारंटी है। उल्लेखनीय है कि एक दूसरे के प्रति वफादार पति—पत्नी भी जो किसी अन्य स्त्री/पुरुष से यौन संपर्क नहीं रखते, मैथुन—पूर्व अनेक अप्राकृतिक यौन क्रियाओं यथा मुख मैथुन, गुदा मैथुन, हाथ/अंगुली से जननेन्द्रियों को छूने—मसलने आदि के फलस्वरूप भी अनेक यौन रोगों के शिकार हो सकते हैं। एक से अधिक व्यक्तियों के साथ यौन संबंध, समलिंगी संबंध, स्त्री—स्त्री के समलिंगी संबंध आदि स्थिति को और भी नाजुक बना देते हैं और यौन संचरित रोगों के प्रवाह का द्वार खोल देते हैं।

यह स्पष्ट रूप से प्रमाणित हो चुका है कि मानव व्यवहार और यौन संचरित रोगों का आपस में घनिष्ठ संबंध है। मानवीय यौन-व्यवहार के लिए उत्तरदायी

दो मुख्य कारक हैं – (1) यौन संतुष्टि अथवा व्यक्ति विशेष की यौन आवश्यकताएं, और (ख) सामाजिक रूप से अनैतिक यौन व्यवहार करने की स्थिति में यौन संचरित रोगों से पीड़ित व्यक्ति के रूप में पहचाने जाने की स्थिति में, आने वाली शर्म।

## यौन संचरित रोगों पर नियंत्रण

इस बारे में समाजशास्त्रियों और मनोवैज्ञानिकों को परेशान करने वाला अहम सवाल यह है कि जब यौन संपर्क स्थापित करने के अवसर आते हैं तब लोग अपने संपूर्ण ज्ञान और प्रशिक्षण को ताक पर क्यों रख देते हैं और स्वयं को यौन संचरित रोगों से ग्रस्त हो जाने के खतरे में डाल देते हैं।

यौन संचरित रोगों का स्थान विश्व में सर्वाधिक प्रचलित रोगों में है। विकासशील देशों में ये रोग उन पांच रोगों में शामिल हैं जिनके लिए चिकित्सा सेवाओं की मदद की मांग की जाती है और जिनसे सबसे अधिक लोग पीड़ित होते हैं। एच.आई.वी. संक्रमण और एड्स के प्रसार ने यौन संचरित रोगों का प्रभावशाली ढंग से इलाज करने का महत्व प्रकाश में आया है। ब्रिटेन जैसे कुछ देशों ने जहां यौन संचरित रोग–नियंत्रण कार्यक्रम सुचारू रूप से कार्यान्वित किए गए हैं वहां एच.आई.वी. – एड्स महामारियों पर काबू कर पाना काफी आसान सिद्ध हुआ है।

निम्न उपाय लोगों को यौन संचरित रोगों से ग्रस्त होने के खतरों से बचा सकते हैं :

- ब्रह्मचर्य – यौन संपर्कों को तिलाजंलि।
- वेश्याओं से या किसी अज्ञात व्यक्ति से अथवा ऐसे व्यक्तियों से जिनका अनेक व्यक्तियों से यौन संपर्क हो, यौन संबंध स्थापित न करना।
- उन लोगों के साथ यौन संबंध स्थापित न करें जिनकी जननेंद्रियों में कोई विक्षति यथा व्रण, मूत्रमार्ग–विसर्जन, मस्सा, हर्पीज आदि हो।
- कंडोम का उपयोग करें।
- एक से अधिक व्यक्तियों के साथ यौन संबंध रखने वाले व्यक्ति को नियमित रूप से अपनी जांच करानी चाहिए।

- यौन संचरित रोगों से बचने का सबसे प्रभावशाली तरीका केवल पति/पत्नी के बीच सुरक्षित यौन संबंध ही है।

असंयमित यौन संबंधों की स्थिति में :

- रोगग्रस्त हो जाने का संदेह हो जाने पर चिकित्सक से तुरंत सलाह लें।
- चिकित्सक से परामर्श के अनुसार मौखिक या इंजेक्शनों द्वारा औषधि लें।
- चिकित्सक के परामर्श के अनुसार समय-समय पर अपनी जांच करवाएं।
- यदि आवश्यक हो तो चिकित्सक के आंदेश पर यौन संबंधों में अपने सहभागी को भी जांच के लिए लाएं।



## अध्याय दो

### यौन अंगों की संरचना और कार्य

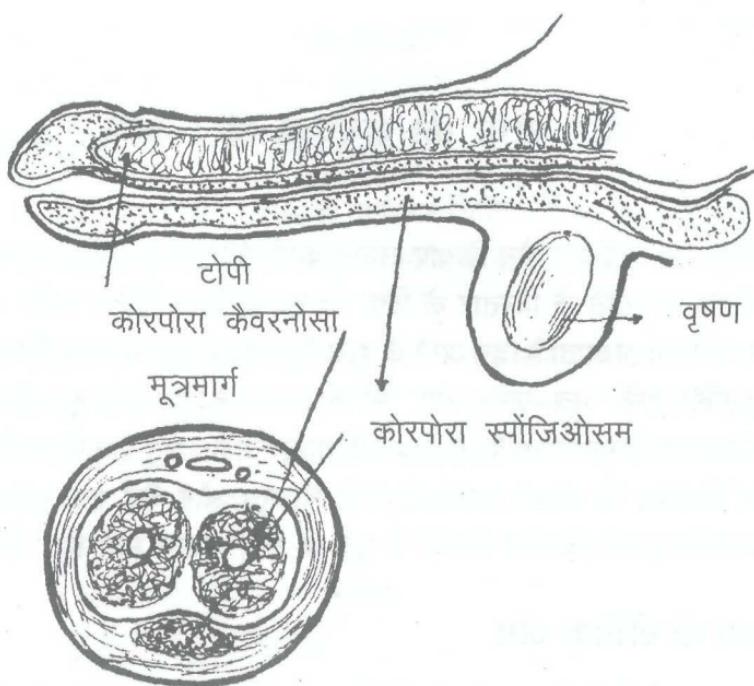
लैंगिक अंग न केवल यौन क्रियाएं संपन्न करने में सक्षम होते हैं वरन् अंततः वे ही मानव जाति के विस्तार के लिए उत्तरदायी हैं। इसीलिए उन्हें “बाह्य यौन अंग” कहा जाता है। इन अंगों के द्वारा ही शरीर से मूत्र भी बाहर निकलता है इसलिए उन्हें “मूत्र-जनन अंग” भी कहा जाता है। पुरुषों में मूत्र और वीर्य के लिए एक ही मार्ग होता है जो ‘मूत्रमार्ग’ कहलाता है, परंतु प्राकृतिक संरचना और नियंत्रण के कारण उसमें से कभी भी मूत्र और वीर्य एक साथ नहीं निकलते। इसके विपरीत स्त्रियों में मूत्र के लिए अलग मार्ग होता है।

### पुरुष के लैंगिक अंग

शिश्न : अपनी शिथिल अवस्था में शिश्न 5–7 सेमीं लंबा होता है। शिश्न की देह कोरपोरा कैवरनोसा के एक संयोजित युग्म से उच्छायी उतक के दो पिँड़ों से बनी होती है, जो शिश्न के तनाव की स्थिति में रक्त से भर जाते हैं। ये पश्च रूप से स्थित होते हैं। इनमें मांसपेशी का एक अन्य उच्छायी स्तम्भ, कोरपोरा स्पोन्जिओसम होता है जो शिश्न की निचली सतह पर मूत्रमार्ग को धेरे रहता है। उसका अंतस्थ सिरा ही फैलकर शिश्न का अग्रभाग, टोपी बन जाता है। स्तंभित अवस्था में शिश्न की लंबाई 15–20 सेमीं तक हो सकती है (चित्र 2)। शिश्न की टोपी खाल से ढकी रहती है, जिसे मुस्लिम और यहूदी समुदायों में, रिवाज के बतौर, काट दिया जाता है। टोपी की सतह चिकनी होती है और वह शिश्न को योनि में प्रविष्ट कराने में सहायक होती है।

शिश्न का जड़ भाग कोरपोरा कैवरनोसा द्वारा कूल्हे की हड्डियों से मजबूती से जुड़ने के लिए फैल जाता है। उसे धेरे हुए दो मांसपेशियां कामोत्तेजना के चरम बिंदु तथा स्तंभन के दौरान स्वेच्छा से शिश्न के तालमय संकुचन में मदद करती हैं।

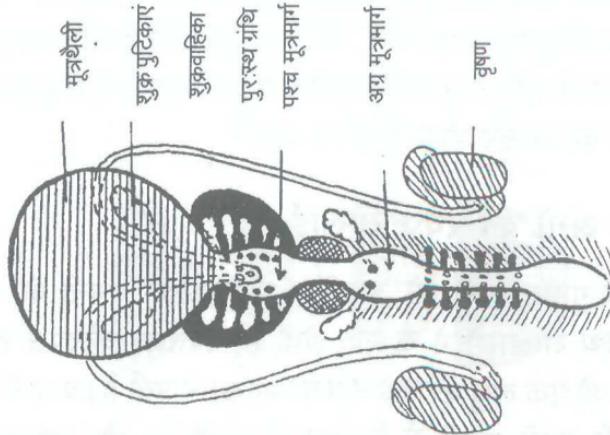
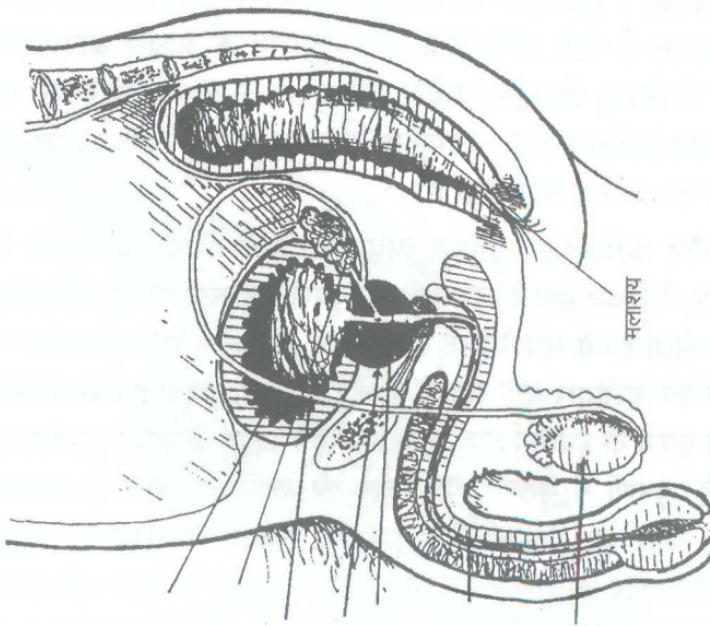
मूत्रमार्ग : यह लंबाई में दो भागों में विभक्त होता है : पहला शिश्न के अंदर



चित्र 2 : शिश्न की अनुदैर्ध काट

का भाग जो लगभग 15 सेमी. लंबा होता है और दूसरा शिश्न की जड़ के पीछे का भाग। पहला भाग अग्र मूत्रमार्ग कहलाता है और दूसरा पश्च मूत्रमार्ग (चित्र 3)। अग्र मूत्रमार्ग में ही काउपर और लिटरे ग्रन्थियों के साव गिरते हैं। पर मूत्र वाहिनियां कुछ दूरी तक, शिश्न की टोपी के अंतिम सिरे पर मूत्र छिद्र के दोनों ओर स्थित होती हैं। पश्च मूत्रमार्ग झिल्ली और पुरस्थ मूत्रमार्ग में विभक्त होता है। झिल्लीयुक्त मूत्रमार्ग 1-2 सेमी. लंबा होता है और संपीडक मूत्र मांसपेशी से घिरा रहता है। पुरस्थ मूत्र मार्ग 3 सेमी. लंबा होता है। इसमें अनेक छोटे-छोटे छिद्रों में पुरस्थ ग्रन्थि के साव और एक सम्मलित स्खलनीय वाहिनी में से, वीर्य गिरता है।

**पुरस्थ ग्रन्थि :** पुरस्थ ग्रन्थि एक मजबूत शंकुवाकार अंग होता है जिसका आधार मूत्राशय की गर्दन के निकट स्थित होता है। इस ग्रन्थि के एक मध्य



चित्र 3 : पुरुष के लैंगिक अंग

तथा दो पार्श्व खंड होते हैं। इसके ग्रंथिल ऊतक पर स्तंभाकार उपकला का अस्तर चढ़ा होता है।

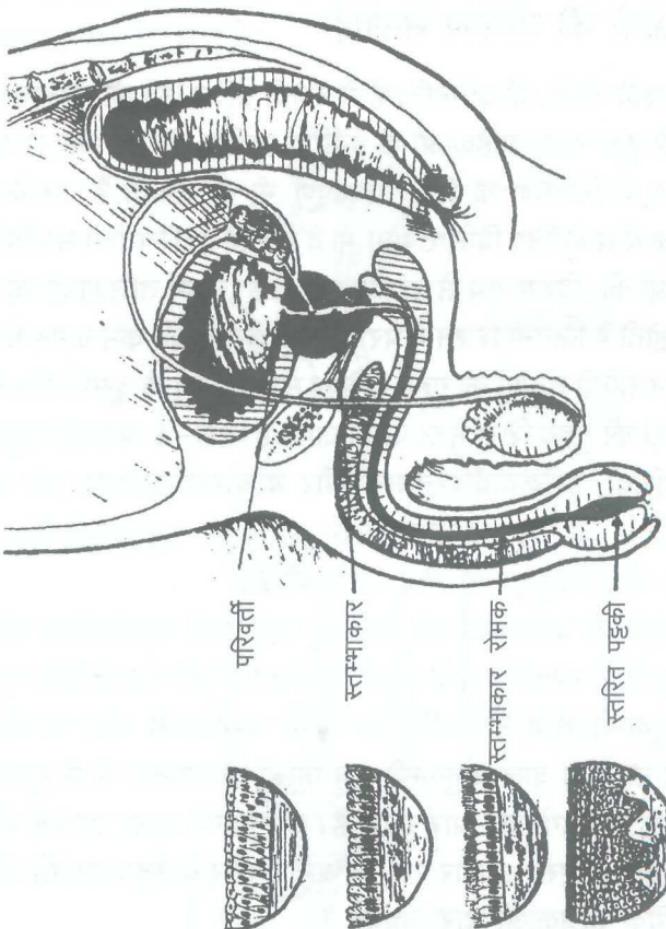
**शुक्र पुटिकाएँ :** शुक्र तरल दो संवलित थैलियों में भंडारित होता है। प्रत्येक थैली लगभग 5 सेमी. लंबी होती है। वे मूत्राशय के आधार और मलाशय के बीच में स्थित होती हैं। प्रत्येक पुटिका अपने निचले सिरे पर संगत शुक्रवाहिका से मिलकर एक उभयनिष्ठ नलिका बनाती है। उस पर स्तंभाकार उपकला का अस्तर चढ़ा होता है।

**वृषण और अधिवृषण :** वृषण त्वचा और मांसपेशियों की बाहरी थैली वृषणकोष, में स्थित होते हैं। वृषणकोष में वृषणों का स्तर दो मांसपेशियों द्वारा नियंत्रित होता है। ये मांसपेशियां हैं डारटोज और क्रिमास्टर। डारटोज कोष की त्वचा को नालीदार बना सकती है और सिकोड़ सकती है तथा क्रिमास्टर मांसपेशी वृषण के इर्दगिर्द एक झूला और वृषणकोष के अंदर वृषणीय रज्जु बनाती है। वृषणों में मुख्यतः दो प्रकार की कोशिकाएँ होती हैं अंतरालीय (लेयडग) कोशिकाएँ जो स्टीरॉयड हारमोन, मुख्यतः टेस्टोस्टेरॉन बनाती हैं तथा नलिकाकार कोशिकाएँ जिनसे शुक्राणु निकलते हैं। शुक्र नलिकाओं में से एक लंबी संवलित नलिका में, जो वृषणों पर अधिवृषण बनाती है, चले जाते हैं। अधिवृषण में एक सिर, देह और पूँछ होती हैं और वह वृषण के पश्च भाग के पार्श्व अंग के साथ स्थित होता है। अधिवृषण में रोम् युक्त स्तंभाकार उपकला का अस्तर होता है (चित्र-4)।

## लैगिक अंगों को रक्त सप्लाई

आंतरिक गुह्य धमनी जो आंतरिक श्रोणिफलक धमनी के अग्र धड़ की दो अंतस्थ शाखाओं में से एक होती है, रक्तधर कोरपस स्पॉजिओसम के कंदों को एक लघु पर बड़े माप की शाखा भेजती है। बाद में मुख्य धमनी शिश्न की गहरी धमनी में विभक्त हो जाती है। और वह रक्तधर पिंड, कोरपस कैवरनोस में से गुजरती है। पश्च धमनी शिश्न के पश्च भाग में से गुजरती है।

शिश्न कंड की त्वचा और शिश्न की टोपी का शिरायी रक्त उपस्थित शिरा



चित्र 4 : जनन-मूत्र के उपकला पृष्ठ

में बहता है। यह पश्च शिरा बाह्य गुह्य शिरा में जुड़ने से पहले बांयी या दाहिनी ओर मुड़ जाती है। शिश्न की टोपी और रक्तधर पिंड कोरपोरा कैवरनौसा का शिरायी रक्त मुख्यतः गहरी पश्च शिरा में से प्रवाहित होता है।

### लैंगिक अंगों की तंत्रिका सप्लाई

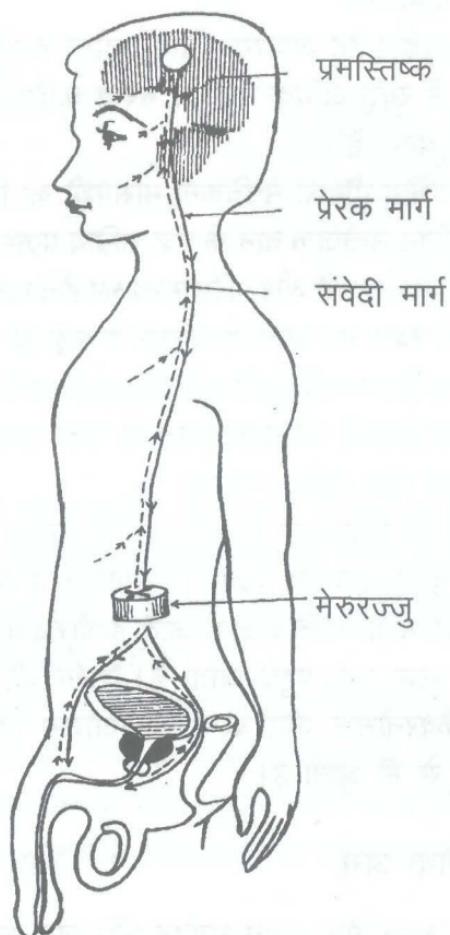
पुरुष और स्त्री दोनों, की जननेन्द्रियों में संवेदी तंत्रिकाओं की बहुतायत होती है। इनमें से कुछ रक्त वाहिकाओं के ईर्द्धगिर्द सांद्रित होती हैं और ये वाहिका रक्ताधिक्य के नियंत्रण के लिए महत्वपूर्ण भी हो सकती हैं जबकि अन्य कामोत्तेजक बोध के लिए विशिष्ट योग भी दे सकती हैं। स्त्रियों में भगशिश्निका में तंत्रिकाओं की, विशेष रूप से बहुतायत होती है। उसमें तंत्रिकाओं की उतनी ही संख्या होती है जितनी शिश्न में पर वे अपेक्षकृत काफी कम जगह में स्थित होती हैं। इन संवेदी तंतुओं को गुह्य तंत्रिका में मेरु रज्जु के दूसरी और तीसरी संक्रमी जड़ों की गुह्य शिरा में ले जाया जाता है। एस-4 अपवाही तंतु शिश्न की मांसपेशियों, इस्कियोकैवरनौसस और बल्बोस्पॉंजिओसस को सप्लाई प्रदान करते हैं, जो मैथुन के दौरान चरम आनंद की अनुभूति के लिए शिश्न के स्तंभन और सिकुड़न के लिए उत्तदायी हैं।

जननांगों की वाहिकाओं को रक्त ले जाने वाली स्वसंचालित तंत्रिकाएं जो वाहिकाओं के रक्ताधिक्य के तंत्रकीय नियंत्रण में भी भाग लेती हैं अनुकम्पी और परानुकम्पी तंत्रों से आती हैं। वक्षीय प्रशाखाओं और ऊपरी कटि प्रशाखाओं से आने वाले अनुकम्पी तंतु कूलहों के जालक में से गुजरते हैं। वहां से तंतु जननांगों की ओर जाते हैं। परानुकम्पी द्वारा सप्लाई से क्रमी बर्हिसाव एस-2, एस-3 और एस-4 आते हैं और ये तंतु जननांगों को कूलहे की आशयिक तंत्रिकाओं द्वारा पहुंचते हैं।

### पुरुष जननांगों के क्रियात्मक प्रतिवेदन

पुरुष और स्त्री, दोनों, के जननांगों में परिवर्तन, मुख्य रूप से, स्थानीय वाहिका रक्ताधिक्य के परिणामस्वरूप होते हैं। ये स्थानीय वाहिका परिवर्तन लैंगिक उत्तेजना के आरंभ होने के 10 से 30 सैकंड के भीतर हो सकते हैं ऐसी

उत्तेजना चाहे मानसिक (मस्तिष्क के माध्यम से उत्पन्न) हो अथवा प्रतिवर्ती (मेरु रज्जु के पथ से आने वाली प्रतिवर्ती से) (चित्र-5) पुरुष में इस उत्तेजना का प्रभाव मुख्यतः शिश्न के स्तंभन के रूप में प्रकट होती है। इसके अतिरिक्त वृषण, वृषणीय रज्जुओं के प्रतिगमन और संबद्ध वृषण उत्कर्षिका पेशी के संकुचन के फलस्वरूप, ऊपर उठ जाते हैं। पूरे जोर से स्खलन के लिए वृषणों का उत्थान जरूरी होता है।



चित्र 5 : पुरुष यौन प्रतिवेदन का तंत्रिका नियंत्रण

## शिश्न स्तंभन

योनि में शिश्न के उचित प्रवेश और तदोपरांत वीर्य के स्खलित होने के लिए उसका स्तंभन जरूरी होता है। शिश्न के पूरी तरह स्तंभन के बिना ऐसा होना अपेक्षाकृत कठिन होता है। स्तंभित शिश्न उस समय कठोर हो जाता है जब रक्तधर पिंड कोरपोरा कैवरनोसा अपने स्तंभन ऊतक के साथ रक्त से भर जाता है और उस समय अंतरारक्तधर दबाव बढ़कर प्रकुंचन दाब स्तर के लगभग पहुंच जाता है।

शिश्न की दृढ़ता हेतु आवश्यक दाब उत्पन्न करने के लिए निश्चय ही स्तंभन ऊतक में रक्त अधिक मात्रा में भरना चाहिए। शिश्न के स्तंभन के लिए महत्वपूर्ण घटक हैं :

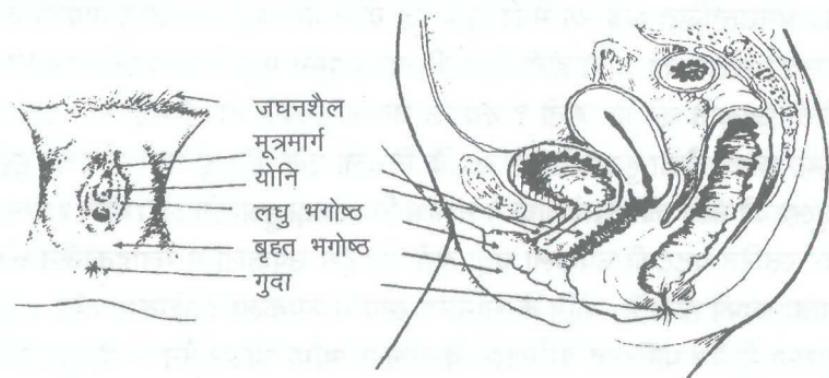
1. शिरानालाभीय दीवारों में चिकनी मांसपेशी का शिथिलन। सामान्यतः ये ऐड्सिनलिन उत्तेजक तान के एक सक्रिय प्रक्रम द्वारा संकुचित रहती हैं। इस तान की कमी और परिणामस्वरूप होने वाले शिथिलन से खाली स्थानों में रक्त भर जाता है। इससे वे बड़ी हो जाती हैं।
2. शिरानालाभीय स्थलों के बीच में से गुजरने वाली शिराओं का निष्क्रिय संपीड़न। शिराओं को रोक रखने से रक्त प्रवाह से शिरानालाभीय स्थलों का और अधिक भराव।
3. धमनियों का विस्फारण जिसके परिणामस्वरूप आने वाले रक्त की मात्रा में वृद्धि। इन सब प्रक्रमों के संयोजन से रक्तधर पिंड कोरपोरा कैवरनोसा भली-भांति सील हो जाता है और अंतःरक्तधर दाब बढ़कर प्रकुंचन स्तर तक पहुंच जाता है। शिश्न की अतिरिक्त कठोरता आइसोकैवरनोसस और बल्बोस्पोजिओसस मांसपेशियों के क्षणिक संकुचन से भी आती है।

## स्त्री के लैगिक अंग

**भग :** इसमें जघन शैल, बृहत भगोष्ठ और लघु भगोष्ठ, भगशिशिनका, प्रधाण तथा बारथोलिन की ग्रंथियां शामिल होती हैं (चित्र-6क और 6ख)। जघन शैल जघन संघानक के सामने स्थित एक गोल उभरा हुआ

वसीय ऊतक होता है।

**बृहत भगोष्ठ :** ये लंबी तहें होती हैं जो जघन शैल से मूलाधार तक फैली होती हैं। उनका ऊपरी भाग बालों से ढंका रहता है परंतु उनके आंतरिक भाग चिकने होते हैं और उनकी त्वचा पर बहुत सी वसीय ग्रंथियां होती हैं। शारीरिक रचना की दृष्टि से वे पुरुषों के वृषणकोष के तुल्य होती हैं।



चित्र 6क और 6ख : स्त्री के लैंगिक अंग

**लघु भगोष्ठ :** ये छोटी त्वचीय तहें होती हैं जिनमें वसा नहीं होती और जो ऊपर जुड़कर भगशिंगिका का शिशमुण्डच्छद बनाती हैं और नीचे भगांजलि में मिलती हैं। प्रधाण लघु भगोष्ठ के बीच एक विदर होता है जिसमें बाह्य मूत्रमार्ग और योनि छिद्र होते हैं।

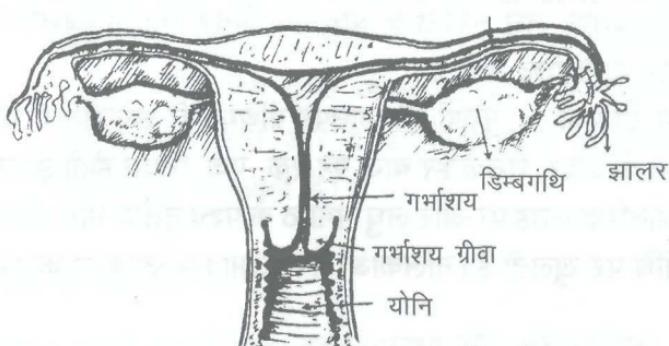
**बारथोलिन ग्रंथियां :** पुरुषों की काउपर ग्रंथियों की समजात ये ग्रंथियां बृहत भगोष्ठ के अंदर, उसके हर बाजू पर एक-एक, स्थित होती हैं। उनकी नलिकाएं आंतरिक सतह पर और लघु भगोष्ठ के पश्च तृतीय भाग और मध्य भाग की संधि पर खुलती हैं। नलिकाओं पर स्तंभाकार उपकला का अस्तर होता है।

**स्त्री मूत्रमार्ग :** स्त्रियों का मूत्र मार्ग काफी छोटा, लगभग 4 सेमी. लंबा होता है। मूत्राशय से संलग्न अंश पर परिवर्ती उपकला का अस्तर चढ़ा होता है जबकि उसकी पूरी लंबाई पर स्तरित शल्की उपकला चढ़ी होती है। मूत्रमार्ग

में अनेक छोटी-छोटी ग्रंथियां खुलती हैं और उनकी नलिकाओं पर स्तंभाकार उपकला का अस्तर होता है। स्केने ग्रंथियां या परामूत्रपथ ग्रंथियां पुरुषों की प्रोस्टेट ग्रंथि की समजात होती हैं और ये मूत्रमार्ग के निचले सिरे के दोनों ओर स्थित होती हैं।

**योनि :** योनि मार्ग प्रधाण से लेकर गर्भाशय तक फैला होता है जहां वह गर्भाशय ग्रीवा के निचले भाग को धेर कर अग्र पश्च और दो पाश्व तोरणिकाएं बनाती है। अनउत्तेजित अवस्था में सिकुड़ी हुई योनि की अनुप्रस्थ काट अंग्रेजी के “एच” अक्षर की भाँति होती है। योनि की ल्यूमेन फूलने पर उल्टी फ्लास्क जैसी आकृति की हो जाती हैं क्योंकि उसका ऊपरी दो-तिहाई भाग श्लथ तथा काफी फैला हुआ होता है जबकि निचला एक-तिहाई भाग उसे धेरे हुई कूलहों की तली की मांसपेशियों में भलीभाँति जकड़ा हुआ होता है। योनि श्लेष्मा पर स्तरित पट्टकी उपकला चढ़ी होती है। इस उपकला में ग्लाइकोजन की मात्रा काफी होती है। योनि के सामान्य साव में उपकला कोशिकाएं और बड़ी संख्या में ग्रैम पॉजिटिव बैसीलस-बैसीलस ऑफ डोडरलेन - मौजूद होते हैं। इन बैसीलसों की कोशिकाओं के ग्लाइकोजन पर क्रिया से लैकिटक एसिड बनता है और उसी के कारण योनि साव अम्लीय होता है। योनि की यह अम्लता और उसकी स्तरित पट्टकी उपकला गोनोकोक्स और मवाद उत्पन्न करने

फेलोपी नलिका



चित्र 7 : गर्भाशय नलिकाएं और डिम्ब ग्रंथियां

वाले अन्य सूक्ष्मजीवों से उसकी रक्षा करती है।

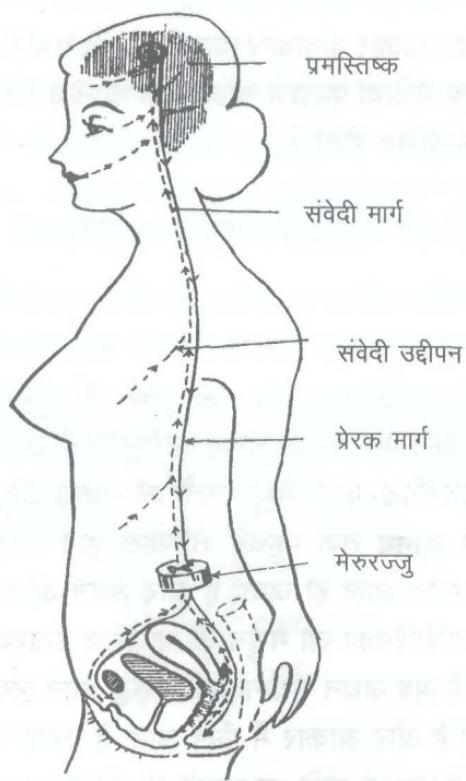
गर्भाशय, फेलोपी नलिकाएं और डिम्ब ग्रंथियाँ : गर्भाशय के दो भाग होते हैं आंतरिक मुख के ऊपर की देह और उसके नीचे की गर्भाशय ग्रीवा (चित्र-7)। देह पर अंतर्गर्भाशय कला की परत चढ़ी होती है। यह परत हर मासिक उपकला के साथ निरंतर बदलती रहती है। अंतर्गर्भाशय ग्रीवा पर स्तंभाकार उपकला का अस्तर होता है। बर्हिंगर्भाशय ग्रीवा अर्थात् योनि की सतह पर स्थित गर्भाशय ग्रीवा पर स्तरित पट्टकी उपकला का अस्तर चढ़ा होता है। गर्भाशय का ऊपरी भाग फंडस कहलाता है जो प्रत्येक ऊपरी और पाश्व कोण पर एक फेलोपी नलिका से जुड़ा होता है। हर नलिका लगभग 10 सेमी. लम्बी होती है और डिम्ब ग्रंथि के निकट इल्लरित सिरे में समाप्त होती है।

डिम्ब ग्रंथियों का आकार अंडाकार होता है और वे गर्भाशय के दोनों ओर स्थित होती हैं। डिम्ब ग्रंथियाँ फेलोपी नलिकाओं के नीचे स्थित चौड़ी स्नायु की पश्च परत से संबंधित होती हैं।

### स्त्री के जननांगों की शारीरक्रियात्मक अनुक्रियाएं

स्त्रियों में कामोत्तेजक प्रेरित वाहिका—रक्ताधिक्य के परिणाम पुरुषों की अपेक्षा अधिक विस्तृत और जटिल होती हैं। योनि के निचले भाग को घेरे हुए शिरायी नालिका, प्रधाण के कामोत्तेजक कंद (जो पुरुषों के कोरपोरा स्पैंजिओसम के समतुल्य होते हैं) और गहनतर संरचनाएं अतिपूरित हो जाती हैं। इस प्रकार बनने वाला स्फीत (टरगिड) कफ, मैथुन नली को संकरी और लंबी कर देता है। मैथुन के चरम आनंद तक पहुंचने से पहले होने वाली उत्तेजना के फलस्वरूप लघु भगोष्ठ लाल हो जाता है और अपने ओंठ बाहर की ओर निकाल देता है। भगशिशिनिका जो मैथुन की प्रारंभिक अवस्था में काफी हद तक खड़ी हो जाती है अब जघन संघानक के विरुद्ध बैठने लगती है। गर्भाशय अतिपूरित हो जाता है और आकार में फैल जाता है। उसी समय वह श्रोणी में ऊपर उठ जाता है। इससे योनि का ऊपरी दो-तिहाई भाग लंबा हो जाता है और फूल कर गुब्बारे जैसा हो जाता है। यौन उत्तेजना जारी रहने पर योनि

कस (वाल्ट) का हल्का अनियमित संकुचन हो सकता है। जैसे-जैसे योनि की दीवार को रक्त सप्लाई बढ़ती जाती है, योनि उपकला पर एक तरल रिसने लगता है। यह योनि के भीतरी भाग को चिकना करने का कार्य करता है। इस तरल का रिसाव जरूरी होता है क्योंकि योनि के अस्तर में श्लेष्मी ग्रंथियां नहीं होतीं। यह तरल संशोधित प्लाज्मा पारस्पाव होता है। लैंगिक उत्तेजना के बाद के क्षणों में बारथोलिन ग्रंथियों से भी, थोड़ी मात्रा में, श्लेष्मी साव निकल सकता है। अगर पुरुष के शिश्न के स्तंभन से उसके योनि में प्रवेश में सुविधा होती है तो स्त्री के जननांगों में होने वाले परिवर्तन भी उसके प्रवेश में सहायक होते हैं। (चित्र-8)



चित्र 8 : स्त्री के यौन प्रतिवेदन का तंत्रिका नियंत्रण

भगोष्ठ का रक्त से भर जाना और योनिद्वार का अधिक खुल जाना शिशून के प्रवेश को निमंत्रण देता है जबकि योनि पारस्पाव योनि बैरल को चिकना कर, योनि को शिशून के आगमन के लिए तैयार कर देता है। योनि के बाहरी तीसरे भाग का संकरा हो जाना ही तथाकथित “चरम आनंद की तैयारी” होती है। यह शिशून की उत्तेजना को बढ़ावा देती है। योनि के आंतरिक तीसरे भाग का फूल जाना गर्भाशय ग्रीवा के निकट शुक्र भंडार के बन जाने से योनि से वीर्य के बाहर निकास को कम करता है और गर्भधारण में सहायता करता है।

## अध्याय तीन

### जननांगों के व्रणीय रोग

व्रण (अलसर) त्वचा या श्लेशमा झिल्ली की सतह पर की दरार को कहते हैं। व्रण में सतह के ऊतक मर जाते हैं। इससे सतह भी मर अथवा परिगलित हो जाती है जिससे वह बाहरी संक्रमणों के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाती है। इसलिए जब उस पर बाह्य संक्रमणों का आक्रमण होता है तब व्रण के रूप में खुला घाव बन जाता है। कभी—कभी व्रणों को “विक्षति” (लेजन) भी कहा जाता है। वैसे “विक्षति” शब्द आमतौर से असामान्य ऊतक परिवर्तनों के लिए इस्तेमाल किया जाता है। जननांगों में होने वाले व्रण विभिन्न प्रकार के बैकटीरिया, वायरस, अमीबा और प्रोटोज़ोआ आदि सूक्ष्म जीवों के कारण होते हैं, ये सूक्ष्मजीव यौन क्रियाओं द्वारा भी संचरित हो सकते हैं और परिणाम होता है जननांगों के यौन संचरित रोग। वैसे जननांगों के घाव यौन संचरित रोगों के अलावा अन्य कारणों से भी उत्पन्न किसी घाव के फलस्वरूप अथवा शरीर के किसी अन्य तंत्र के रोग के उपचार के लिए ली गई औषधि के एलर्जिक प्रभावों के फलस्वरूप भी हो सकते हैं।

अस्पतालोंमें इलाज के लिए आने वाले अधिकांश यौन संचरित रोगी इन्हीं जननांग व्रणों की वजह से आते हैं। इन व्रणों के परिणाम विशेष रूप से सिफिलिस के व्रणों के परिणाम, इनको पैदा करने वाले सूक्ष्मजीवों के अनुसार बहुत गंभीर हो सकते हैं। अगर इनका इलाज नहीं किया जाता तब मरीज़ के जीवन को खतरा पैदा कर देने वाले रोग भी, यथा हृदय रोग, तंत्रिका तंत्र रोग आदि, हो सकते हैं। सिफिलिस से पीड़ित गर्भवती स्त्री का गर्भपात हो सकता है। कभी—कभी इन व्रणों से जननांगों पर हानिकारी घाव हो जाते हैं अथवा कैंसर तक हो जाता है। यदि जननांगों पर व्रण होते हैं तब एड्स वायरसों के अधिक तेजी से प्रविष्ट होने और फैलने की संभावना हो जाती है।

### व्रणीय यौन संचरित रोग

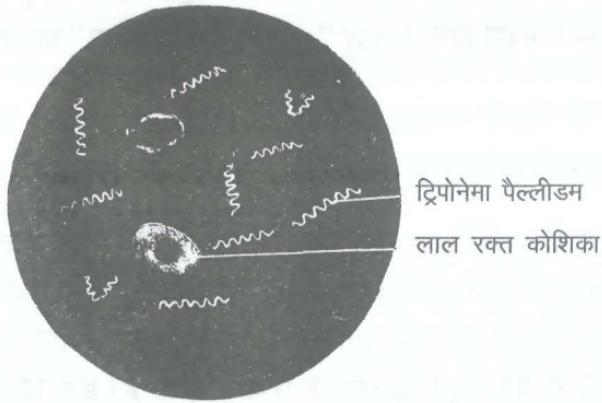
आगे यौन संचरित रोगों यथा सिफिलिस, शैंकराभ, डोनोवेनोसिस, एल.जी.

वी. तथा अन्य रोगों के व्रणों का कुछ विस्तार से वर्णन दिया जा रहा है। वे गैर-रतिज व्रणों से भिन्न होते हैं। अन्त में गैर-रतिज व्रणों की भी कुछ चर्चा की जाएगी क्योंकि व्रणों के जननांगों पर स्थित होने मात्र से ही वे यौन संचरित रोगों के व्रण नहीं बन जाते।

### सिफिलिस

सिफिलिस एक संक्रामक यौन संचरित रोग है जो यौन क्रिया में उस भागीदार से फैलता है जिसके शरीर में इसके रोगाणु मौजूद होते हैं।

**उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव :** सिफिलिस उत्पन्न करने वाले रोगाणु लाल रक्त कोशिकाओं के आकार के सर्पिलाकार सूक्ष्मजीव होते हैं जिन्हें ट्रिपोनेमा पैल्लीडम कहा जाता है। (चित्र 9) ये सिफिलिसी व्रणों से रिसने



चित्र 9 : सिफिलिस उत्पन्न करने वाला सूक्ष्मजीव ट्रिपोनेमा पैल्लीडम

वाले सीरम में मौजूद होते हैं। ये विशेष प्रकार के माइक्रोस्कोप, डार्क-फील्ड माइक्रोस्कोप द्वारा देखे जा सकते हैं। इस माइक्रोस्कोप की काली पृष्ठभूमि में ये सूक्ष्मजीव चमकने लगते हैं।

### आरंभिक सिफिलिस

सिफिलिस से ग्रसित सहभागी से यौन संपर्क करने के दो से छह सप्ताह बाद इस रोग के प्रथम लक्षण उभरने लगते हैं। पहले कठोर व्रण उभरते हैं

जिनमें दर्द नहीं होता इस प्रकार के व्रण 4 से 6 मिमी. बड़े होते हैं। वे पुरुषों के फ्रीनम अथवा किरीट परिखा (कारोनल सलकस) और स्त्रियों के जननांग के आँठ पर उभरते हैं। व्रण को दबाने पर उसमें से पानी जैसा साफ तरल निकलता है। अधिकांश रोगियों में एक ही व्रण होता है पर कभी—कभी दो या तीन व्रण भी हो सकते हैं। पर इसके साथ—साथ उरुसंधि — पेट और जांघ के बीच के जोड़ — में लसीका गांठें भी, आकार में, बढ़ने लगती हैं। उन्हें दबाने पर दर्द नहीं होता।

ये व्रण संक्रमित सहभागी के साथ मैथुन करने के दस दिन बाद से लेकर तीन महीने तक, कभी भी, पैदा हो सकते हैं। इन व्रणों से होने वाला विसर्जन तेजी से संक्रमण फैलाता है। इस अवस्था में यदि संक्रमित व्यक्ति किसी स्वस्थ व्यक्ति से असुरक्षित यौन संपर्क करता है तब स्वस्थ व्यक्ति के सिफिलिस से ग्रसित हो जाने की आशंका बहुत अधिक बढ़ जाती है। रोग का यह पहला चरण होता है और “आरंभिक सिफिलिस” कहलाता है। (चित्र 10)

## सिफिलिस का दूसरा चरण

सिफिलिस के आरंभिक चरण के बाद एक विचित्र बात होती है। ये व्रण बिना इलाज भी अपने आप ठीक हो जाते हैं। जननांग पर इनके सिर्फ निशान ही रह जाते हैं। पर यह नहीं समझना चाहिए कि रोग शरीर से निकल गया है। वास्तव में यह बहुत खतरनाक स्थिति होती है। इस स्थिति में मरीज रोग की ओर से लापरवाह हो जाता है जबकि समुचित और पर्याप्त इलाज के अभाव में सिफिलिस जननांगों से लुप्त होकर, रक्त प्रवाह के माध्यम से पूरे शरीर में फैलने लगता है। औसतन छह से आठ सप्ताह बाद, संपूर्ण त्वचा पर पित्ती उभर आती है। उस समय जननांगों, शरीर पर, और गुदा क्षेत्र की श्लेष्मा झिल्लियों में तथा मुंह की अंदरूनी सतह और ओठों पर कटाव होने लगते हैं। साथ ही उरुसंधि, गर्दन, बगलों और कोहनियों के ऊपर की लसीका गांठें बढ़ने लगती हैं। उस समय मरीज को यह महसूस होने लगता है कि वह स्वस्थ नहीं है। त्वचा पर विस्तृत रूप से फैली पित्ती

के अतिरिक्त वह सिर और पिंडलियों, छाती तथा कॉलर की हड्डियों में दर्द की शिकायत करता है। यह सिरदर्द साधारण सिरदर्द न होकर मस्तिष्क और मेरु रज्जु को ढंकने वाली परतों पर सिफिलिस के सूक्ष्मजीवों के हमले के फलस्वरूप होता है। हड्डियों में पीड़ा उन की रक्त वाहिकाओं के रोगग्रस्त हो जाने के फलस्वरूप होती हैं।

सिफिलिस की वजह से उभरने वाली पित्ती में एक खास बात होती है। हालांकि उसमें खुजली नहीं लगती, न ही किसी प्रकार की जलन या पीड़ा होती है पर उसमें अनेक ऐसे लक्षण होते हैं जो स्पष्ट रूप से यह ऐलान कर देते हैं कि वह सिफिलिस के ही फलस्वरूप हैं।

गोरे अथवा हल्के रंग के व्यक्तियों में यह पित्ती गुलाबी रंग की दिखायी देती है जबकि गहरे रंग के व्यक्तियों में तांबे के कत्थई रंग की। कभी—कभी पित्ती परतदार और खाल से उभरी हुई होती है। धीरे—धीरे वह पूरे शरीर में, विशेष रूप से हथेलियों और तलुओं पर भी फैल जाती है। साथ ही शरीर पर कभी—कभी मवाद से भरे चकत्ते और परिगलित त्वचा विक्षति भी दिखायी देने लगती है। यह अवस्था बीमारी के बहुत गंभीर रूप ले लेने के कारण होती है इसे 'सिफिलिटिक मैलिग्ना' कहते हैं।

सिफिलिस के इस चरण के दौरान इन ऊपरी, कटाव करने वाली विक्षतियों के अलावा, जो मुंह और जननांगों पर दिखायी देती हैं, गुदा, उरुसंधियों की सामने वाली सतहों पर और अण्डकोष की थैली में धूसर रंग के चकत्ते भी उभर आते हैं। ये खाल से उभरे हुए और गीले होते हैं। सिफिलिस के आरंभिक चरण के व्रणों में बहुत कम रोगाणु होते हैं पर ये गीले चकत्ते इन सूक्ष्मजीवों से लबालब भरे रहते हैं। इसलिए सिफिलिस के इस दौर में मरीज मैथुन से अपने सहभागी के लिए, तथा उसके घनिष्ठ संपर्क में आने वाले व्यक्तियों के लिए बहुत अधिक संक्रामक बन जाता है।

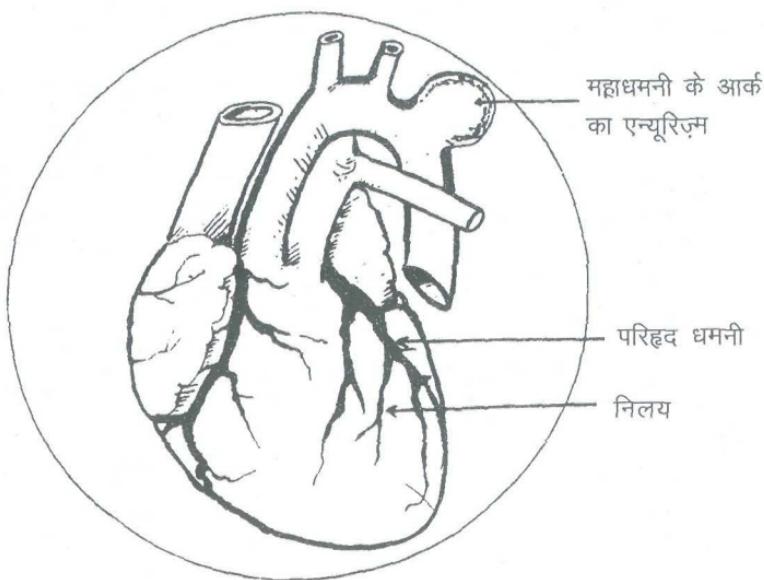
यदि इस दौर में भी इलाज नहीं किया जाता तब द्वितीयक सिफिलिस की ये पित्तियां संक्रमण के पहले दो वर्षों में, कुछ महीनों के अंतराल से, दोबारा या तीन बार तक उभर सकती हैं। ये "सिफिलिस की पुनरावर्ती द्वितीयक पित्तियां" कहलाती हैं। (चित्र 11)



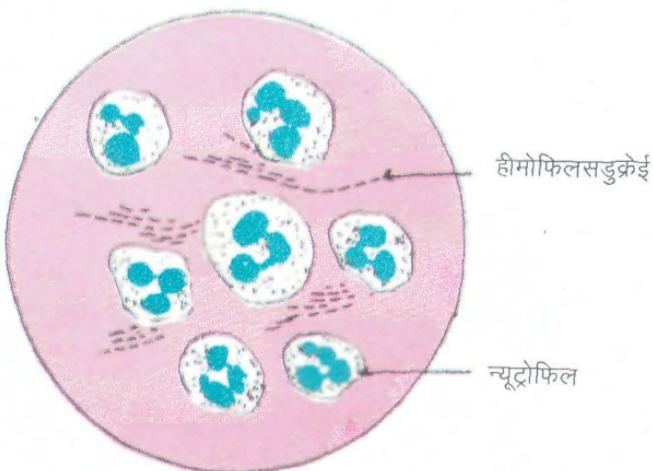
चित्र 10 : सिफिलिस का प्राथमिक व्रण



चित्र 11 : द्वितीयक सिफिलिस का लोहित कोशिका युक्त उभरा हुआ विक्षणि



चित्र 12 : तृतीयक सिफिलिस में महाधमनी में एक न्यूरिज्म



चित्र 13 : शैंकटाभ उत्पन्न करने वाला सूक्ष्मजीव हीमोफिलस डुक्रेई

## आरंभिक गुप्त सिफिलिस

सिफिलिस के दूसरे चरण में अगर पित्ती नहीं भी उभरती है और मरीज का इलाज नहीं हो पाता तब सिफिलिस, ऊपरी तैर से, त्वचा से गायब हो जाती है पर शरीर में पूरी तरह मौजूद रहता है। सामान्य रक्त परीक्षण से भी इस बात की पुष्टि की जा सकती है। इस प्रकार सिफिलिस “गुप्त” हो जाता है। यह हालत संक्रमण आरंभ होने के पहले दो वर्षों में होती है। इस हालत में सिफिलिस का मरीज यौन क्रिया द्वारा चाहे अपने सहभागी को संक्रमित न कर पाए पर अगर ऐसी स्थिति में संक्रमित स्त्री गर्भवती हो जाती है तब शिशु के सिफिलिस से ग्रस्त हो जाने की आशंका बहुत अधिक रहती है।

सिफिलिस के इन आरंभिक चरणों में – आरंभिक व्रणीय चरण में और बाद के पित्ती वाले चरण में – सरल रक्त परीक्षण (वीनरल डिजीज रिसर्च लेबोटरी – वी.डी.आर.एल – परीक्षण) से रोग का पता चल सकता है। इन दौरों में रोग का उपचार आसान होता है और रोग पूरी तरह, कोई अनवांछित प्रभाव छोड़े बिना, चला जाता है।

## आरंभिक सिफिलिस का उपचार

आरंभिक सिफिलिस का इलाज है लंबी अवधि तक असर करने वाली पेनीसिलिन (बैंजाथीन पेनीसिलिन 2.4 मैग्गा यूनिट यानी 24 लाख यूनिट) का एक इंजेक्शन। उन व्यक्तियों को जिन्हें पेनीसिलिन के प्रति एलर्जी होती है, अन्य ब्रॉड स्पेक्ट्रम एंटीबायोटिक दवाइयां जैसे ट्रासाइविलन, इरिथ्रोमाइसिन आदि की खुराक दो सप्ताह तक, दी जा सकती हैं।

सिफिलिस के इस चरण में, मरीज के इलाज में काफी सावधानी बरतनी पड़ती है। चिकित्सक द्वारा 6 महीने से लेकर 2 साल तक उसकी निगरानी की जानी चाहिए। इस दौरान उसके खून की जांच और अन्य परीक्षण किए जाने चाहिए। समुचित ध्यान रखने पर धीरे-धीरे सिफिलिस के सूक्ष्मजीव रक्त में समाप्त हो जाते हैं। ऐसे मरीजों को सलाह दी जाती है कि वे यौन क्रिया में अपने सहभागी का भी समुचित इलाज कराएं तथा सिफिलिस से पीड़ित व्यक्ति के साथ उस समय तक यौन क्रिया न करें जब तक उनका पूरी तरह

से इलाज नहीं हो जाता।

इस बारे में चिकित्सकों को सलाह दी जाती है कि वे अपने मरीजों को शादी और गर्भधारण के बारे में उचित परामर्श दें।

### सिफिलिस का तीसरा चरण

अगर रोग का उपचार उसके आरंभिक, द्वितीय या आरंभिक गुप्त चरणों में, नहीं किया जाता तब सिफिलिस तीसरे चरण में चला जाता है। इस चरण में उसके बाह्य लक्षण लुप्त हो जाते हैं पर मरीज के खून की जाँच करने पर उसमें सिफिलिस के लक्षण मौजूद पाए जाते हैं। ऐसा जीवन भर होता रहता है। परंतु दुर्भाग्य से कुछ मरीज ऐसे भी होते हैं जो एक बार संक्रमण से ग्रस्त हो जाने पर दस, बीस या तीस वर्ष बाद तक भी रोग से ग्रस्त रहते हैं। उनका रोग शरीर के विभिन्न तंत्रों को प्रभावित करता रहता है। ये तंत्र हैं –

- त्वचा और हड्डियां
- हृदय और रक्त वाहिकाएं
- मस्तिष्क और मेरुरज्जु

### त्वचा और हड्डियों पर प्रभाव

सिफिलिस के सूक्ष्मजीवों द्वारा त्वचा और हड्डियों को प्रभावित करने के फलस्वरूप उनमें गहरे, स्पष्ट कटाव वाले व्रण पैदा हो जाते हैं। ये व्रण बहुत धीरे-धीरे ठीक होते हैं। उन पर बनने वाली पपड़ी पतली होती है जो शीघ्र ही फट जाती है। विभिन्न आकारों के ये व्रण अकेले भी हो सकते हैं और समूहों में भी। पर आरंभिक सिफिलिस के व्रणों के विपरीत इनमें सिफिलिस पैदा करने वाले सर्पिल सूक्ष्मजीव मौजूद नहीं होते। इसलिए यह सुनिश्चित करने के लिए ये व्रण वास्तव में सिफिलिस के कारण पैदा हुए हैं मरीज का दसियों साल पुराना इतिहास देखना जरूरी होता है तथा उसके खून की जाँच करनी होती है।

## हृदय और रक्त वाहिकाओं पर प्रभाव

सिफिलिस के तीसरे चरण के दौरान हृदय और रक्त वाहिकाएं दो प्रकार से प्रभावित हो सकती हैं :—

(1) हृदय की मांसपेशियों को रक्त पहुँचाने वाली वाहिकाओं में अंतर्रोध (रुकावट) आ जाने से हृदय को रक्त की पूरी मात्रा नहीं मिल पाती। इससे छाती में दर्द होने लगता है तथा दिल के दौरे के अन्य लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

(2) बड़ी रक्त वाहिकाओं, जैसे महाधमनी की दीवारों पर सिफिलिस के सूक्ष्मजीवों द्वारा आक्रमण हो सकता है। इससे वे केले के छिलके की भाँति दो—तीन परतों में फट जाती है। वे कमजोर हो जाती हैं और रक्त के तेज प्रवाह को झेलने में असमर्थ हो जाती हैं। इससे जो बाह्य लक्षण उत्पन्न होते हैं, वे हैं — थोड़े से शारीरिक परिश्रम से भी दिल की धड़कन का बहुत तेज हो जाना, जिससे छाती इस प्रकार उठती और गिरती है कि उसे स्पष्ट देखा जा सकता है। जब हालत बहुत गंभीर हो जाती है, तब उस दशा में बड़ी वाहिकाएं एकाएक फट भी सकती हैं जिससे मरीज की तत्काल मृत्यु हो सकती है। (चित्र 12)

## मस्तिष्क और मेरुरज्जु पर प्रभाव

मस्तिष्क और उसको ढंकने वाली झिल्ली पर सिफिलिस के सूक्ष्मजीवों के प्रभाव उस हिस्से पर निर्भर होते हैं जिस पर ये सूक्ष्मजीव आक्रमण करते हैं। जब ये सूक्ष्मजीव मस्तिष्क को ढंकने वाली झिल्ली और मेरुरज्जु पर हमला करते हैं तब बाह्य लक्षण प्रकट होते हैं। जैसे, चिड़चिड़ापन, लंबे समय तक रहने वाला सिर दर्द और दौरे आदि। कभी—कभी इन प्रभावों के फलस्वरूप मरीजों को अंधे या बहरे होते भी देखा गया है। ऐसा आँखों और कानों को नियंत्रित करने वाली उन तंत्रिकाओं के, जो मस्तिष्क से उत्पन्न होती हैं, के प्रभावित हो जाने के फलस्वरूप होता है।

अगर सिफिलिस के सूक्ष्मजीव मस्तिष्क के काफी भीतरी भागों तक पहुँच जाते हैं तब मरीज के अंगों को लकवा मार सकता है और उसकी मानसिक

हालत बुरी तरह गडबड़ा सकती है। चिकित्सक इस स्थिति को “मानसिक विक्षिप्त का सामान्य अंगधात” (जनरल पैरालिसिस ऑफ इन्सेन) कहते हैं। मेरुरज्जु के प्रभावित हो जाने पर कमर और उदर के आसपास भयंकर दर्द होता है, अंगों में कमजोरी आ जाती है तथा मूत्राशय तथा मलाशय में गंभीर गडबड़ी हो जाती है, जिससे मरीज को मल और मूत्र त्यागने पर नियंत्रण नहीं रह पाता।

### अंतिम चरण के सिफिलिस का उपचार

सिफिलिस के अंतिम चरण में मरीज की हड्डियों और त्वचा के ऊतकों, हृदय और रक्त वाहिकाओं तथा मस्तिष्क और मेरुरज्जु पर पड़ने वाले इसके कुप्रभावों को दूर नहीं किया जा सकता। इस स्तर पर सिफिलिस के प्रचलित उपचार से बीमारी के दुष्प्रभावों को बढ़ने से रोका तो जा सकता है पर उससे अंगों को जो हानि पहुँच चुकी होती है, उसकी पूर्ति नहीं की जा सकती है। इस बारे में हर्ष की यह बात है कि ब्रॉड स्पैक्ट्रम एंटीबायोटिकों के, बड़े पैमाने पर उपयोग से आमतौर से सिफिलिस इस चरण तक पहुँच ही नहीं पाता। आजकल ऐसे मरीज बहुत कम मिलते हैं जिनके हृदय और मस्तिष्क सिफिलिस से कुप्रभावित हो चुके हों।

### गर्भस्थ और नवजात शिशुओं का सिफिलिस

सिफिलिस से ग्रस्त स्त्री के गर्भ में पल रहा शिशु इस रोग से अवश्य ही प्रभावित होता है। गर्भावस्था के तीसरे महीने के बाद सिफिलिस के सूक्ष्मजीव अपरा-रक्त के साथ प्रवाहित होकर गर्भ तक पहुँच जाते हैं। सिफिलिस से पीड़ित स्त्री के गर्भवती हो जाने और रोग का इलाज न कराने की अवस्था में गर्भपात हो सकता है, मरा हुआ शिशु पैदा हो सकता है, अथवा ऐसा शिशु पैदा हो सकता है जो अत्यधिक कमजोर हो और जिसकी त्वचा पर रक्त से भरे फफोले हों। ऐसा शिशु ज्यादा दिनों तक जीवित नहीं रहता। साथ ही इस प्रकार का शिशु बहुत संक्रामक होता है। उसके फफोलों में सिफिलिस के लाखों जीवाणु मौजूद होते हैं।

इसके अतिरिक्त सिफिलिस से पीड़ित स्त्री जिस शिशु को जन्म देती है वह सिफिलिस से जन्मजात पीड़ित रहता है। ऐसे शिशुओं में दिखाई देने वाले बाह्य लक्षण होते हैं : यथा, बहुत उभरा हुआ माथा, चेहरे के आसपास व्रण चिन्ह-रेखाएं, सामने के दांत खूंटे के समान, तालू में छिद्र आदि। यह बहुत नाजुक होता है और सिफिलिस के प्रभावस्वरूप उसके हाथ-पैरों की हड्डियों में दर्द होता है। इस रोग का असर उसकी आखों पर भी पड़ सकता है जिसके फलस्वरूप वह अंधा भी हो सकता है। गर्भ में पल रहे शिशु और नवजात शिशु को जन्मजात सिफिलिस या उसके कुप्रभावों से बचाने का सर्वोत्तम तरीका है गर्भावस्था के आरंभिक चरण में और अंतिम चरण के निकट स्त्री के इस रोग से पीड़ित होने के बारे में रक्त जांच द्वारा पता लगा लेना और यदि स्त्री को सिफिलिस-ग्रस्त पाया जाए तब उसका तुरंत इलाज करा देना। यह सब बहुत आसान हो जाता है यदि स्त्रियां गर्भावस्था के इन दोनों चरणों में अपने रक्त की जांच -वी.डी.आर.एल. जांच 2- करवा लें। जिस गर्भवती स्त्री का इन दिनों इलाज हो जाता है वह न केवल स्वयं सिफिलिस से मुक्ति पा लेती है वरन् उसके गर्भ में पल रहा शिशु अथवा नवजात शिशु भी सिफिलिस के हानिकारी प्रभावों से बच जाता है। यदि दुर्भाग्यवश पैदा होने वाला शिशु जन्मजात सिफिलिस से पीड़ित होता है तब उसे तुरंत पेनिसिलिन की पर्याप्त खुराकें देकर इस रोग से छुटकारा दिला देना चाहिए। साथ ही सिफिलिस के सिलसिले में माता-पिता की भी पूरी जांच की जानी चाहिए और यदि वे रोगग्रस्त हैं तब उनका भी समुचित इलाज किया जाना चाहिए।

## शैंकराभ (शैंक्रॉयड)

शैंकराभ (शैंक्रॉयड) एक यौन संचरित रोग है जो एक बैक्टीरिया, हीमाफिलस डुक्रेई, द्वारा उत्पन्न होता है। यह बैक्टीरिया माइक्रोस्कोप के नीचे, गुलाबी दंडों की श्रृंखला सदृश दिखायी देता है। (चित्र 13) इस रोग में जननांगों के ऊपर अनेक व्रण हो जाते हैं और जांघ के जोड़ों के लसीका पर्व फूल जाते हैं। ये व्रण शैंकराभ पीड़ित किसी व्यक्ति के साथ मैथुन के, एक से पांच दिन



चित्र 14 : शैंकराभ के व्रण



चित्र 15 : डोनोवैनोसिस के व्रण

दिन बाद उभर आते हैं। आमतौर से बहुत से व्रण एक साथ पैदा हो जाते हैं। इन व्रणों में दर्द होता है और मवाद भर जाती है। छूने या छेड़ने से इनमें से रक्त निकलने लगता है वे पिलपिले होते हैं – सिफिलिस के व्रणों की भाँति कठोर नहीं। इसलिए ये “कोमल व्रण” कहलाते हैं। पुरुषों में आमतौर से ये व्रण शिश्न के सामने के भाग, चमड़ी, शिश्नमुण्डच्छद के किनारों पर अथवा फ्रीनुंलम में होते हैं जबकि स्त्रियों में ये जननांगों और जघन क्षेत्रों में अधिक देखे जाते हैं। (चित्र 14) इन व्रणों के, तथा अचानक हो जाने वाले, द्वितीयक संक्रमण के कारण, पुरुषों के लिए अपने शिश्न के अग्रभाग की चमड़ी को लौटाना कठिन हो जाता है और अनेक बार छिपे हुए व्रणों के कारण शिश्नमुण्डच्छद सूज जाता है, लाल हो जाता है और उन हालातों में जब रोग बहुत गंभीर होता है वह गिर भी सकता है। कभी–कभी मूत्र मार्ग के सिरे पर उपस्थित इन व्रणों के कारण, मूत्र त्यागते समय झुलसन होती है।

व्रणों के आकार और आकृति अलग–अलग होती हैं। कुछ मरीजों को केवल उथले व्रण होते हैं जबकि कुछ के शरीर में ये काफी बड़े हो जाते हैं जो जननांगों को व्यापक हानि पहुंचाते हैं। इन व्रणों के उभर आने के बाद जांध के जोड़ों के लसीका पर्व सूज जाते हैं। वे कोष्ण और मुलायम हो जाते हैं और उनमें बहुत तीव्र पीड़ा होती है। अधिकांश मरीजों को जांध के एक जोड़ में ही ऐसा होता है। पर कुछ मरीजों की दोनों जांधों के जोड़ों के लसीका पर्व सूज जाते हैं। यदि समय पर इस सूजन का उचित इलाज नहीं किया जाता तो इसका ऊपरी भाग फूट जाता है और उसमें से मवाद निकलने लगता है। पर इससे केवल बहुत थोड़े भाग को ही हानि पहुंचती है। सिफिलिस के व्रणों के विपरीत इस रोग से दूर स्थित अंगों को कोई हानि नहीं पहुंचती।

उपचार – जननांगों के व्रणों और सूजन को नमक के गुनगुने घोल से धोने पर, उनमें से निकलने वाली मवाद और मरे हुए ऊतक धुल जाते हैं। यदि शिश्न की अगली चमड़ी की निचली सतह में से मवाद निकलती है और चमड़ी सूजी हुई है, उसमें शोफ है और उसे पीछे की ओर पलटा नहीं जा सकता तब नमक के गुनगुने पानी में रुई भिगोकर चमड़ी की अंदरूनी सतह पर नमकीन घोल को निचोड़ना चाहिए। जांध के जोड़ों की दर्द करने वाली सूजन की भी नमक के गुनगुने पानी से सिकाई की जा सकती है।

शिश्न और उसके अग्र भाग की चमड़ी यदि बहुत अधिक सूजी हुई है तब गुनगुने नमक के पानी की सिकाई के बाद, मरीज को लंगोट पहना देना चाहिए। इससे ये अंग संभले रहते हैं। जांघ के जोड़ों के सूजे हुए लसीका पर्वों पर कोष्ण बैलाडोना लगाया जा सकता है। दीर्घ समय तक असर करने वाली सल्फा जैसी औषधियों को ट्राइमेथोप्रिम के साथ, टेट्रासाइक्लिन, आदि को पर्याप्त मात्रा में, लगभग 10 दिन या उस समय तक जब तक व्रण ठीक नहीं हो जाते, देना शैंकराभ का बहुत उपयुक्त इलाज है। अन्य सब यौन संचरित रोगों की भाँति शैंकराभ से पीड़ित मरीज के लैंगिक संपर्क में आने वाले सब व्यक्तियों की भी, साथ-साथ जांच की जानी चाहिए और आवश्यकतानुसार उनका उपचार किया जाना चाहिए।

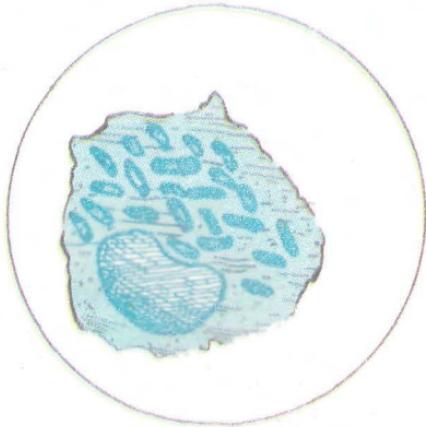
## डोनोवैनोसिस

शैंकराभ और आरंभिक सिफिलिस के बाद तीसरा व्रणीय यौन संचरित रोग है, डोनोवैनोसिस या ग्रैनुलोमा वैनेरियम (रतिज कणिकागुल्म) जिससे सबसे अधिक व्यक्ति पीड़ित होते हैं। इस रोग का नामकरण “डोनोवैनोसिस” होने का कारण यह है कि इसे उत्पन्न करने वाले जीवाणु का वर्णन सर्वप्रथम मेजर चार्ल्स डोनोवैन ने, वर्ष 1905 में चेन्नई में किया था। ये वे ही चार्ल्स डोनोवैन थे जिन्होंने “कालाआजार” उत्पन्न करने वाले जीवाणु का सर्वप्रथम वर्णन किया था।

डोनोवैनोसिस के ग्रैनुलोमा वैनेरियम और ग्रैनुलोमा इन्गुइनाल नामकरण की पृष्ठभूमि में यह तर्क है कि इसमें उत्पन्न होने वाले व्रणों के अभिलक्षण कणिकागुल्मी (ग्रैनुलोमैट्स) होते हैं और वे रतिज रोगों के कारण उत्पन्न होते हैं। कभी-कभी ये व्रण उरुसरुंधि में भी उत्पन्न होते हैं। इसलिए इस रोग का नामकरण “इन्गुइनाल” (उरुसरुंधि जांघ के जोड़ में पैदा होने वाला) किया गया।

## लक्षण :

डोनोवैनोसिस के व्रण इस रोग से पीड़ित व्यक्ति के साथ यौन संपर्क में आने



चित्र 16 : डोनोवैनोसिस उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव : डोनोवैन पिंड



चित्र 17 : एल.जी.वी. में स्त्री के जननांग का फीलपांव

के, लगभग 2-4 सप्ताह बाद दिखने आरंभ हो जाते हैं। औसतन इन व्रणों के प्रगट होने में तीन सप्ताह लग जाते हैं। आरंभ में विक्षिति जननांगों पर एक उभरी हुई गांठ के रूप में प्रकट होती है जो कुछ दिनों में ही व्रण का रूप ले लेती है। ये व्रण मांसल, उभरे हुए और लाल रंग के होते हैं। यदि इनका तुरंत इलाज नहीं किया जाता है तब ये परिसरीय रूप से फैलने लगते हैं। ये शरीर के उन अंगों में जो नम रहते हैं यथा उरुसंधियों, अण्डकोष की थैली, शिश्न की जड़ के नीचे और गुदा के इर्दगिर्द, तेजी से फैलते हैं। इस बारे में एक उल्लेखनीय तथ्य यह है कि इस रोग में सिफिलिस के व्रणों और कोमल व्रणों के विपरीत लसीका पर्व नहीं बढ़ते। पुरुषों में व्रण शिश्न से लेकर उरुसंधि तक फैल सकते हैं जबकि स्त्रियों में व्रण जननांग से नीचे और पीछे की ओर गुदा की ओर फैलते हैं।

इन व्रणों को खुजाने से, अंगुलियों के नाखूनों में लग जाने वाले पदार्थ से, अथवा संक्रमित वस्त्रों, आदि से दूरस्थ अंगों में संक्रमण बहुत कम फैलता है। पर ऊपरी, द्वितीयक संक्रमण काफी विनाशकारी हो सकता है। वह शिश्न के गहरे ऊतकों को प्रभावित कर सकता है, जिसके फलस्वरूप उसका और आसपास के क्षेत्र का आंशिक अथवा पूर्ण विच्छेदन करना पड़ सकता है।

### जटिलताएँ :

यदि डोनोवैनोसिस के व्रणों का बहुत दिनों तक इलाज नहीं किया जाता तब भग और भगशिश्निका सहित स्त्रियों के जननांगों में मिथ्या फीलपांव (स्यूडोएलीफेंटाइसिस) हो सकता है। (चित्र 15) कभी-कभी मूत्र मार्ग, जन्म नलिका और गुदा छिद्र संकरे हो सकते हैं। बहुत दिन पुराने और अनउपचारित मरीजों में विस्तृत हानि के फलस्वरूप यौन अंग अपना काम करना बंद कर देते हैं और कभी-कभी इस प्रकार के मरीजों के ऊतकों में कैंसर भी हो सकता है।

इस रोग के निदान का सबसे आसान तरीका है इससे ग्रस्त ऊतकों का लेप तैयार करके विशेष अभिरंजन के बाद माइक्रोस्कोप के नीचे उसका परीक्षण करना। इससे बड़ी ऊतक कोशिकाओं और सफेद रक्त कोशिकाओं के भीतर

डोनोवैनेसिस उत्पन्न करने वाले बैकटीरियाओं को आसानी से देखा जा सकता है। (चित्र 16) परंतु इन बैकटीरियाओं को प्रयोगशाला में कलचर माध्यम में नहीं उगाया जा सकता।

**उपचार :** इस रोग के उपचार के लिए सबसे आवश्यक कार्य होता है व्रणनीय जननांगों को, नमक के गुनगुने पानी से भली—भाति धोना और उनको एकदम स्वच्छ रखना। इसके बाद पूरी खुराक में, दो सप्ताह अथवा उस समय तक जब तक व्रण पूरी तरह ठीक नहीं हो जाते, सल्फाट्राइमिथोप्रिम जैसे एंटीबायोटिक अथवा स्ट्रेप्टोमाइसिन, टेट्रासाइक्लिन, देना जरूरी होता है। इस दौरान रोगी को किसी लैंगिक क्रिया में लिप्त नहीं होना चाहिए तथा इस क्रिया में अपने यौन—भागीदार व्यक्ति की भी जाँच करानी चाहिए। यह बहुत जरूरी है। यदि वह व्यक्ति भी इस रोग से पीड़ित पाया जाता है तब उसका भी पूर्ण रूप से उपचार किया जाना चाहिए।

### रतिज लसीका कणिकागुल्म

रजित लसीका कणिकागुल्म (लिम्फोग्रैनुलोमा वेनेरियम, (एल.जी.वी.) मुख्य रूप से लसीका ऊतक का रोग है। (जैसा कि आप पहले पढ़ चुके हैं कि रतिज लसीका कणिकागुल्म काफी लंबा और कठिन नाम है। इसलिए आमतौर पर चिकित्सक इसे “एल.जी.वी.” नाम से पुकारते हैं। हम भी इस बारे में उनका अनुसरण करेंगे।) यह उन्हीं सूक्ष्मजीवों जो आँखों में रोहे और गैर—सुजाकी मूत्रमार्ग में सूजन पैदा करने के लिए जिम्मेदार हैं की एक उपकिस्म द्वारा उत्पन्न होता है। रोहे आँखों की एक गंभीर बीमारी है जो हमारे देश में अंधेपन का एक प्रमुख कारण है। और गैर—सुजाकी मूत्रमार्ग सूजन मूत्रमार्ग के संक्रमण के कारण उत्पन्न होती है। एल.जी.वी. उत्पन्न करने वाले जीवाणु जननांगों में सूक्ष्म विदारों और खरोंचों में से, प्रवेश करते हैं।

### लक्षण :

एल.जी.वी. की आरंभिक विक्षति इस रोग से पीड़ित व्यक्ति के लैंगिक संपर्क में आने के 3 से 12 दिन बाद, संक्रमण स्थल पर एक कटव या उथले व्रण

के रूप में उभरती है। अधिकांशतः वह शीघ्रता से और रोगी को बिना—मालूम हुए ही ठीक हो जाती है। पुरुषों में विक्षितियाँ आमतौर से शिश्न मुण्ड, फ्रीनुलम, अग्रच्छद और वृषण कोष पर होती हैं जबकि स्त्रियों में ये विक्षितियाँ साधारणतया योनि भित्ति, भंगाजलि (फूर्श), गर्भाशय ग्रीवा और भग पर होती हैं। एल.जी.वी. उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव जननांगों से लसीका ऊतकों में पहुँच जाते हैं और वहाँ संक्रमण उत्पन्न करते हैं। इस संक्रमण की लपेट में आसपास के ऊतक भी आ जाते हैं। इस प्रकार आरंभिक संक्रमण के स्थल से आने वाली लसीका ग्रंथियाँ तेजी से फूलने लगती हैं और जगह—जगह पर कई मुहों में फूट पड़ती हैं। इससे फोड़े और विवर हो जाते हैं। अनेक लसीका ग्रंथियों के प्रभावित हो जाने के फलस्वरूप उरुसंधियों में गढ़दे हो जाते हैं। ये गढ़दे एल.जी.वी. के प्रमुख अभिलक्षण हैं।

धीरे—धीरे यह क्रिया चिरकाली व लंबे समय तक जारी रहने वाली हो जाती है। वह गहरे लसीका पर्वों तक फैलती जाती है और उससे होने वाली क्षति बढ़ती जाती है। नई—नई लसीका ओं तक संक्रमण पहुँच जाने के फलस्वरूप श्रोणि और परिमिलाशय के गहरे लसीका पर्व भी संक्रमित होते जाते हैं। इस प्रकार संक्रमण ऊपर उदर तक और नीचे मलाशय तक पहुँच जाता है। उपचार के दौरान लसीका पर्वों पर जो दबाव पड़ता है उससे स्त्रियों की जननेन्द्रिय के ओठों सहित, जनन अंगों में एलीफेन्टाइसिस हो जाता है। (चित्र 17) मलाशय के इर्द—गिर्द के लसीका पर्वों के लिप्त हो जाने के फलस्वरूप ज्वर, मलाशय में पीड़ा, खुलकर दस्त न हो पाने का आभास, कब्ज और अंततः मल मार्ग के संकरे हो जाने के कारण पेंसिल सदृश्य बहुत बारीक मल आने जैसी घटनाएं होने लगती हैं।

रक्त प्रवाह के माध्यम से संक्रमण शरीर के अन्य अंगों में भी फैल सकता है। इससे यकृत, फेफड़े, हड्डियों की संधियाँ और रीढ़ को ढकने वाली झिल्लियों सहित प्रमस्तिष्क—मेरु तरल (सेरेब्रोस्पाइनल फ्लुइड) प्रभावित हो सकते हैं। इस स्थिति में इस रोग का इलाज कठिन हो जाता है और यह जीवन के लिए घातक हो सकता है।

**उपचार :** एल.जी.वी. का निदान विभिन्न रक्त परीक्षणों की मदद से किया

जा सकता है। इन परीक्षणों के सकारात्मक नतीजे एल.जी.वी. उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति के अप्रत्यक्ष प्रमाण होते हैं। संक्रमण को फैलने से रोकने तथा जननांग ऊतकों को और अधिक हानि से बचाने का सर्वोत्तम तरीका है जननांग को साफ और स्वच्छ रखना। रोग को और न बढ़ने देने तथा उसकी रोकथाम के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण होता है। रोग के पूर्ण उपचार के लिए 14 दिन तक अथवा उस समय तक जब तक मरीज पूरी तरह निरोगी नहीं हो जाता, टेट्रासाइक्लिन की पूरी खुराक देनी चाहिए। परंतु रोग में अन्य जटिलताएं उत्पन्न हो जाने यथा मलाशय नाल के संकरे हो जाने और नालवरण के संक्रमित हो जाने की दशा में शल्यक्रिया आवश्यक हो सकती है। साथ ही उन सभी व्यक्तियों की भी जिन के एल.जी.वी. से पीड़ित व्यक्ति के साथ यौन संपर्क की संभावना हो, भली-भांति जांच करानी चाहिए और आवश्यकतानुसार उनका उपचार भी किया जाना चाहिए। यौन प्रवृत्तियों में परिवर्तन द्वारा, यथा विभिन्न व्यक्तियों से यौन संबंध और समलिंगी यौन संपर्क न करके इस रोग से बचा जा सकता है। आशा है कि लोगों के रहन-सहन में सुधार होने तथा जननांगों को साफ रखने की बढ़ती प्रवृत्ति तथा स्वास्थ्य शिक्षा और चिकित्सा सुविधाओं में बढ़ोत्तरी होने से इस भयंकर रोग से पीड़ित होने वाले लोगों की संख्या में कमी आएगी।

### अन्य व्रणीय यौन संचरित रोग

सिफिलिस, शैंकराभ, डोनोवैनोसिस और एल.जी.वी. जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न होने वाले ऐसे प्रमुख यौन संचरित रोग हैं जिनमें ब्रण उत्पन्न होते हैं। पर कुछ ऐसे भी व्रणीय यौन संचरित रोग हैं, जो जीवाणुओं के अतिरिक्त अन्य सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न होते हैं। ये रोग हैं जननांगों का हर्पीज, शिशनमुण्ड शोथ (बैलेनिटिस) और भगशोथ (वल्विटिस)।

जननांगों का हर्पीज – जननांगों का हर्पीज आमतौर से हर्पीज वायरस ग्रुप-2 (एच.एस.वी.-2) द्वारा और कभी-कभी एच.एस.वी.-1 द्वारा उत्पन्न होता है। एच.आई.वी. पॉजिटिव तथा एड्स के लक्षण से ग्रस्त व्यक्तियों के कारण इस रोग से पीड़ित व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि हुई है

और रोग की गंभीरता भी बढ़ी है।

### लक्षण और चिन्ह :

जननांगों के हर्पेज का प्रथम आक्रमण, इस रोग से पीड़ित मरीज के साथ यौन संपर्क करने के एक सप्ताह के भीतर ही जननांगों के ऊपर दर्द करने वाले अनेक व्रणों के उभरने के रूप में होता है। ये व्रण जननांगों के अतिरिक्त अन्य अंगों यथा भग, जन्मनाल, गुदा, जांघों के अंदर की ओर और जघन पर भी उभर सकते हैं। साथ ही अनेक मरीजों की उरुसंधियों में लसीका पर्व सूज जाते हैं और उन्हें सिर दर्द और बुखार हो जाता है। उन्हें प्रकाश बहुत चुभता सा लगता है। इसलिए वे प्रकाश से दूर रहना पसंद करने लगते लगते हैं। इस अवस्था में मरीज बहुत ही संक्रामक हो जाता है। जिस व्यक्ति के साथ वह यौन संपर्क करता है उसको इस रोग के लगने का बहुत खतरा हो जाता है। यदि मरीज गर्भवती स्त्री है तो उसके नवजात शिशु को, उसके जन्मनाल में से गुजरने के दौरान, यह रोग लग सकता है। इस रोग से पीड़ित स्त्रियों से पैदा होने वाले बच्चों में से 50 प्रतिशत तक मर सकते हैं।

जननांगों के हर्पेज का संक्रमण काफी दिनों तक रहता है और वह कटन्युक्त विक्षितियों के पुनः उत्पन्न होने का कारण बनता है। पुनःउत्पन्न होने वाले व्रण यद्यपि प्राथमिक व्रणों की अपेक्षा कम पीड़िदायक होते हैं परंतु वे संक्रामक होते हैं और उनसे भी मरीज को अड़चन होती है। (चित्र 18) व्रणों के पुनः सक्रिय होने के कारण, मानसिक तनाव, मैथुन, मासिक चक्र और जलवायु परिवर्तन, आदि हो सकते हैं।

**उपचार :** किसी रोग—हर उपचार का न होना, इस रोग के बार—बार उभर आने की क्षमता, अवसाद की मनोयौन समस्याएँ, यौन और वैवाहिक संबंधों का विच्छेदन, गर्भस्थ शिशुओं में संक्रमण होने के बढ़ते हुए अवसर और नवजात शिशुओं की बढ़ती हुई मृत्यु संख्या ने इस रोग को एक कठिन समस्या बना दिया है। एक प्रतिवायरसी औषधि, एसाइक्लोवीर की मौखिक रूप से, 200 मिग्रा. खुराक दिन में, पाँच बार तक या चिकित्सक के निर्देश के अनुसार, देने से, जननांगों के हर्पेज के प्रथम आक्रमण की गंभीरता कम हो जाती है। यदि यह औषधि इस रोग के पुनः उभरने के आरंभिक चरण में भी,

इसी प्रकार की खुराकों में, ली जाती है तब रोग नहीं उभरता। वैसे रोग की पुनरावृति को एकदम दबा देने के लिए इस उपचार को कई महिनों तक चालू रखना पड़ता है।

## शिश्नमुण्डशोथ और भगशोथ

पुरुषों में शिश्न का और स्त्रियों में भग का संक्रमण और क्रमशः “शिश्नमुण्डशोथ” और “भगशोथ” कहलाते हैं।

इन दोनों रोगों को उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव एक जैसे होते हैं वे हैं, अनाक्सीय बैकटीरिया। ये बैकटीरिया आक्सीजन की अनुपस्थिति में ही जीवित रह सकते हैं। आक्सीजन की मौजूदगी में मर जाते हैं। ये बैकटीरिया सिफिलिस उत्पन्न करने वाले बैकटीरिया से भिन्न, मामूली किस्म के हो सकते हैं। कैंडिडा ऐल्बीकेन्स पुरुषों में और ट्राइकोमोनास वैजाइनेलिस स्त्रियों में रोग उत्पन्न करते हैं। यदि मरीज में रोग उत्पन्न करने का कारण कैंडिडा ऐल्बीकेन्स है तब उसके और यौन क्रिया में उसके भागीदार व्यक्ति की रक्त और मूत्र शर्करा की जाँच करा लेनी चाहिए। इससे यह ज्ञात हो जाएगा कि वे मधुमेह से पीड़ित तो नहीं हैं।

कभी-कभी अनाक्सीय बैकटीरिया और गैर-विशिष्ट ट्रेपोनेमीज द्वारा उत्पन्न होने वाली कटन और व्रण अत्यधिक तेजी से बढ़ते हैं। उनसे जननांगों पर बहुत सूजन आ जाती है और इन अंगों को बहुत हानि पहुंचती है। शिश्न की ऊपरी चमड़ी की सूजन के और भगशोथ के उपचार में सर्वप्रथम आवश्यकता होती है स्वच्छता की।

इन रोगों के उपचार के लिए जननांगों को साफ रखना बहुत जरूरी है। समुचित एंटीबायोटिकों के उपयोग से इन रोगों का उपचार किया जा सकता है। यदि इनसे पीड़ित मरीज की अवस्था बहुत गंभीर है तब शल्यकर्म की भी आवश्यकता पड़ सकती है।

## क्षतिजन्य जननांग व्रण

मैथुन के दौरान कभी-कभी, रगड़ से जननांगों को चोट लग जाती है। साथ

ही जननांगों की समुचित देखभाल न करने के कारण भी बैक्टीरियाजन्य संक्रमण पैदा हो जाता है। इससे शिश्न की चमड़ी सूज जाती है, शिश्न पर व्रण भी हो जाते हैं और व्रणों में मवाद पड़ जाती है। इन कारणों से शिश्न नष्ट भी हो सकता है। कभी—कभी जननांगों पर स्थानीय रूप से लगाए गए लेप भी सूजन और व्रण उत्पन्न कर देते हैं।

### गैर-रतिज जननांग व्रण

बहुत कम परिस्थितियों में औषधियों के प्रति एलर्जी, जैसे कारणों, विशेष रूप से स्थानिक औषधि लक्षण (फिक्सड ड्रग इराप्शन) कैंसरजन्य वृद्धि आदि के फलस्वरूप व्रण और जननांगों का रोग हो जाता है। उसके अतिरिक्त स्केबीज् जैसे परजीवी संक्रमण के बाद द्वितीयक संक्रमण हो सकता है जिसके परिणामस्वरूप भी जननांगों पर व्रण हो सकते हैं। कुछ अन्य त्वचा रोगों, यथा सोरियासिस, लाइकेन प्लेनस, बैलानिटिस जेरोटिका आदि, जिनका यौन संचरित रोगों से कोई संबंध नहीं होता, के कारण भी जननांगों पर व्रण हो सकते हैं।



अध्याय : चार

## जनन—मूत्र विसर्जन

सामान्यतः पुरुषों के जननांगों से विसर्जन नहीं होता है परंतु स्त्रियों में ऐसा होना आम बात है। स्त्रियों के इस प्रकार के विसर्जन को “श्वेत प्रदर” या “सफेद पानी” (ल्यूकोरिया) कहते हैं। जनन आयु वर्ग की स्त्रियों में श्वेत प्रदर के कारण बहुत कमजोरी आ जाती है। साथ ही इसके कारण उन्हें यौन संपर्कों तथा सामाजिक जीवन में बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसके कारण अधिकांश स्त्रियों की कमर के निचले हिस्से में दर्द बना रहता है और वे अपने—आप को अस्वस्थ अनुभव करती रहती हैं।

पुरुषों में लगभग इस प्रकार का विसर्जन हमेशा ही संचारी यौन संचरित रोगों के कारण होता है। आमतौर से उनके मूत्र मार्ग के मुख पर एक सफेद विसर्जन होता है और इससे उन्हें बहुत जलन और झुलसन महसूस होती है। कभी—कभी ऐसा भी हो सकता है कि उनके मूत्र मार्ग के मुख पर मात्र सफेद तरल की एक बूँद भर हो और उन्हें कोई अन्य अड़चन महसूस न हो। यह विसर्जन की भिन्नता करने वाले सूक्ष्मजीवों पर निर्भर करती है।

एंटीबायोटिकों की खोज से पहले जननांगों से होने वाले इस विसर्जन का निश्चित इलाज न हो सकने के कारण पुरुषों को बहुत हानि पहुंचती थी तथा उनका मूत्रमार्ग संकरा हो जाता था जिसके फलस्वरूप उन्हें मूत्र त्यागने में भयंकर पीड़ा होती थी। इसके अतिरिक्त इस विसर्जन से जनन और मूत्र अंगों को भी बहुत हानि पहुंचती थी।

प्रजनन विसर्जन की घटना को स्पष्ट रूप से समझने के लिए इस विसर्जन का वर्णन निम्न शीर्षकों के अंतर्गत करना अधिक सुविधाजनक होगा —

- (1) पुरुषों के मूत्र मार्ग से विसर्जन
- (2) स्त्रियों में विसर्जन
- (3) बच्चों में विसर्जन
- (4) जटिलताएं

## पुरुषों में मूत्रमार्ग से विसर्जन

पुरुषों में यौन संक्रमणों के कारण होने वाला विसर्जन मूत्रमार्ग के मुख पर उपस्थित होता है। इससे मूत्र त्यागते समय पीड़ा होती है। कभी—कभी पीड़ा बहुत भयंकर भी हो सकती है। साथ ही मूत्र मार्ग का मुख लाल हो सकता है और वहाँ कटाव हो सकता है।

पुरुषों में इस प्रकार का विसर्जन अधिकांशतः एक बैकटीरिया नीसेरिया गोनोरिया के कारण होता है। इसीलिए इस बीमारी को “गोनोरिया” कहते हैं। आम बोल चाल में इसे “सुजाक” कहा जाता है। हम भी इसे “सुजाक” ही कहेंगे।

विसर्जन गाढ़े, क्रीम के रंग का सफेद होता है जिससे नीचे पहनने के बस्त्र गीले हो जाते हैं। (चित्र 19) मूत्र त्यागने में भयंकर पीड़ा होती है क्योंकि वह सूजे मूत्र मार्ग से गुजरता है। इसीलिए सुजाक से पीड़ित पुरुष तीव्र पीड़ा के कारण बीमारी के आरंभ में ही चिकित्सक के पास, इलाज कराने पहुँच जाते हैं। इस अवस्था में तत्परता से इलाज करने से मरीज बिना किसी जटिलता के, शीघ्रता से, निरोगी हो जाता है। वैसे एक अनुभवी चिकित्सक साधारण जाँच से भी सुजाक का सही निदान कर सकता है और जहां प्रयोगशाला परीक्षण सुविधाएँ उपलब्ध हैं वहाँ इस निदान की पुष्टि काँच की स्लाइड पर, रोगी के शरीर से होने वाले विसर्जन का पतला लेप चढ़ाकर, उसे समुचित अभिरंजन के बाद माइक्रोस्कोप के नीचे परख कर की जा सकती है। (चित्र 20)

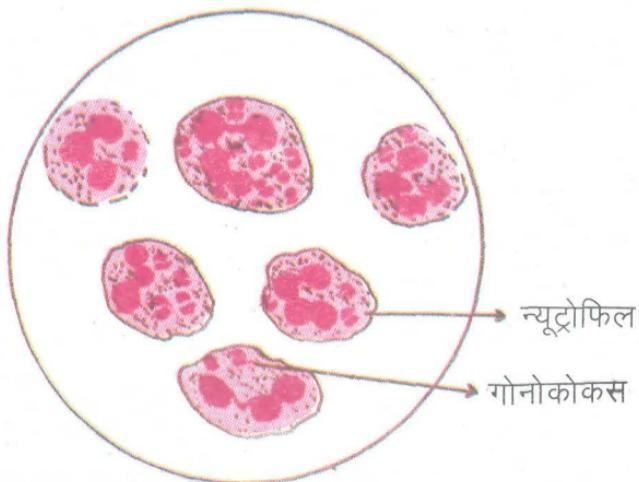
यौन रूप से क्रियाशील और समलिंग्नी यौन क्रियाओं में लिप्त होने वाले अनेक व्यक्तियों के, जो सुजाक का इलाज करा रहे हों, अथवा नहीं, के मूत्र मार्ग के सिरे पर एक पतला सफेद विसर्जन दिखायी देता है। इस विसर्जन के दौरान उन्हें विशेष अथवा बिलकुल भी तकलीफ नहीं होती। कभी—कभी यह—इतनी कम मात्रा में होती है कि स्वयं रोगी भी उसे नहीं देख पाता—होता है पर मरीज को मूत्र मार्ग में हल्की जलन महसूस होती रहती है। इसके अतिरिक्त कुछ हालातों में बहुत सुबह जब मरीज मूत्र त्यागने बैठता है तब उसके मूत्र मार्ग के मुख पर मवाद की एक बूँद भर दिखायी देती है।



चित्र 18 : जननांगों के मरीज के शिश्न कांड पर सूक्ष्म कोष्ठकी विकास



चित्र 19 : सुजाक के पुरुष मरीज के मूत्रमार्ग के मुख पर विसर्जन



चित्र 20 : सुजाक उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव :  
मवाद के कोशिका में ग्रैम नेगेटिव डिप्लाकॉक्स

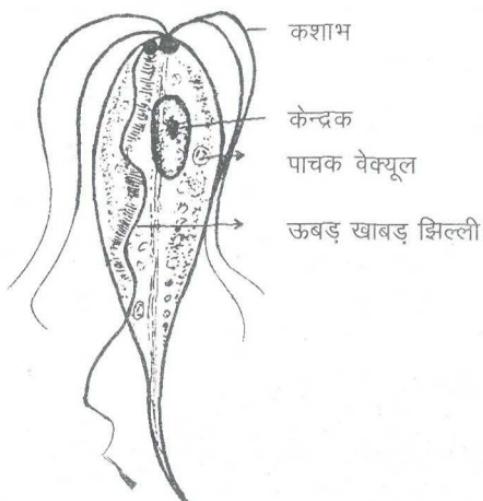
**गैर-सुजाकी मूत्रमार्ग शोथ :** सुजाक में काफी अधिक मात्रा में होने वाले गाढ़े, क्रीम रंग के, विसर्जन के विपरीत गैर-सुजाकी मूत्रमार्ग शोथ में होने वाला विसर्जन कम मात्रा में होता है, पतला रहता है और देखने में सफेद रंग का होता है। कभी-कभी जब विसर्जन के बाह्य लक्षण स्पष्ट नहीं होते अथवा मौजूद नहीं होते तब मूत्र मार्ग के ओठों की खुरचन से लेप की जाँच करके निदान किया जा सकता है। माइक्रोस्कोप के नीचे, इस लेप में बिना-पहचाने-जा-सकने योग्य जीवाणुओं के कारण उत्पन्न मवाद कोशिकाएं मात्र दिखायी देती हैं। यह जाँच गैर-सुजाकी मूत्रमार्ग शोथ की पुष्टि करती है। यह शोथ गनोरिया के बैक्टीरिया के अतिरिक्त अन्य अनेक जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न होती है। जननांग में किसी भौथरी वस्तु के घुसा देने से उत्पन्न घाव के कारण अथवा जननांग को किसी तेज रसायन से धोने के फलस्वरूप भी कभी-कभी मूत्रमार्ग में जलन और झुलसन हो सकती है।

### स्त्रियों में विसर्जन

स्त्रियों में श्वेत प्रदर, योनि और जन्मनाल में मौजूद होता है। चिकित्सक द्वारा विशेष जाँच करने पर ये अंग लाल, सूजे हुए और मामूली छिले हुए से दिखायी देते हैं जिनमें गाढ़े, क्रीम के रंग के तरल (विसर्जन) का पता चलता है। ऐसी

स्त्रियों में जो लंबे समय तक इस रोग से पीड़ित रहने के बावजूद इलाज नहीं करतीं, विसर्जन बहुत अधिक मात्रा में होता है जो विसर्जन स्थल से धीरे-धीरे बह कर मूत्र मार्ग में आ जाता है। कभी-कभी स्त्रियों में श्वेत प्रदर संक्रमित पुरुष के साथ मैथुन करने से भी हो जाता है।

लंबे समय तक श्वेत प्रदर की शिकायत रहने के फलस्वरूप भी स्त्रियों को इतनी भयंकर पीड़ा नहीं होती जितनी इस विसर्जन के कारण पुरुषों को होती है। इससे स्त्रियों को कमर में हल्का दर्द होता है, बेचेनी रहती है, ऐसा महसूस होता रहता है कि उनकी तबीयत ठीक नहीं है और हल्का बुखार है। इसके साथ उनके जननांगों में खुजली होती है और कभी-कभी पेशाब करते समय जलन होती है। श्वेत प्रदर स्त्रियों की एक आम बीमारी है और वह हमेशा यौन संचरित रोगों के कारण नहीं होती। वैसे पुरुषों की भाँति ही अगर श्वेत प्रदर का कारण यौन संचरित रोग हैं तब वह **नीसेरिआ गोनोरिया** या किसी अन्य जीवाणु की वजह से हो सकता है। जो स्त्रियाँ अपने जननांगों की समुचित सफाई नहीं रखतीं उनमें ट्राइकोमोनास वैजाइनेलिस, जैसे जीवाणुओं अथवा कैंडिडा वैजाइनेलिस जैसे यीस्टों द्वारा भी संक्रमण हो सकता हैं। (चित्र 21)



चित्र 21 : ट्राइकोमोलास वैजाइनेलिस

## बच्चों में मूत्रमार्ग विसर्जन

उन परिस्थितियों के अतिरिक्त जिनमें बच्चों के साथ किसी संक्रमित वयस्क ने बलात्कार किया हो, उनके विसर्जन का कारण कभी-कभी यौन संचरित रोग होते हैं। बालकों को होने वाले विसर्जन के बाह्य लक्षण वयस्कों के सदृश्य ही होते हैं परंतु बालिकाओं को होने वाले विसर्जन के लक्षण स्त्रियों से भिन्न होते हैं। विसर्जन के दौरान योनि में सूजन आ जाती है और विसर्जन मामूली मात्रा में होता है। ऐसा यौन परिपक्वता से पूर्व उनके जननांगों की बनावट और कार्य करने की पद्धति की भिन्नता के कारण होता है।

### जटिलताएँ

- (1) उन पुरुषों में जो विसर्जन से छुटकारा पाने के लिए अपना उपचार नहीं कराते, यह संक्रमण मूत्र मार्ग से, ऊपर की ओर फैल सकता है जिससे गंभीर स्वास्थ्य समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। गुर्दा और प्रोस्टैट ग्रंथि (मूत्र मार्ग के इर्द-गिर्द स्थित ग्रंथि) को हानि पहुंच सकती है या संक्रमण वृषण अधिवृषण (एपिडिडीमिस) जैसी जनन ग्रंथियों तक फैल सकता है इससे 10 से 20 प्रतिशत तक पुरुष बंध्य हो जाते हैं।
- (2) स्त्रियों में – यदि श्वेत प्रदर से पीडित स्त्रियां इलाज नहीं कराती तो – संक्रमण उदर के निचले भाग में दर्द पैदा कर देता है। उसके साथ श्रोणि (कूलहों) में संक्रमण होने की शंका उत्पन्न हो सकती है। इस संक्रमण के फलस्वरूप डिम्बवाही नलिकाएं, डिम्ब ग्रंथियां और गर्भाशय के अंदरुनी अस्तर सूज जाते हैं और उनमें शोथ हो जाता है तथा उदरीय अंगों को ढकने वाली परत में भी शोथ हो जाता है।
- (3) बच्चों में – अनुपचारित बच्चों में मुख्य रूप से नवजात शिशुओं में ये जटिलताएं संक्रमित माता की जन्म नालिका में से गुजरते समय उत्पन्न होती हैं। यदि प्रसूति के बाद समुचित निरोधक उपाय नहीं अपनाए जाते तब इस प्रकार के शिशुओं को आंखों का तीव्र संक्रमण “आथलिमआ निओनोटोरम” हो सकता है।

- (4) अनुपचारित पुरुष, स्त्री, बच्चे सब में जीवाणु रक्त प्रवाह के माध्यम से फैलते हैं और विभिन्न प्रकार के लक्षण उत्पन्न करते हैं। इनमें सबसे स्पष्ट लक्षण हल्के रंग वाले व्यक्तियों में दिखायी देते हैं। उनकी भुजाओं, टांगों, पैरों के इर्द-गिर्द और जननांगों में गुलाबी रंगी की पित्ती उभर आती है। घुटनों, कोहनियों, कलाइयों और टखनों जैसे बड़े जोड़ों में मवाद इकट्ठे होने से वे सूज सकते हैं।
- (5) समलिंगी व्यक्तियों में – समलिंगी व्यक्तियों और गुदा-मैथुन में लिप्त होने वाले व्यक्तियों में मलाशय में दर्द और छिलन के साथ विसर्जन होता है। मौखिक मैथुन करने वाले व्यक्तियों में मुख की सतही इलेष्मा अस्तर में शोथ हो सकता है जिससे गले में दर्द हो सकता है और आवाज भरा जाती है।

#### उपचार :

यौन संचरित विसर्जन से पीड़ित रोगियों की देखरेख और उपचार उत्पादक जीवाणुओं पर तथा मरीज की उम्र और बीमारी की अवस्था पर निर्भर करता है।

- (1) जो व्यक्ति मूत्रमार्ग, गर्भाशय-ग्रीवा और मलाशय के सुजाकी संक्रमण से पीड़ित होते हैं परंतु इस संक्रमण ने उनमें जटिलताएं उत्पन्न नहीं की हैं उनका उपचार ब्रॉड स्पेक्ट्रम एंटीबायोटिकों से किया जा सकता है। उन्हें इन एंटीबायोटिकों की एक खुराक देना ही काफी होता है। पर यह खुराक उस क्षेत्र विशेष में उपस्थित औषधि के प्रति संवेदनशीलता पर निर्भर होती है। पहले सुजाक के जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए पेनीसिलीन का बहुत अधिक उपयोग किया जाता था। इसके फलस्वरूप कुछ समय से इन जीवाणुओं ने पेनीसिलीन के प्रति आंशिक या पूर्ण प्रतिरोधिता विकसित कर ली है। इसलिए अनेक देशों में सुजाक के उपचार में पेनीसिलीन को प्राथमिकता नहीं दी जाती और उसके स्थान पर अन्य ब्रॉड स्पेक्ट्रम एंटीबायोटिकों की एक खुराक दी जाती है। ऐसे कुछ एंटीबायोटिक हैं – सेफ्ट्रीऑक्सोन, स्पेक्टीनोमाइसीन, सिप्रोफ्लोक्सासिन और नोरफ्लोक्सासिन। इनमें सेफ्ट्रीआक्सोन की 250 मिग्रा मात्रा,

अंतःपेशी (इंटरामस्कुलर) इंजेक्शन के रूप में, स्पेक्टीनोमाइसीन की 2 ग्राम मात्रा अंतःपेशी इंजेक्शन के रूप में, और सिप्रोफलोक्सासिन की टिकिया के रूप में 500 मिग्रा और नारफलोक्सासिन की 800 मिग्रा मात्रा, टिकिया के रूप में, देना पर्याप्त होता है। सुजाक के उपचार के लिए एंटीबायोटिक की एक ही प्रभावशाली खुराक देने का उद्देश्य कम से कम समय में संक्रमण को रोकना है जिससे यह रोग यौन क्रिया में सक्षम अन्य लोगों में न फैले।

- (2) यदि सुजाक में जटिलताएं उत्पन्न हो गई हैं तब मरीज को उसकी हालत तथा उसमें सुधार होने की रफ्तार के अनुसार 1 से 2 सप्ताह तक एंटीबायोटिक देने की जरूरत होती है। यह उपचार करने वाले चिकित्सक पर निर्भर करती है। बच्चों को दी जाने वाली एंटीबायोटिक की खुराक, रोग की अवस्था और मरीज के शारीरिक वजन के अनुसार होती है।
- (3) गैर-सुजाकी मूत्र मार्ग शोथ – मूत्र मार्ग में सुजाक के अतिरिक्त अन्य कारणों से होने वाले शोथ के उपचार के लिए भी उन्हीं एंटीबायोटिकों का इस्तेमाल किया जाता है जो सुजाक के लिए प्रयुक्त होते हैं परंतु इस परिस्थिति में अधिक समय तक एंटीबायोटिक देने पड़ते हैं। साथ ही गैर-सुजाकी मूत्रमार्ग शोथ के उपचार में पेनीसिलीन और सम्बद्ध औषधियां देने की सिफारिश नहीं की जाती।
- (4) ट्राइकोमोनास वैजाइनेलिस और बैक्टीरियाजन्य वैजाइनोसिस – ट्राइकोमोनास वैजाइनेलिस के उपचार हेतु मेट्रोनिडेजॉल की 2 ग्राम मात्रा की एक खुराक मौखिक रूप से लेना प्रभावशाली होता है जबकि बैक्टीरियाजन्य वैजाइनोसिस के उपचार के लिए इस खुराक को 48 घंटे बाद फिर से लेना पड़ता है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि उन मरीजों को जो मेट्रोनिडेजॉल का सेवन कर रहे हो शराब नहीं पीनी चाहिए और गर्भवती महिलाओं को गर्भावस्था के प्रथम तीन महीनों में यह दवा नहीं लेनी चाहिए।
- (5) कॅंडिडाजन्य योनि शोथ का उपचार करते समय यौन संचरित रोगों के अतिरिक्त अन्य कई रोगों – यथा मधुमेह, अंतःस्नावी रोग आदि

का ध्यान रखना पड़ता है तथा और कई ऐसी औषधियों का प्रयोग जो इस प्रकार का शोथ उत्पन्न कर देती है, उनका सेवन नहीं करना चाहिए। विशिष्ट कैडिडाजन्य योनि शोथ के उपचार के लिए योनि में 7 से 10 दिन के लिए माइक्रोनाजोल अथवा क्लोट्राइमैक्सॉल जैसी प्रतिकवक औषधियों को रखना चाहिए।

- (6) तीव्र श्रोणि शोथ में डोक्सीसाइक्लीन की खुराक 100 मिग्रा दिन में दो बार, अथवा टेट्रासाइक्लीन 500 मिग्रा दिन में चार बार और मेट्रोनिडाजोल की खुराक 1 ग्राम, दिन में तीन बार लेनी होती है। इन औषधियों को 10 दिन तक दिया जाना चाहिए। इलाज के बाद तीव्र श्रोणि शोथ से पीड़ित स्त्रियों के शरीर में से लूप निकाल देना चाहिए। जब ऐसा किया जाए तब मौखिक गर्भनिरोधक उपचार करना जरूरी है।

## यौन संपर्कियों की देखभाल

यौन संचरित रोगों के प्रभावशाली नियंत्रण के लिए सामान्यतः, और सुजाकी तथा गैर-सुजाकी जननांग विसर्जन के प्रभावशाली उपचार के लिए विशेष रूप से, यौन संपर्कियों की भी समुचित देखभाल जरूरी है। यह संक्रमण के प्रसार को रोकने और एक बार निरोगी हो गए मरीजों को पुनः संक्रमण से ग्रस्त होने से बचाने हेतु आवश्यक है।



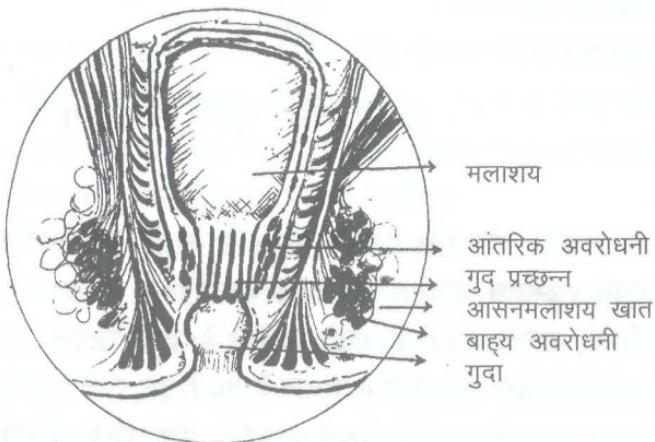
अध्याय पांच

## अन्य यौन संचरित रोग

यौन संचरित रोग ऐसे रोगों के समूह हैं जो विभिन्न जातियों के कीटाणुओं जिनमें सूक्ष्मतम वायरस से लेकर बैक्टीरिया, माइक्रोप्लाज्मा, प्रोटोजोआ, कैंडिडा, कवक, परजीवी आदि शामिल हैं, द्वारा उत्पन्न होते हैं। केवल एक ही बात जो इन सब रोगों में समान है वह है इन रोगों का यौन क्रियाओं द्वारा संचरण। इन क्रियाओं में मैथुन के पहले और उसके दौरान किए जाने वाले कार्य भी शामिल हैं। ये लक्षण कभी तुच्छ तो कभी विस्फोटक और कभी—कभी घातक भी सिद्ध हो सकते हैं। सामान्यतः यौन संचरित रोगों के लक्षण जननांगों पर ही मौजूद होते हैं परंतु विभिन्न प्रकार की यौन क्रियाओं यथा समलिंगी से लैंगिक क्रिया, गुदा—मैथुन, मौखिक मैथुन आदि के फलस्वरूप ये रोग अन्य अंगों को भी प्रभावित कर सकते हैं। साथ ही कभी—कभी ऐसा भी होता है ये रोग यौन संपर्कों की बजाय साथ खेलने वाले लोगों और परिवार के सदस्यों के घनिष्ठ संयर्क से भी लग जाते हैं। इसके अतिरिक्त स्केबीज, मोलास्कम, पेड़ीकुलोसिस, वार्ट जैसे रोग भी यौन संपर्कों से फैल सकते हैं। इसलिए ये “यौन संचरण—योग्य रोग” कहलाते हैं।

### गुदा—मलाशय क्षेत्र के यौन संचरित रोग

पोषण नाल वह नलिका है जिसमें से भोजन गुजरता है, पचता है और अंततः विष्ठा के रूप में शरीर से निकल जाता है। उसका अंतिम सिरा गुदा—मलाशय क्षेत्र कहलाता है। और यह क्षेत्र अनेक यौन संचरित रोगों से ग्रस्त हो जाता है। (चित्र 22) बहुत समय पहले यह पता चल गया था कि इस क्षेत्र में सिफिलिस, सुजाक, गुदा—जननांग वार्ट, डोनोवेनोसिस, एल.जी.वी. हो जाते हैं। स्त्रियों में अनेक यौन संचरित रोग यथा गुदा—मलाशय संक्रमण, सुजाक, गैर—सुजाकी संक्रमण, हर्पीज सिम्प्लैक्स वायरस (एच.एस.वी.) और वार्ट वायरस संक्रमण कदाचित् जननांगों से



चित्र 22 : गुदा—मलाशय क्षेत्र।

फैल कर गुदा—मलाशय क्षेत्र तक पहुंच जाते हैं।

एड्स के आगमन और समलिंगी व्यक्तियों के एड्स से अपेक्षाकृत अधिक पीड़ित होने के कारण पिछले अनेक वर्षों में एड्स से पीड़ित व्यक्तियों में जठरांत्र पथ में अनेक प्रकार के संक्रमण यथा कैंडिडा, क्रिप्टोस्कोकोसिस, माइकोबैक्टीरिया और साथ ही सिटोमेगेलोवायरस, हर्पीज सिम्प्लैक्स वायरस जैसे वायरसों के आक्रमण अधिक देखे गए हैं। इनके अतिरिक्त पोषण नाल में कैपोसी सारकोमा और लिम्फोमा जैसी दुर्दम्य रसोलियां भी उत्पन्न हो जाती हैं। इस प्रकार के यौन संचरित रोगों और एड्सजन्य जटिलताओं के वर्णन उपर्युक्त रोगों के अंतर्गत विस्तार से किए गए हैं।

समलिंगी पुरुषों के गुदा—मलाशय क्षेत्र में, सामान्यतः प्रदूषित भोजन और पानी के माध्यम से फैलने वाले रोग यथा प्रोटोजोआजन्य और बैक्टीरियाजन्य रोग भी गुदा—लैंगिक क्रियाओं द्वारा संक्रमित होते पाए गए हैं।

आमतौर से ये संक्रमण दूषित भोजन, पेयों और जल के सेवन से फैलते हैं। उन क्षेत्रों के निवासियों के जहाँ का पानी संदूषित होता है, लैंगिक संपर्कों द्वारा इन संक्रमणों से ग्रसित होने के अवसर अधिक हो जाते हैं यदि वे डायरिया अथवा पेचिश से पीड़ित व्यक्तियों के साथ मौखिक—मैथुन, गुदा—मैथुन जैसी क्रियाएं करते हैं तो।

## आंत्र संक्रमण : यौन रूप से संचरित

उन देशों में जहां स्वच्छ पेय जल सप्लाई की और सीवेज निपटान की व्यवस्था समुचित नहीं होती प्रोटोजोआ और बैक्टीरियाजन्य आंत्र संक्रमण आम बीमारियां होती हैं। ये बीमारियां उन लोगों को भी भयंकर रूप से प्रभावित करती हैं, जो शारीरिक स्वच्छता का ध्यान नहीं रखते या समुचित तरीके से हाथ धोए बिना खाना खाते हैं अथवा संदूषित भोजन ग्रहण करते हैं।

अनेक बार इस प्रकार के संक्रमणों के बाह्य लक्षण प्रकट नहीं होते या न्यूनतम रूप से प्रकट होते हैं। इनके आम लक्षण हैं : पेट में दर्द और ऐंठन, खुलकर दस्त न होने का अहसास, उल्टी, डायरिया, बुखार आदि। कुछ लोगों में ये लक्षण बहुत तीव्रता से प्रकट होते हैं और कुछ में बहुत हल्के रूप में। सामान्य प्रोटोजोआजन्य संक्रमण हैं, अभीबा—रुग्णता (एम्बिओसिस) और जिआर्डिआसिस; जबकि बैक्टीरियाजन्य संक्रमण हैं — शिजेलोसिस और साल्मोनेलोसिस। ये क्रमशः पैचिश और टायफायड उत्पन्न करते हैं।

समलिंगी व्यक्तियों में लैंगिक संपर्क के बाद सबसे अधिक होने वाले संक्रमण हैं प्रोक्टीटिस और कोलाइटिस। प्रोक्टीटिस में मलाशय से श्लेष्मा विसर्जन होता है जबकि कोलाइटिस में बड़ी आंत में शोथ हो जाता है और मल त्यागने के बाद भी यह अहसास होता रहता है कि दस्त खुल कर नहीं आया। वैसे उक्त दोनों रोग उन लोगों को भी हो जाते हैं जो विपरीत लिंगी व्यक्तियों के साथ—साथ समलिंगी व्यक्तियों से भी यौन संपर्क रखते हैं।

प्रोटोजोआ संक्रमणों से, चिकित्सक की सलाह से, मेट्रोनिडाजैल लेकर छुटकारा पाया जा सकता है। गंभीर बेसीलरी पैचिश सदृश्य लक्षण प्रकट होने पर शरीर में तरल प्रदार्थों का भली—भाँति, नियंत्रित, पुनःस्थापन करने के लिए एम्पीसिलीन अथवा ट्राइमेथोप्रिम सल्फामैथोक्साजॉल जैसे एंटीबायोटिक देने की सलाह दी जाती है। कोलाइटिस अथवा बड़ी आंत के शोथ के रूप में प्रकट होने वाले साल्मोनेला संक्रमण के उपचार के लिए एम्पीसिलीन या सल्फामैथोक्साजॉल जैसे एंटीबायोटिकों की पर्याप्त खुराकें देनी चाहिए। यदि साल्मोनेला संक्रमण आंत के बाहर हुआ है तब क्लोरएम्फेनिकॉल जैसे एंटीबायोटिकों की जरूरत हो सकती है।

## स्केबीज

### रोग फैलाने वाले जीव

स्केबीज एक परजीवी—जन्य रोग है जो माइट (कुटकी) द्वारा उत्पन्न होता है। माइट एक बहुत छोटा जीव है जिसका आकार पिन के माथे जैसा सूक्ष्म होता है। खाली आंख से देखने पर यह एक काले धब्बे जैसा दिखायी देता है। (चित्र 23) स्वस्थ व्यक्ति के शरीर में यह रोगी व्यक्ति के साथ घनिष्ठ शारीरिक संपर्क से पहुंच जाता है। एक बार ऐसा हो जाने पर माइट बाह्य त्वचा (एपीडर्मिस) की मुलायम, कोष्ण और सबसे ऊपरी तहों में प्रविष्ट कर जाते हैं। वहां सूक्ष्म छिद्रों में नर और मादा जोड़ा बनाते हैं और उसके बाद नर मर जाता है। पर मादा स्वयं को बाह्य त्वचा की ऊपरी परत के छिद्रों में छिपा लेती है और वहां अंडे देती है। इन अंडों में से निकलने वाले बच्चे, जब वयस्क होते हैं, तब वे अपने निवास के लिए त्वचा में नए छिद्र बना लेते हैं।

स्केबीज उत्पन्न करने वाले माइट मनुष्यों के अतिरिक्त अन्य जंतुओं पर भी आक्रमण करते हैं परंतु अन्य जानवरों, यथा कुत्ते, बिल्ली आदि पर आक्रमण करने वाले माइट मनुष्यों पर आक्रमण करने वाले माइटों से भिन्न होते हैं। जंतुवैज्ञानिकों के अनुसार माइटों की वह किस्म जो मनुष्य पर हमला



चित्र 23 : स्केबीज के माइट (सारकोप्टेल स्कैबीई)

करती है सारकोटेज स्केबीई की होमीनिस किस्म होती है। अवसरवश वह किस्म पालतू जानवरों से भी मनुष्यों पर हमला कर सकती है। ऐसी दशा में रोग का यह हमला बहुत तीव्र होता है।

## लक्षण

स्केबीज से ग्रस्त व्यक्तियों का सबसे स्पष्ट लक्षण है खुजली। यह खुजली रात के समय विशेष रूप से उठती है और नींद टूट जाती है। खुजली के रात में विशेष रूप से उठने का कारण होता है रोगी द्वारा चादर आदि ओढ़ना। चादर ओढ़ने से शरीर गरमा जाता है। इस गरमाहट में वयस्क माइट त्वचा में और गहरा छेद करने लगते हैं। माइट की इस कार्य के फलस्वरूप मरीज को खुजली उठती है। यह खुजली स्केबीज से ग्रस्त हो जाने के 2 से 6 सप्ताह बाद लगती है परंतु इस बीमारी से पुनःग्रस्त हो जाने पर मरीज को केवल कुछ घंटों में ही खुजली शुरू हो जाती है। उन अंगों का, जिन पर खुजली लगती है संक्रमण के संचरण के तरीके से कोई संबंध नहीं होता। निश्चय ही स्केबीज का संक्रमण यौन संपर्क से भी होता है और गैर-यौन तरीकों से भी। परंतु दोनों तरीकों से होने वाले संक्रमण की वजह से जननांगों – उदाहरणार्थ शिश्न, बृहत भगोष्ठ के ओष्ठ, जघन क्षेत्र, जांघों की अंदरुनी सतह तथा मलद्वार क्षेत्र में, नाभि के इर्दगिर्द, स्तनों के नीचे और इर्दगिर्द, बगलों के सामने के भाग में, कोहनियों के बाहरी और हाथों की अगुलियों के बीच में और पैरों की अंगुलियों में खुजली होती है। वयस्कों के चेहरे, खोपड़ी, हथेलियों और तलुओं में खुजली नहीं होती।

मैग्नीफांइग लैंस से बहुत बारीकी से देखने पर छिद्र एक लाक्षणिक, लहरदार लाल-धूसर रंग की विक्षति (5–1 5मिमी. लंबी) दिखायी देती है जिसके सिरे पर एक पुटिका स्थित होती है। जब स्केबीज का संक्रमण लैंगिक संपर्क से होता है तब जननांगों और वृषणकोश पर विवर नहीं दिखायी देते परंतु 2–4 मिमी. के कोमल, लाल रंग के, उभार दिखायी देते हैं। इन उभारों में खुजली लगती है इसलिए उन पर या उनके आसपास की खाल छिली हुई दिखायी देती है। (चित्र 24)

हो सकता है कि स्केबीज से पीड़ित व्यक्ति के साथ लैंगिक संपर्क स्थापित करने पर अथवा घनिष्ठ संपर्क में आने पर, आरंभ में, भागीदार व्यक्ति खुजली और खरोंचों की शिकायत न करें। वास्तव में स्केबीज से पहली बार पीड़ित होने पर खुजली की शिकायत होने में 2-4 सप्ताह का समय लग जाता है। खुजली वयस्क माइटों की विष्ठा और अन्य स्रवणों के कारण अथवा छिद्रों में पड़े अंडों के मलबे के कारण होती है। परंतु खुजली के एक बार शुरू हो जाने के बाद वह लंबे समय तक और स्केबीज के ऐसे उपचार के बाद भी जिसमें सब जीवित माइटों को मार दिया जाता है बनी रहती है।

## निदान

जैसा कि आप ऊपर पढ़ चुके हैं स्केबीज का मरीज रात में खुजली और खरोंचों की शिकायत करता है। उसे इतनी तेज खुजली उठती है कि वह नींद से जग जाता है। साथ ही ऐसे मरीज के शरीर पर विशेष प्रकार के छिद्र हो जाते हैं, ग्रंथिकाएं उभर आती हैं और फुंसियां हो जाती हैं। ये सब लक्षण इस बात की पुष्टि करते हैं कि मरीज स्केबीज से पीड़ित है। कभी-कभी लगातार खरोंचते रहने से और पर्याप्त शारीरिक स्वच्छता न रखने के कारण ज्वर उत्पन्न करने वाले जीवाणुओं के फलस्वरूप द्वितीयक संक्रमण हो सकता है।

यदि किसी व्यक्ति के शरीर में स्केबीजजन्य छिद्र उपस्थित हैं तब उसके घनिष्ठ संपर्क में आने वाले तथा लैंगिक संपर्क में भागीदार व्यक्तियों की जांच की जानी चाहिए क्योंकि उनके खुजली की शिकायत न करने पर भी उनके शरीर में माइट उपस्थित हो सकते हैं।

## उपचार

स्केबीज के मरीज को सलाह दी जाती है कि वह साबुन लगाकर अपने शरीर को अच्छी तरह रगड़—रगड़ कर साफ करें। शरीर को रगड़ने से वे सब छिद्र खुल जाते हैं जिनमें माइट निवास करते हैं। अगर शरीर को अच्छी तरह रगड़ा नहीं जाता तब माइट त्वचा की सुरक्षित परत के नीचे छिपे रह जाते हैं और अपनी वृद्धि करते रहते हैं।

मरीज के स्नान हेतु ऐसे साबुन उपलब्ध हैं जिनमें टेट्राएथिलथीयूरम जैसे

कुटकीनाशक रसायन मौजूद होते हैं परंतु इन साबुनों से केवल नहा लेना ही स्केबीज के उपचार हेतु पर्याप्त नहीं है। स्नान के बाद गर्दन के नीचे पूरे शरीर पर 25 प्रतिशत बैंजिल बैंजोएट या 10 प्रतिशत सल्फर मलहम लगाना चाहिए। मलहम लगाते समय यह ध्यान रखना जरूरी है कि शरीर का कोई भी अंग बिना मलहम के न बचें। अगर मरीज घर पर उपचार कर रहा है तब शरीर के ऐसे भाग जहां रोगी का हाथ न पहुंचता हो, मलहम लगाने में किसी अन्य व्यक्ति की मदद ले सकता है।

मरीज को 24 घंटे बाद एक बार फिर से मलहम लगानी जरूरी है। उसे यह सलाह दी जाती है कि वह मलहम लगाने के तीसरे दिन स्नान करे और अपने कच्छे-बनियान वगैरह नीचे पहनने के कपड़े बदले और उन्हें साबुन से धोए।

उक्त उपचार के विकल्प के रूप में पूरे शरीर पर एक प्रतिशत गामा बैंजीन हेक्साक्लोराइड या 0.5 प्रतिशत मालथिओन लोशन अथवा मलहम लगायी जा सकती है। इनका एक बार ही लगाना पर्याप्त होता है और मरीज 24 घंटे बाद पानी और साबुन से नहा सकता है तथा अपने कपड़े बदल सकता है। अगर ऐसा करने पर खुजली नहीं मिटती तब इस उपचार को एक सप्ताह बाद फिर से करना चाहिए।

जहां तक गर्भवती स्त्रियों और बच्चों का प्रश्न है, गामा बैंजीन हेक्साक्लोराइड इस्तेमाल नहीं करना चाहिए क्योंकि वह शरीर में वसा में भंडारित हो जाता है और स्तन दूध में आ सकता है। छोटे बच्चों के शरीर में उसका अत्यधिक अवशोषण उन्हें हानि पहुंचा सकता है।

स्केबीज का उपचार करते समय चिकित्सक के लिए मरीजों को यह समझाना जरूरी है कि त्वचा की सतह पर उपस्थित सब माइटों को नष्ट कर देने भर से उनकी खुजली पूरी तरह समाप्त नहीं भी हो सकती है। उसके बाद भी उन्हें खुजली लग सकती है। ऐसा होने का कारण उन टॉक्सिनों के प्रति, जो जीवित/मृत माइटों ने मुक्त कर दीं हैं अथवा उनके प्रोटीनी प्रदार्थ के प्रति, मरीज की त्वचा की संवेदनशीलता है। इसके अतिरिक्त द्वितीयक संक्रमण का भी, साथ ही साथ समुचित उपचार किया जाना चाहिए।

संक्रमित व्यक्ति के यौन संपर्क में आने वाले व्यक्तियों को भी स्केबीज

या किसी अन्य यौन संचरित रोग के लिए जांच की जानी चाहिए। उनके खुजली की शिकायत न करने पर भी स्केबीज के लिए उनका इलाज करना चाहिए। साथ ही उन्हें यह भी समझाना चाहिए कि उनके शरीर में भी स्केबीज उपस्थित हो सकता है। उस समय जब स्केबीज गैर-यौन संपर्क तरीके से संचरित हुई हो तब आवश्यकतानुसार मरीज के परिवार के अन्य सदस्यों, बच्चों तथा उनके घनिष्ठ संपर्क में आने वाले अन्य व्यक्तियों की जांच भी की जानी चाहिए और उनका इलाज किया जाना चाहिए।

### गुदा – जनन/रतिज अधिमांस

#### उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव

वायरसजन्य यौन संचरित रोगों में सबसे अधिक होने वाले रोग गुदा-जनन अधिमांस (एनो-जेनीटल वार्ट), का कारण है अनियमित और असुरक्षित यौन संपर्क। “रतिज अधिमांस” नाम यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि ये अधिमांस यौन संपर्कों द्वारा संचरित होते हैं। अपनी विभिन्न आकृतियों और आकार के कारण ये अधिमांस आमतौर से अंजीर अधिमांस (फिंग वार्ट) कहलाते हैं। उनको उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव ह्यूमन पैपीलोमा वायरस (एच.पी. वी.) के नाम से पुकारे जाते हैं। इस वायरस की अनेक किस्में कैंसर भी उत्पन्न कर सकती हैं। अधिमांस विक्षितियां पीड़ित व्यक्ति के साथ यौन संपर्क करने के छह सप्ताह से लेकर नौ मास बाद तक प्रगट होती हैं। उनकी औसतन ऊष्मायन अवधि दो से चार मास तक होती है।

#### लक्षण

जननांगों पर उभरने वाले अधिमांस मुलायम, मांस के रंग के फूलगोभी या अंजीर के सदृश्य आकृतियों के होते हैं। कभी-कभी वे सपाट हो सकते हैं और व्रण सदृश्य दिख सकते हैं। आमतौर से एक साथ बड़ी संख्या में प्रगट होने वाले अधिमांस नमी और गर्भ के फलस्वरूप जननांगों पर तेजी से बढ़ते हैं। पुरुषों में ये शिश्न के अग्रभाग, वृषणकोष और मूत्रमार्ग के मुख पर होते हैं। स्त्रियों में वे भग, जन्मनाल और गर्भाशय के मुख पर देखे जा सकते हैं।

गुदा—मैथुन या मुख—मैथुन करने वाले स्त्री और पुरुष, दोनों, में ये गुदा के आसपास, मुह या जीभ पर भी उभर सकते हैं। कुछ हालातों में, विशेष रूप से स्त्रियों में, अधिमांस स्पष्ट रूप से नहीं उभरते परंतु उन्हें झुलसन और खुजली की शिकायत हो सकती है। इन हालातों में अधिमांस के निदान की पुष्टि विशेष तकनीकों यथा सतह को 2 प्रतिशत ऐसीटिक एसिड से पेंट करके उसकी जांच विशेष यंत्र, कोलपास्कोप से अत्यधिक आवर्धित रूप में देखकर कर सकते हैं। (चित्र 25)

## प्रबंध और उपचार

ह्यूमन पैपीलोमा वायरस के संक्रमण से बचने का सर्वोत्तम तरीका है सुरक्षित यौन क्रिया अर्थात् एक ही वफादार सहभागी के साथ यौन संपर्क या अनेक व्यक्तियों के साथ यौन संपर्क रखने वाले व्यक्ति द्वारा कंडोम का उपयोग। वैसे ये शत-प्रतिशत सुरक्षित तरीके नहीं हैं।

अधिमांस विक्षितियों के परंपरागत उपचार में चिकित्सक उन पर कोई पादप रेजीन, घोल के रूप में 25 प्रतिशत पोडोफाइलिन, और 50 प्रतिशत ट्राइक्लोरोऐसीटिक एसिड जैसे दाहक पदार्थ लगाते हैं। विशेष रूप से बड़े और उक्त उपचार से अप्रभावित अधिमांसों के उपचार के लिए शल्य क्रिया करनी पड़ती है।

हिमशल्य क्रिया (क्रायोसर्जरी) में अधिमांसों को उसकी आसपास की त्वचा के साथ हिमशल्य द्वारा जला दिया जाता है जिससे वे स्वयं ही गिर पड़ें। छोटे अधिमांसों को जलाने के लिए विद्युत स्पार्कों का उपयोग किया जाता है। इस्तेमाल की जाने वाली नई उपचार विधियों में लेजर चिकित्सा और कुछ अंतःविक्षिति औषधियों के इंजेक्शन शामिल हैं।

अधिमांसों को दूर करने के लिए कौन सा उपचार किया जाना चाहिए इसका निर्णय चिकित्सक पर छोड़ देना चाहिए। स्वयं रोगी द्वारा किसी उपचार विधि, यहां तक कि दाहक रसायनों का उपयोग भी नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि जरा सी असावधानी से अधिमांसों के आसपास की नाजुक त्वचा को हानि पहुँच सकती है।



चित्र 24 : स्कैबीज़ : जननांगी विश्वासि



चित्र 25 : जननांगी अधिमांस

## मोलस्कम कोंटाजिओसम

**उत्पादक सूक्ष्मजीव :** मोलस्कम कोंटाजिओसम एक डी.एन.ए. पॉक्स वायरस द्वारा उत्पन्न होता है। यहां रोग और उसे उत्पन्न करने वाले वायरस के नाम एक ही है। वास्तव में यह एक वायरसजन्य सांसार्गिक दशा है जो संक्रमित व्यक्ति से शारीरिक संपर्क अथवा उसके कपड़ों तौलिया आदि के, इस्तेमाल से फैलती है। छोटे बच्चों और वयस्कों में यह आमतौर से संक्रमित व्यक्ति के साथ खेलने आदि से, गैर-यौन विधि से फैलती है। यौन रूप से सक्रिय व्यक्तियों में, विशेष रूप से उन व्यक्तियों में जो अनेक व्यक्तियों से यौन संपर्क रखते हैं, यह रोग जननांग क्षेत्र में मोती धवल, मटर सदृश्य उभरी हुई आकृति और क्षुद्र विक्षति के, जिसके केन्द्र में गर्तिका होती है, के रूप में प्रगट होता है। यह आकृति/विक्षति शिश्न के कांड, वृषण कोश, भग, गुदा के आसपास, उदर के निचले भाग और जांधों के अंदर की ओर प्रगट होती है। यह इतनी स्पष्ट और विशिष्ट होती है कि चिकित्सक इसका आसानी से निदान कर लेते हैं। यदि यह संदेह हो कि यह रोग यौन संपर्क से अर्जित किया गया है, तब यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि रोगी कुछ अन्य यौन संचरित रोगों, यथा सिफिलिस या सुजाक जैसे रोगों से पीड़ित नहीं है और उसकी जांच मोलस्कम कोंटेजिओसम के अतिरिक्त अन्य यौन संचरित रोगों की उपस्थिति ज्ञात करने के लिए भी की जानी चाहिए। (चित्र-26)



चित्र 26 : मोलस्कम कान्टाजिओसम

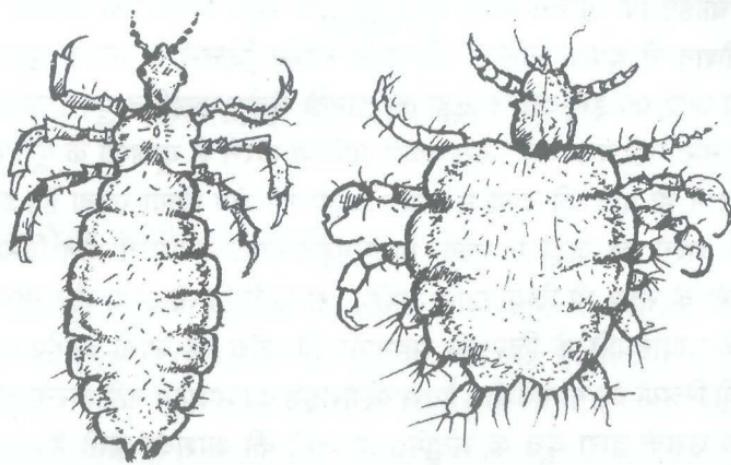
मोलस्कम कोंटेजिओसम द्वारा उत्पन्न विक्षितियों का उपचार आसान है। इसके लिए चिकित्सक एक नुकीली सुई की मदद से विक्षिति में से वायरसी पदार्थ को निकाल कर एक नुकीले, डंडी पर बने फाहे से विक्षिति के मध्य भाग में फिनॉल लगाते हैं। ऐसी विधि को कई बार दुहराना जरूरी होता है। साथ ही यौन क्रिया के सहभागी की भी जांच की जानी जरूरी होती है और अगर उसे भी संक्रमित पाया जाता है तब उसका भी साथ-साथ इलाज किया जाना जरूरी है।

### जघन यूकाओं (यूकाओं) का ग्रसन

जघन यूकाओं द्वारा होने वाला ग्रसन जघन यूका रोग, पडीकुलोसिस प्युबिस कहलाता है और थिरस प्युबिस द्वारा उत्पन्न होता है। यूका देह या सिर यूका से अपेक्षाकृत छोटी और स्थूल होती है। और इसलिए यह “केकड़ा यूका” (क्रैब लाउस) भी कहलाती है। यह काफी छोटी 1-2 मिमी बड़ी होती है और इसके शरीर के बायें और दायें दोनों और तीन-तीन पैर होते हैं। वयस्क कीड़ा जघन बालों से चिपका रहता है।

दैसे ये जुए शरीर के अन्य अंगों के बालों, जैसे जाधों के अंदर की ओर के बालों, बगल के बालों, पलकों के बालों पर भी आक्रमण कर सकता है। यह खून चूसने वाला कीड़ा है। अगर इससे संक्रमित बाल की जड़ को ध्यान से देखा जाता है तब वहां धुंधले कत्थर्ड धब्बे दिखायी देते हैं। ये धब्बे वे अंडे होते हैं जो मादा बालों की जड़ों में देती है। ये अंडे ‘निट’ कहलाते हैं और इनसे सात दिनों बाद कीड़े निकल आते हैं। ये कीड़े एक व्यक्ति से दूसरे को घनिष्ठ शारीरिक संपर्क, यौन अथवा अन्य प्रकार के संपर्क से पहुंचते हैं। परंतु देह यूका की भाँति ये रोगी की चादर अथवा उसके कपड़ों की माध्यम से संचरित नहीं होते। (चित्र 27)

जघन यूकाओं की उपस्थिति खुजली और क्षोभ उत्पन्न करती है। इसकी वजह से कभी-कभी त्वचा की सतह पर धुंधले कत्थर्ड धब्बे युक्त निशान या खरोंचें पड़ जाती हैं। अनेक बार संक्रमित व्यक्ति इन यूकाओं की उपस्थिति से अनभिज्ञ रहता है। जब उसे अपने शरीर पर वयस्क यूकाओं अथवा उनके



शारीरिक जूँ

जघन जूँ

चित्र 27 : शारीरिक जूँ और जघन जूँ

अंडों की उपस्थिति का पता चलता है तब उसे धक्का सा लगता है और वह दुखी हो जाता है। यौन संर्पकों के दौरान होने वाले संक्रमण के संचरण के उपचार हेतु मरीज के अन्य यौन संचरित रोगों से पीड़ित होने के बारे में भी पूर्ण विवरण एकत्रित किया जाना चाहिए। इसी प्रकार संक्रमित व्यक्ति के यौन सहभागी व्यक्ति की भी अन्य यौन संचरित रोगों से पीड़ित होने की संभावनाओं के बारे में पूरी जांच की जानी जरूरी है। साथ ही सिफिलिस की संभावना के लिए रक्त परीक्षण भी किया जाना चाहिए।

### उपचार

मरीज को सलाह दी जाती है कि वह अपने अंगों को स्वच्छ और साफ रखे। साथ ही उसे ऐसा करने हेतु अपने सहभागी पर भी जोर डालने की भी सलाह दी जाती है।

यूकाओं को नष्ट करने के लिए उन सब अंगों पर जिन पर बाल होते हैं एक प्रतिशत गामा बैंजीन हेक्साक्लोरोइड लोशन की इस प्रकार मालिश की

जानी चाहिए कि लोशन बालों की जड़ों तक पहुँच जाए। एक सप्ताह बाद इस लोशन से दुबारा मालिश की जानी चाहिए जिससे वे वयस्क यूका भी नष्ट हो जाएं जो इस दौरान अंडों को, उनके कठोर काइटिन युक्त खोल के कारण नष्ट नहीं कर पाती। इस प्रकार मालिश करने से यूकाओं के पूरी तरह से नष्ट न हो पाने की दशा में जघन बालों को शेव किया जाता है। इससे लोशन बालों की जड़ों में भली-भांति पहुँच जाता है। ऐसा यौन क्रिया में सहभागी के साथ भी किया जाना चाहिए। साथ ही किसी अन्य यौन संचरित रोग की उपस्थिति के लिए भी सहभागी की जाँच की जानी चाहिए। परंतु गर्भवती स्त्रियों को गामाबैंजीन हेक्साक्लोराइड का उपयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि उसके द्वारा दूध के संदूषित हो जाने की आशंका होती है।

● ● ●

## अध्याय छह

### एच.आई.वी. रोग और एड्स

#### एड्स पैदा करने वाला वायरस

एक ऐसे क्षुद्रवायरस, जिसका 1983 तक अस्तित्व भी नहीं था, ने आज विश्व भर में एक ऐसा आंतक फैला रखा है जैसा मध्य युग में प्लेग ने फैलाया था। इस वायरस द्वारा उत्पन्न रोग के लिए लोगों ने 'प्रेम प्लेग' नाम गढ़ा है क्योंकि इसने भी उतनी ही बड़ी संख्या में लोगों को हताहत किया जितनी संख्या में कभी प्लेग ने किया था और लोगों का यह विचार था कि वह वायरस यौन क्रियाओं द्वारा फैलता है। बाद में रोग की प्रकृति के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त होने पर पता लगा कि यह वायरस रोगक्षमहीनता उत्पन्न कर देता है जिसके फलस्वरूप इस वायरस को "मानव रोगक्षमहीनता वायरस" (हयूमन इम्यूनोडिफिशिएंसी वायरस) नाम दिया गया। (मानव रोगक्षमहीनता वायरस या हयूमन इम्यूनोडिफिशिएंसी वायरस काफी बड़ा नाम है। इसलिए आमतौर से इसे इसके नाम के प्रथम अक्षरों के नाम पर ही एच.आई.वी. पुकारा जाता है। हम भी इस वायरस को एच.आई.वी. के नाम से ही पुकारेंगे।)

मानव शरीर पर इस वायरस का आक्रमण यौन क्रियाओं के माध्यम से, या संक्रमित व्यक्ति का रक्त प्राप्त करने से, अथवा नशेबाज लोगों के नशा लेने के लिए सांझी सुई का इस्तेमाल करने से अथवा किसी दुर्घटनावश वायरस के शरीर में प्रविष्ट कर जाने से होता है।

एच.आई.वी. वायरस चाहे जिस भी माध्यम से शरीर में पहुँचे, वहां पहुंच कर वह तेजी से अपनी वंशवृद्धि करने लगता है और उन कोशिकाओं को हानि पहुंचाने लगता है, जो हानिकारी सूक्ष्मजीवों के आक्रमण से शरीर की रक्षा करती हैं। आरंभिक संक्रमण अवधि में, जो 10 से 15 वर्ष जैसी लंबी अवधि तक की भी हो सकती है संक्रमित व्यक्ति, ऊपरी तौर पर एकदम स्वस्थ दिखायी देता है। यद्यपि संक्रमित व्यक्ति पर कोई बाह्य रोग लक्षण प्रगट नहीं होते पर उसकी कोशिकाओं में वायरस मौजूद रहते हैं। इस प्रकार व्यक्ति

यौन क्रियाओं द्वारा अथवा अपना रक्तदान करके अथवा अन्य तरीकों से स्वस्थ व्यक्तियों को संक्रमित करता है। रोग का यह दौर “एच.आई.वी. रोग” कहलाता है।

उन “सहायक-टी” कोशिकाओं का जो संक्रमण का मुकाबला करती हैं और शरीर की प्रतिरक्षा व्यवस्था को संबल प्रदान करती हैं का बड़े पैमाने पर विनाश रोगक्षमहीनता उत्पन्न करता है।

रोगक्षमहीनता तीन प्रकार की होती है :

- (1) आनुवंशिक अथवा पीढ़ी-दर-पीढ़ी, चलने वाली जो दोषपूर्ण ‘जीनों’ के रूप में माता-पिता से संतानों को मिलती है।
- (2) प्रेरित रोगक्षमहीनता, ऐसी रोगक्षमहीनता है जो विशेष औषधियों (रोगक्षमता दबाने वाली औषधियों) के शरीर में प्रविष्ट कराने से उत्पन्न होती है। ये औषधियां शरीर के स्वरोगक्षमता (आटोइम्यून) उत्पन्न करने वाले रोगों में अथवा अंग प्रतिरोपण के दौरान दी जाती हैं जिससे शरीर किसी अन्य व्यक्ति के अंग को अस्वीकार न करें।
- (3) एच.आई.वी. वायरस द्वारा उत्पन्न संक्रमण के फलस्वरूप अर्जित रोगक्षमहीनता।

एच.आई.वी. से संक्रमित व्यक्ति के लंबे समय तक बाह्य-लक्षणों से मुक्त रहने के बाद, उसके शरीर की प्रतिरोध क्षमता के क्षीण पड़ जाने के कारण, रोग के कुछ लक्षण प्रगट होने लगते हैं। विचित्र बात यह है कि ये लक्षण एक-दूसरे से संबंधित नहीं होते। साथ ही, न वे शरीर के किसी एक अंग-विशेष अथवा अंगों के किसी तंत्र-विशेष तक ही सीमित रहते हैं वरन् शरीर के विभिन्न तंत्रों को लिप्त कर लेते हैं। इसीलिए वे “संलक्षण” कहलाते हैं। इस कारण ही एच.आई.वी. संक्रमण की बाद की लाक्षणिक (किलनिकल) अवस्था “अर्जित रोगक्षमहीनता संलक्षण (एकवायर्ड इम्यूनोडिफिशिएंशी सिंड्रोम) कहलाती है। (अर्जित रोगक्षमहीनता संलक्षण बड़ा और अटपटा नाम है। इसलिए इसे हम “एड्स” ही कहेंगे। वैसे यह नाम आजकल अत्यधिक प्रचलित है)। एड्स ही रोग का पूर्ण विकसित और अंतिम रूप है। जब यह वायरस शरीर के विभिन्न तंत्रों पर पूरी तरह काबू पा लेता है तब शरीर की प्रतिरक्षा व्यवस्था चरमरा जाती है और कोई भी संक्रमण अथवा कैंसर जैसी

व्याधि शरीर पर हावी हो जाती है और उसे पूरी तरह ग्रस्त कर लेती है, और इन सबका अंतिम परिणाम होता है रोगी की निश्चित मृत्यु।

## ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

वर्ष 1981 में चिकित्सकों को यह पता चला कि संयुक्त राज्य अमेरिका के लॉस एंजिलस क्षेत्र में न्यूमोसिसटिस कोरीनीई के कारण उत्पन्न निमोनिया जैसे वक्ष संक्रमण तथा त्वचा कैंसर जैसे रोगों से पीड़ित लोगों की संख्या में असाधारण वृद्धि हो रही है। विचित्र बात यह थी कि इन संक्रमणों से पीड़ित सब व्यक्ति जवान और समलिंगी यौन क्रियाओं में लिप्त रहने वाले व्यक्ति थे। उसके एकदम बाद स्पेन और पुर्तगाल में भी नशेबाज और समलिंगी, दोनों प्रकार के, व्यक्ति ऐसी व्याधियों से बड़ी संख्या में ग्रस्त पाए गए। परीक्षणों में इन लोगों के शरीर में संक्रमण का मुकाबला करने वाली कोशिकाएं यानि सहायक लिम्फोसाइटों की कमी पायी गई। इस कमी के फलस्वरूप ये रोगी ऐसे क्षुद्र संक्रमणों से भी ग्रस्त होते पाए गए जो सामान्य व्यक्तियों को ग्रस्त नहीं करते। दो वर्ष की बहस और गहन प्रयोगशाला अध्ययनों के बाद इन सबके लिए जिम्मेदार कारक को बिलगाने में सफलता मिली। यह कारक एक ऐसे वायरस के रूप में पाया गया जिसके बारे में उस समय तक वैज्ञानिकों को कुछ भी मालूम नहीं था। मजेदार बात यह है कि इसे वैज्ञानिकों के दो दलों ने, एक ही समय, पर एक-दूसरे से अनजानें में स्वतंत्र रूप से, बिलगाने में सफलता प्राप्त की थी। इनमें से एक दल फ्रांस के लुई पास्तुर इंस्टीट्यूट के लुक मांतेनर के नेतृत्व में और दूसरा संयुक्त राज्य अमेरिका के नेशनल इंस्टीट्यूट आफ हैल्थ में राबर्ट गालो के नेतृत्व में शोध कर रहा था।

इस वायरस के बारे में वैज्ञानिकों को एक बात समझ में नहीं आ रही थी कि वह विकसित किस प्रकार हुआ है। क्या वह वर्तमान हानिरहित वायरसों के उत्परिवर्तन के फलस्वरूप विकसित हुआ है अथवा एकदम नया वायरस है।

इसी दौरान एक और तथ्य का पता चला कि मध्य अफ्रीका के देशों में स्थानीय रूप से फैले संक्रामक रोगों, यथा क्षय रोग, से लोगों की इतनी बड़ी संख्या में मौतें हो रही थीं कि पूरे गांव के गांव वीरान हो रहे थे। इस दुखद

घटना ने वैज्ञानिकों को गंभीर खोजबीन करने के लिए मजबूर कर दिया। इस खोजबीन के दौरान उन्हें पता चला कि वहां भी यह वायरस लोगों को बहुत बड़ी संख्या में ग्रस्त कर चुका था।

पिछले कुछ वर्षों में एच.आई.वी. संक्रमण पूरे विश्व में फैल चुका है और अब एशियाई देशों में बड़े पैमाने पर फैल रहा है (चित्र 28)। आज हमें मालूम है कि विश्व में एच.आई.वी. संक्रमण से पीड़ित कुल व्यक्तियों में 80 प्रतिशत से भी अधिक व्यक्ति विकासशील देशों के ही निवासी हैं और अफ्रीकी, दक्षिण और दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों में उनकी संख्या सबसे अधिक है। दक्षिण पूर्वी एशिया में भारत, थाईलैंड और म्यांमार में ही 1,53006 एड्स केस और 4985,000 अनुमानित एच.आई.वी. एवं एड्स केस आंके गए हैं।

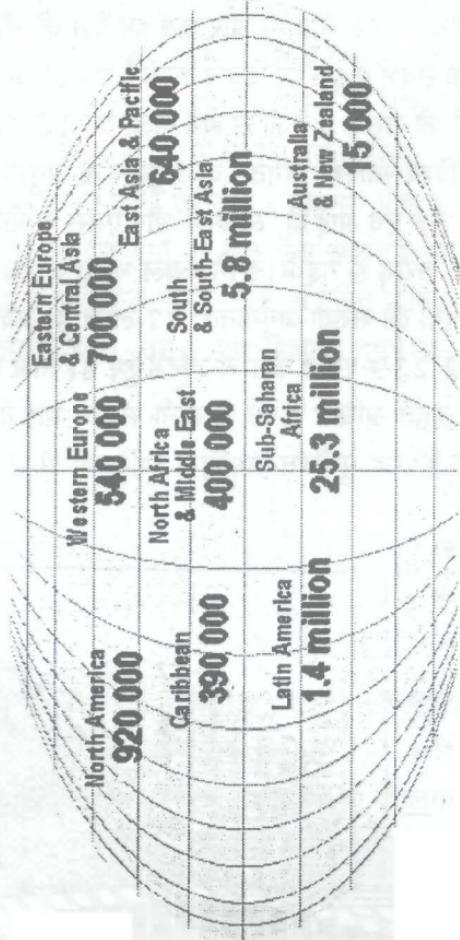
(सारणी-2)

**सारणी -2 रिपोर्ट किए गए एड्स केस और एच.आई.वी./एड्स जन संख्या  
(दक्षिण पूर्वी एशिया भूमाग, अक्टूबर, 2000 तक के आंकड़े)**

देश	रिपोर्ट किए गए एड्स केस	एच.आई.वी./एड्स की अनुमानित जनसंख्या	प्रति 1000,000
बांगला देश	17	13000	10
भूटान	1	<100	<5
डी.पी.आर. कोरिया	0	<100	<1
भारत	12,239	37,00,000	370
इंडोनेशिया	411	52,000	25
मालद्वीप	5	<100	<50
म्यांमार	3817	5,30,000	1176
नेपाल	383	34,000	145
श्रीलंका	116	7,500	40
थाईलैंड	135,950	7,55,000	1240
<b>कुल</b>	<b>1,52,939</b>	<b>~50,91,800</b>	<b>~338</b>

स्रोत : यू.एन एड्स रिपोर्ट : विश्वस्तरीय एच.आई.वी./एड्स महामारी 1 जून 2000

# Adults and children estimated to be living with HIV/AIDS as of end 2000



**Total: 36.1 million**



નિર્ણય  
નિર્ણય  
નિર્ણય

HIV/AIDS : 1 Feb. 2001 2666

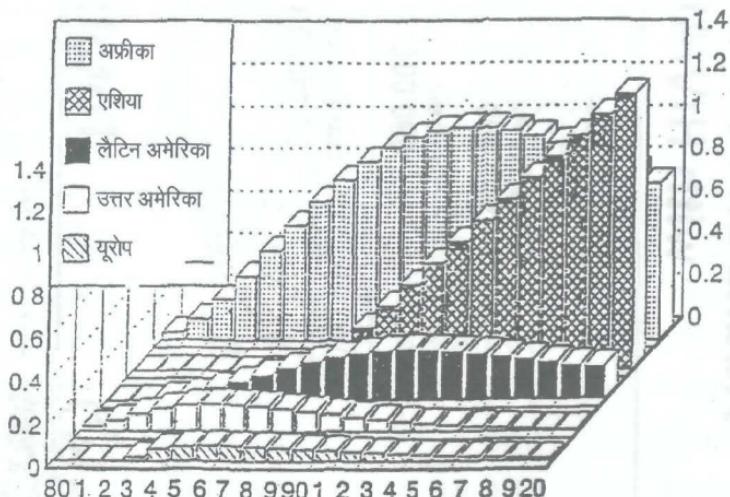


નિર્ણય  
નિર્ણય  
નિર્ણય

પિતૃ 28 : એચ.આઈ.વી. રોગોं કા વિશવિદ્યાળી ફેલાવ

## भारत में स्थिति

चिंता की बात यह है कि भारत में एच.आई.वी. बहुत तेजी से फैल रहा है। पिछले सात वर्षों में अकेले मुंबई शहर में एच.आई.वी. संक्रमण से पीड़ित वैश्याओं की संख्या में 20 गुनी वृद्धि हुई है। एच.आई.वी. के फैलने की यह दर विश्व में कदाचित सबसे तीव्र है। और जब हम देश की सौ करोड़ से भी अधिक आबादी के संदर्भ में इस पर विचार करते हैं तब एच.आई.वी. संक्रमण से ग्रस्त व्यक्तियों की संख्या में तेजी से होने वाली यह वृद्धि और भी भयकर लगने लगती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुमान के अनुसार विश्व में वर्ष 2000 के अंत तक एच.आई.वी. संक्रमण और एड्स से पीड़ित व्यक्तियों की संख्या 3.61 करोड़ हो गई है। इनमें केवल भारत के एच.आई.वी. और एड्स संक्रमित लोगों की संख्या अनुमानतः 37 लाख है। अक्टूबर 2000 तक भारत में 12,239 एड्स केस रजिस्टर्ड हुए हैं। साथ ही देश में ऐसे लोगों की संख्या बहुत अधिक है जो आसानी से एच.आई.वी. संक्रमण के शिकार हो सकते हैं। यह मुसीबत समलिंगी व्यक्तियों से लेकर इतरलिंगी



चित्र 29 : विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा विभिन्न देशों में एच.आई.वी. संक्रमित मरीजों का अनुमान

(विपरीत लिंगी व्यक्ति से यौन संपर्क रखने वाले) व्यक्तियों तक, सांझी सुई से नशा करने वाले नशेबाजों और संक्रमित गर्भवती महिलाओं तथा उनके अजन्मे या नवजात शिशुओं तक फैल गई है। इससे उन नौजवानों के लिए जो आर्थिक दृष्टि से समाज के सबसे महत्वपूर्ण अंग हैं, के लिए एक बड़ा खतरा पैदा हो गया है। दरअसल उनका पूरा आस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है। देश की दयनीय सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों के बीच रह रहे व्यक्तियों के संदर्भ में यह स्थिति और भी गंभीर हो गई है। इस बारे में रोचक तथ्य यह है कि अपने उद्गम के क्षेत्र में एड्स नियंत्रण में आ रहा है और वहां उससे पीड़ित मरीजों की संख्या घट भी रही है परंतु एशिया और अफ्रीका के विकासशील देशों में उनकी संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है। (चित्र 29)

भारत में एच.आई.वी. एड्स के बारे में सबसे पहले चिंता 1986 में प्रकट की गई थी। उसके बाद भारत सरकार ने वर्ष 1990 में राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन स्थापित किया जिसे अतिरिक्त सचिव स्तर के अधिकारी के अंतर्गत रखा गया। कालांतर में इस संगठन ने चिकित्सा विज्ञान कालेजों में 62 निगरानी केन्द्र और सब बड़े शहरों में 150 क्षेत्रीय रक्त परीक्षण केन्द्र स्थापित किए। इन केन्द्रों की स्थापना का उद्देश्य था देश भर में जरूरतमंद लोगों को एच.आई.वी. रहित रक्त उपलब्ध कराना।

### एच.आई.वी. वायरस

वायरस मानव जाति को ज्ञात सबसे सूक्ष्म जीवाणु हैं और उनमें जीवित प्राणियों के शरीर से बाहर भी, जीवित रहने की क्षमता होती है। इसका कारण यह है कि उनमें केवल एक ही किस्म का न्यूकिलक एसिड – डी.एन.ए. अथवा आर.एन.ए.–मौजूद होता है जबकि अन्य जातियों के जीवों में दोनों प्रकार के न्यूकिलक एसिड मौजूद रहते हैं। इस प्रकार वायरस जन्मजात परजीवी होते हैं। वे अपना पोषण जीवित कोशिकाओं से प्राप्त करते हैं और अपनी वंश वृद्धि के लिए उन्हें किसी परपोषी की जरूरत होती है।

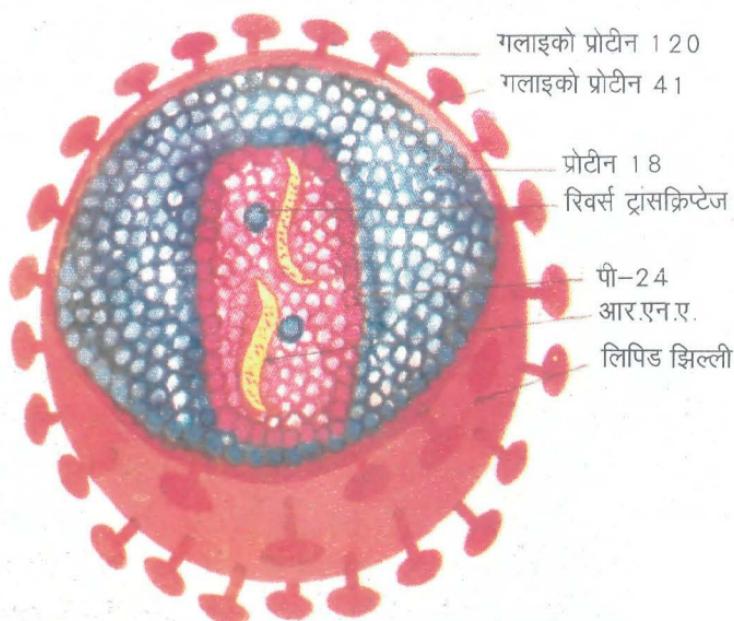
एच.आई.वी. रेट्रोविरिडेई कुल के वायरस हैं। “रेट्रो” शब्द का अर्थ है “पश्चगामी”。 इस प्रकार “रेट्रोवायरस” का अर्थ है “वे वायरस जिनके शरीर में केवल आर.एन.ए. ही मौजूद होता है और जो एक विशिष्ट एंजाइम, “रिवर्स

ट्रांसक्रिप्टेज”, की मदद से आरएनए. को डीएनए. में बदल लेते हैं जबकि अन्य जीवों में डीएनए. ही आरएनए. का निर्माण करता है।” एच.आई.वी. वायरस आकार में गोल होता है जिस पर वसीय पदार्थ की दो तहों से बनी एक झिल्ली चढ़ी रहती है। (चित्र 30) इस झिल्ली में प्रोटीन और शर्करा के कुछ अणु छाते की आकृति में फंसे रहते हैं। ये रचनाएं ही वायरस को संक्रमित व्यक्ति की कोशिकाओं से मजबूती के साथ जुड़े रहने में मदद देती है। इस वायरस के मध्य भाग में आरएनए. और रिवर्स ट्रांसक्रिप्टेज एंजाइम स्थित होते हैं।

### एच.आई.वी. संक्रमण के फैलने के तरीके

यह वायरस शरीर में तीन मुख्य तरीकों से पहुंचता है :— (चित्र 31)

(1) यौन क्रियाओं द्वारा — अधिकांश हालातों में वायरस यौन क्रियाओं द्वारा ही स्वस्थ व्यक्तियों, चाहे वे समलिंगी हों या इतरलिंगी, के शरीर में पहुंचते हैं। हमारे देश में मुख्य रूप से इतरलिंगी यौन क्रियाओं द्वारा ही, एच.आई.वी. संक्रमण फैला है।



चित्र 30 : एच.आई.वी. वायरस

- (2) रक्ताधान और अंतशिरा तरीके से नशा करना :— एच.आई.वी. संक्रमित रक्त तथा रक्त उत्पाद लेने से और संक्रमित अथवा भली प्रकार निजीमंत न की गई सूई, सिरिंज और अन्य उपस्करों के इस्तेमाल से भी स्वस्थ व्यक्ति संक्रमित हो सकता है।
- (3) मां से नवजात शिशु को — उस गर्भवती स्त्री से भी, जो एच.आई.वी. संक्रमण से ग्रस्त हो, उसके गर्भस्थ शिशु को अथवा नवजात शिशु को संक्रमण हो सकता है। यदि संक्रमित मां शिशु को जन्म के बाद कुछ महीनों तक अपना दूध पिलाती है तब भी शिशु संक्रमित हो सकता है। भारत में उक्त तीनों तरीकों से संक्रमण फैल रहा है।

इस संदर्भ में यहां इस बात पर बल देना अत्यंत महत्वपूर्ण है कि एच.आई.वी. की डोंगों द्वारा, नहीं फैलता और न ही संक्रमित व्यक्ति के साथ भोजन करने, उसके कपड़े पहनने, उससे हाथ मिलाने, चूमने या आलिंगन करने से फैलता है।

## रोग का प्राकृतिक इतिहास—वृत्त

इसके अंतर्गत यह वर्णन किया जाता है कि वायरस किस प्रकार स्वस्थ व्यक्ति के शरीर में पहुंचता है, संक्रमण के लक्षण उत्पन्न करता है और रोगी के भाग्य का फैसला करता है। एच. आई.वी. का संक्रमण विभिन्न अवस्थाओं में भिन्न-भिन्न प्रकार के लक्षण उपस्थित करता है। संक्रमण फैलने के विभिन्न तरीकों को तीन स्तरों में बांटा जा सकता है :—

- (1) तीव्र संक्रमण का दौर : वायरस के आक्रमण के लगभग तीन से छह सप्ताह बाद, 10 से 15 प्रतिशत व्यक्तियों में तीव्र, फ्लू सदृश्य लक्षण प्रकट होने लगते हैं। इन लक्षणों में ज्वर, गले में खारिश, लसीका पर्वों में सूजन, शरीर में दर्द, जोख़ी में पीड़ आदि शामिल हैं। फ्लू की भाँति ही ये लक्षण लगभग एक सप्ताह तक रहते हैं। उसके बाद उसी भाँति लुप्त भी हो जाते हैं जैसे कि फ्लू में होता है। इसीलिए अक्सर ही इन्हें फ्लू के लक्षण मान लिया जाता है और इन पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। (चित्र 32) कुछ हालातों में ऐसा भी होता है कि ये लक्षण स्पष्ट रूप से प्रकट नहीं होते इसलिए यह बताना

चित्र ३१ : एच.आई.टी. शरीर में कैसे प्रवेश करता है

रक्त आधान से

अपरा से

नशे के इंजेक्शन से

एव आई.वी. के शरीर में  
प्रविष्ट होने के तरीके

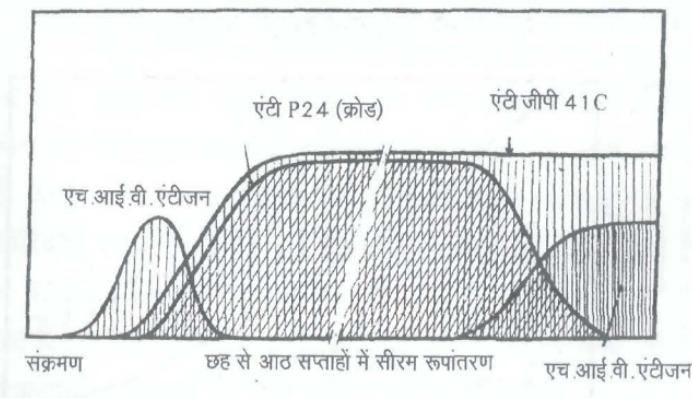
असंयमित यौन संबंधों से

कठिन हो जाता है कि ये लक्षण कितनी अवधि तक रहे थे।

वास्तव में इस अवधि में वायरस के आक्रमण का मुकाबला करने के लिए शरीर की प्रतिरक्षा व्यवस्था स्वयं को तैयार कर लेती है। वायरस के प्रसार को रोकने के लिए यह व्यवस्था वे पदार्थ उत्पन्न करती है जिन्हें “एन्टीबॉडी” कहा जाता है। इस अवधि तक वायरस को साधारण प्रयोगशाला परीक्षणों में पहचानना बहुत कठिन होता है। इसीलिए इस अवधि को “झरोखा अवधि” (विंडो पीरियड) भी कहा जाता है।

(2) अलक्षणी दौर : संक्रमण की इस लंबी अवधि के दौरान मरीज स्वस्थ दिखता है। उसके शरीर पर रोग के कोई बाह्य लक्षण प्रगट नहीं होते। परंतु वायरसों के वाहक होने के कारण वह असुरक्षित यौन क्रिया द्वारा या अपना रक्तदान कर अथवा नशेबाजों के साथ एक ही सुई का उपयोग करके अन्य स्वस्थ व्यक्तियों को संक्रमित अवश्य कर सकता है।

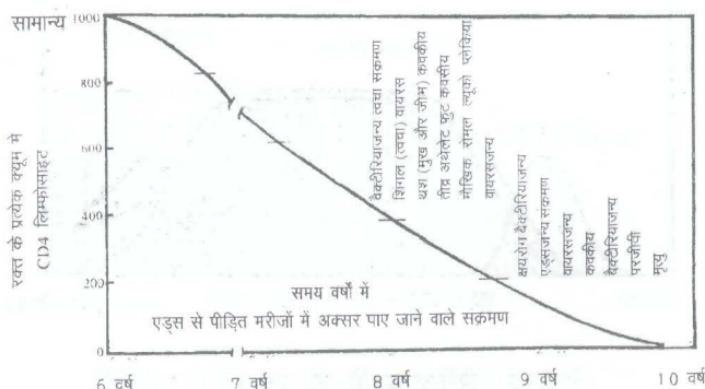
इस दौर में कुछ रोगियों के लसीका पर्वों में सूजन आ जाती है। उनकी उरुसंधियों के अलावा दो अन्य अंगों में लसीका ग्रथियों का आकार बढ़ जाता है। ये आकार में बढ़कर एक सेन्टीमीटर से बड़ी हो जाती हैं। पर इन रक्षात्मक प्रक्रियाओं के अतिरिक्त, इस दौरान, एच.आई.वी. संक्रमण की कोई अन्य प्रक्रिया नहीं होती। चिकित्सक इस दौर को “हठी सामान्यीकृत लसीकापर्व विकृति” (परसिसटेंट जनरलाइज्ड, लिम्फाडेनोपैथी – पी.जी.एल.) कहते हैं।



चित्र 32 : झरोखा अवधि और एच.आई.वी. एंटीबॉडी

परंतु यह दौर अन्य इसी प्रकार की समान परिस्थितियों से भिन्न होता है। इसकी पुष्टि एच.आई.वी. एलीसा या किसी अन्य परीक्षण द्वारा की जानी जरूरी होती है।

(3) आरंभिक लाक्षणिक दौर : इस दौर में संक्रमित व्यक्ति रोग के कुछ लक्षण दर्शाने लगता है। ये लक्षण संक्रमण प्राप्त करने के कुछ वर्षों बाद प्रकट होते हैं और उनसे भी रोग के बारे में केवल शक ही उत्पन्न होता है। इस दौर में कुछ ऐसे वायरस, बैक्टीरिया, परजीवी या कवक के फलस्वरूप उत्पन्न संक्रमणों के लक्षण, जो आमतौर से स्वयं ही कुछ दिनों बाद लुप्त हो जाते हैं अथवा जिनका उपचार आसानी से किया जा सकता है, बहुत उग्र रूप में प्रकट होते हैं। रोगी के शरीर की रोगक्षम व्यवस्था के समाप्त हो जाने के फलस्वरूप ये संक्रमण जीवन के लिए खतरा बन जाते हैं। (चित्र 33) भारत जैसे विकासशील देशों में जहाँ अधिकांश लोगों को पर्याप्त मात्रा में पौष्टिक भोजन नहीं मिल पाता और संक्रामक रोगों से अपेक्षाकृत अधिक व्यक्ति पीड़ित होते रहते हैं, यह जरूरी हो जाता कि मरीज के एड्स से ग्रस्त होने वाले लक्षणों पर भी विचार किया जाए। जब यह पक्का विश्वास हो जाए कि रोगी के शरीर में प्रकट होने वाले लक्षण किसी अन्य संक्रामक रोग के नहीं हैं तब ही रोगी को एड्स से पीड़ित माना जाए। पर इन लक्षणों के प्रकट होने पर यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि रोगी एड्स से ही पीड़ित है। उदाहरण के लिए हर्पीज वायरस से भी मुंह के किनारों (एंगल) पर ढंडे ब्रण (कोल्डसोर) पैदा हो जाते हैं जो कुछ दिनों बाद बिना इलाज के ही लुप्त हो जाते हैं परंतु



चित्र 33 : टी-4 कोशिकाओं की संख्या और एच.आई.वी./एड्स

एच.आई.वी. संक्रमण के कारण उत्पन्न होने वाले ऐसे व्रण जल्दी ही बढ़ जाते हैं और इलाज के बाद भी ठीक नहीं होते।

(4) अंतिम लाक्षणिक दौर : यह एड्स के पूरी तरह विकसित हो जाने का दौर होता है। इस दौर की मुख्य जटिलताएं हैं :

(क) मौका मिलने पर विभिन्न किसी के सूक्ष्मजीवों द्वारा संक्रमण।

दरअसल इस दौर में मरीज की रोगों के प्रति रोधक्षमता इतनी क्षीण हो जाती है कि अनेक ऐसे कारक भी जो सामान्य व्यक्ति को हानि नहीं पहुंचाते, रोगी के शरीर में जानलेवा रोग पैदा कर देते हैं। इस वजह से ही इन संक्रमणों को “मौका परस्त संक्रमण” (अपॉरचुनिस्टिक इन्फेक्शन) कहा जाता है।

(ख) इस दौर में रोगी के क्षय और कैंसर जैसे गंभीर रोगों से पीड़ित होने की संभावनाएं बहुत बढ़ जाती हैं। अगर हम अपने देश का उदाहरण लें तब यहां क्षय रोग से ग्रस्त होने वालों की संख्या पहले ही काफी अधिक है। लोगों में एच.आई.वी. संक्रमण के फैलने से क्षय रोगियों की संख्या में बहुत वृद्धि हो जाएगी। साथ ही इस संक्रमण की मौजूदगी में क्षय रोग एक साथ अनेक अंगों को प्रभावित कर देगा जिससे रोगी को बहुत हानि पहुंचेगी। साथ ही इससे मरने वालों की संख्या में बढ़ोत्तरी आएगी।

शरीर के अन्य अंगों की तुलना में फेफड़े ही, क्षय रोग के जीवाणुओं के अतिरिक्त अन्य रोगों के जीवाणुओं से भी सबसे अधिक संक्रमित होते हैं। फेफड़ों को बहुत अधिक ग्रस्त करने वाले संक्रमण है, क्षय रोग, न्यूमोसिसिटिस कारीनीई, इफ्लूएंजा, स्ट्रेप्टोकोकस और अन्य संक्रमण। इन संक्रमणों के प्रकट होने वाले मुख्य लक्षण हैं : सांस लेने में कठिनाई और कभी-कभी खांसी का आना। ऐसे समय फेफड़ों का एक्स-किरण चिन्ह लेने पर उन पर अपारदर्शी धब्बे दिखायी देते हैं जो संक्रमण के स्पष्ट प्रमाण होते हैं।

शरीर के रोगक्षम तंत्र का दमन हो जाने से एड्स के दौरान कैंसर से ग्रस्त हो जाने की घटनाएं भी बढ़ रही हैं। इसका कारण यह है कि कोशिकाओं के असामान्य विकास पर कोई अंकुश नहीं रह पाता। इन हालातों में सबसे अधिक कापोसी सारकोमा कैंसर होता पाया गया है। जिसमें रोगी की त्वचा

पर लाल गांठें उभर आती हैं। इसके अतिरिक्त लसीका ग्रंथिकाओं को प्रभावित करने वाली रसौलियां भी आमतौर से उभर आती हैं।

एच.आई.वी. संक्रमण से प्रभावित बच्चों अनेक प्रकार के बैकटीरियाई, परजीवी और कवकजन्य संक्रमण भी विकसित हो जाते हैं। जहां तक शिशुओं का प्रश्न है, एच.आई.वी. संक्रमण से ग्रस्त हो जाने पर वे या तो साल भर के होने के पहले ही मर जाते हैं अथवा उनमें बाद में, वयस्कों की भाँति ही एड्स विकसित हो जाता है।

### एच.आई.वी और गर्भावस्था

गर्भवती स्त्रियां एच.आई.वी. संक्रमण से, प्रसूति से पहले, उसके दौरान अथवा उस के बाद ग्रस्त हो सकती हैं। इसलिए इन तीनों अवस्थाओं में पर्याप्त सावधानियां बरतना जरूरी है। इस बारे में यह अब तक स्पष्ट नहीं हो पाया है कि क्या गर्भावस्था एच.आई.वी. संबंधी रोगों को बढ़ावा देती है? कुछ स्त्रियां, जो अलाक्षणिक एच.आई.वी. संक्रमण से ग्रस्त थीं सामान्य शिशुओं को जन्म देती पायी गई हैं। परंतु एच.आई.वी. संक्रमण अथवा एड्स से बुरी तरह ग्रस्त शिशुओं को समय-पूर्व जन्म देने अथवा कोई अन्य विकृति से ग्रस्त होने की आशंका काफी अधिक हो जाती है। ऐसी स्त्रियों में संक्रमण के अपरा के माध्यम से गर्भस्थ शिशु को संक्रमित कर देने की संभावना भी रहती है। यह पाया गया है कि अलाक्षणिक एच.आई.वी. से संक्रमित गर्भवती स्त्रियों के 20 से 40 प्रतिशत गर्भस्थ शिशु संक्रमित हो जाते हैं इसलिए इस प्रकार की स्त्रियों को वास्तविक हालात से अवगत कराना आवश्यक होता है। उन्हें गर्भपात कराने की सलाह दी जानी चाहिए जिससे वे एच.आई.वी. संक्रमण से ग्रस्त शिशु के पैदा करने की संभावना से बच सकें। यदि वे ऐसा न करें तो गर्भवस्था के दौरान उन्हें डाक्टर की सलाह से जिडोविडीन तथा अन्य एच.आई.वी. निरोधी दवाएं दी जाती हैं।

एच.आई.वी. संक्रमित स्त्रियों का प्रसव कराते समय चिकित्सकों को पर्याप्त सावधानी बरतनी चाहिए क्योंकि ऐसी स्त्रियों के साथों में एच.आई.वी. वायरस मौजूद होते हैं। इनमें दस्ताने पहनने, प्रसव के उत्पादों को समुचित

तरीके से ठिकाने लगाना, इस्तेमाल किए जाने वाले सब औजारों को निर्जर्मित करना आदि सावधानियां शामिल हैं। शिशु के जन्म के बाद, शिशु को स्तन पान कराने की विकराल समस्या सामने आती है। यद्यपि विशेष परिस्थितियों में मां के दूध से भी एच.आई.वी. के वायरस शिशु के शरीर में पहुंच जाते हैं परंतु आमतौर से दूध में वायरसों की सांकेता इतनी अधिक नहीं होती है। इसलिए ऐसी स्त्रियों को अपने शिशुओं को स्तनपान कराने अथवा न कराने का निर्णय परामर्श के बाद उनकी आर्थिक अवस्था के अनुसार उन पर छोड़ देना चाहिए।

### बच्चों में एच.आई.वी. संक्रमण

एच.आई.वी. संक्रमित स्त्री जब शिशु को जन्म देती है, तब सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह निश्चित करना होता है कि शिशु भी संक्रमित है अथवा नहीं। इसका कारण यह है कि गर्भावस्था के दौरान, यानी शिशु के जन्म से पूर्व रक्त-परिसंचरण द्वारा मां के शरीर से एंटीबॉडी शिशु के शरीर में पहुंच जाती हैं। इसलिए अगर शिशु पर एलाइसा परीक्षण किया जाता है तब उसे सकारात्मक पाए जाने की संभावना रहती है। परंतु ये एंटीबॉडी शिशु के अपने रोगक्षम तंत्र में नहीं बनतीं। इसलिए समय के साथ लुप्त होती जाती हैं। ये आमतौर से जन्म के 15 महीनों बाद तक ही शरीर में रहती हैं फिर लुप्त हो जाती हैं। अतएव इस अवधि के बाद भी परीक्षण में सकारात्मक परिणाम दर्शाने वाले बच्चों को ही एच.आई.वी. से ग्रस्त माना जाना चाहिए।

बच्चों के एड्स से पीड़ित होने के लिए अनेक कारण उत्तरदायी हैं। और ये उस के पोषक स्तर पर निर्भर होते हैं। एच.आई.वी. संक्रमण से कमजोर स्वास्थ्य के बच्चे केवल तीन-चार महीनों तक ही जीवित रहते हैं जबकि अन्य बच्चों में एड्स के लक्षण दो वर्ष के हो जाने के बाद ही प्रगट होते हैं। ये लक्षण वयस्कों में प्रगट होने वाले लक्षणों के समान ही होते हैं। बच्चों में भी फेफड़ों का संक्रमण सबसे अधिक होता है और उससे शरीर की सामान्य हालत बिगड़ने लगती है पर वयस्कों की तुलना में दुर्दम्यता अपेक्षाकृत कम देखने में आती है।

## प्रतिवायरसी चिकित्सा

वायरसजन्य रोगों से पीड़ित मरीज के इलाज के प्रचलित तरीकों में शरीर को संबल प्रदान करने और लक्षणों के अनुसार उस समय तक इलाज करना शामिल होता है जब तक शरीर का रोगक्षम तंत्र आक्रमणकारी वायरसों का मुकाबला करने योग्य नहीं हो जाता। पर एच.आई.वी. संक्रमण का इस तरीके से इलाज नहीं किया जा सकता क्योंकि यह वायरस सीधे रोगक्षम तंत्र को ही नाकाम कर देता है। वैसे एच.आई.वी. अपनी जीवन अवधि में दो औषधियों में विशेष रूप से नाजुक होता है : (1) रिवर्स ट्रांसक्रिप्शन दौर में – जब आर.एन.ए., डी.एन.ए. में परिवर्तित होता है ; और (2) वायरस की प्रोटीन की प्रोटीओलायटिक क्रिया के दौरान। ये दोनों दौर वायरस के जीवन के लिए जरूरी होते हैं। एच.आई.वी. रिवर्स ट्रांसक्रिप्टेज और एच.आई.वी. प्रोटीएज एंजाइम असंक्रमित कोशिकाओं में मौजूद नहीं होते।

आजकल अपलब्ध प्रति-एच.आई.वी. कारक हैं, रिवर्स ट्रांसक्रिप्टेज संदमनकारी। ये एच.आई.वी. को उसके जीवन के आरंभ में (डी.एन.ए बनने से पूर्व) ही नष्ट कर देते हैं। एच.आई.वी. प्रोटीएज की क्रियाओं का दमन करने वाले एंजाइम वायरस को, जो उसके जीवन के अतिम चरण में प्रभावित करते हैं, संक्रामक होने से रोकते हैं। ये एंजाइम रिवर्स ट्रांसक्रिप्टेज संदमनकारी के पूरक के रूप में कार्य करते हैं।

**औषधियां :** एच.आई.वी. संक्रमण का इलाज करने के लिए कुछ औषधियां भी उपलब्ध हैं : – रिवर्स ट्रांसक्रिप्टेज एंजाइम की क्रियाओं को रोकने वाली औषधियों में आजकल 'जिडोवुडाइन' का इस्तेमाल बड़े पैमाने पर किया जाता है। यह औषधि मौखिक रूप से, 500–600 मि.ग्रा. की खुराक में प्रतिदिन दी जाती है। यह उन सब एच.आई.वी. संक्रमित वयस्क मरीजों को दी जाती है जिनका रोगक्षम तंत्र क्षतिग्रस्त हो चुका हो (सीडी-4 कोशिकाओं की संख्या 500 प्रतिघन मिमी. या उससे कम हो गई हो) फिर चाहे उनमें एच.आई.वी. संक्रमण के लक्षण प्रगट हुए हों अथवा नहीं।

एच.आई.वी. संक्रमण के इलाज के लिए यह जरूरी है कि इलाज उसके

आरंभिक दौर में ही शुरू कर दिया जाए। इससे वायरसों की वंशवृद्धि आरंभ में ही रुक जाती है। अब यह माना जाता है कि एच.आई.वी. से होने वाला संक्रमण तेजी से बढ़ा हुआ वायरस संक्रमण है जो धीरे-धीरे कोशिका-मध्यस्थ रोगक्षम व्यवस्था को समाप्त करता जाता है। इस परिस्थिति से लाभ उठाने वाले “मौकापरस्त” संक्रमण और कैंसर एच.आई.वी. रोग के अंतिम दौर को दर्शाते हैं। आरंभ में जब व्यक्ति का रोगक्षम तंत्र चुस्त-दुरुस्त रहता है एच.आई.वी. का दमन करने से रोगक्षम तंत्र को बिगड़ने से बचाने या उसमें सुधार करने की संभावना रहती है। इस प्रकार एच.आई.वी. संक्रमण को उसी दृष्टि से देखा जाना चाहिए जैसे मधुमेह और उच्च रक्तचाप जैसे रोगों को देखा जाता है।

एच.आई.वी. के विरुद्ध कार्य करने वाले अन्य डाइ-डिआक्सी-न्यूकिलओसाइडों में डी.डी.सी. (डाइ-डिआॉक्सी साइटिडीन) और डी.डी.आई. (डाइ-डिआॉक्सीआइनोसिन) शामिल हैं। एच.आई.वी. के विरुद्ध ये कारगर सिद्ध हुए हैं और अब इनकी खुराकें निश्चित कर ली गई हैं। समझा जाता है कि भविष्य में इन औषधियों को जिडोवुडाइन के साथ इस्तेमाल करने से बेहतर नतीजे मिले हैं और हर औषधि की अपनी निषालुता कम हो जाएगी।

**एच.आई.वी. के विरुद्ध वैक्सीन :** अन्य वैक्सीनों की भाँति एड्स की वैक्सीन के लिए भी यह जरूरी है कि वह ऐसी एंटीबॉडी उत्पन्न करे जो हमारे रोगक्षम तंत्र को उद्दीपित करे, जिससे एच.आई.वी. वायरस परपोषी कोशिकाओं के साथ बंधित न हो सकें। एड्स वैक्सीन विकसित करने के बारे में प्रथम कदम है एच.आई.वी. वायरस की सतह पर उस बहुत सूक्ष्म स्थल को ढूँढ़ना जो परपोषी कोशिका से बंधित होता है। यह स्थल की वह सतही प्रोटीन है जिससे अंततः वैक्सीन तैयार की जाएगी।

एच.आई.वी. अपने परपोषी में इतनी शीघ्रता से उत्परिवर्तन करता है कि उसकी वृद्धि रोकने के लिए निश्चय ही एक से अधिक वैक्सीनों की जरूरत होगी। वायरस के इस आनुवंशिक गुण की वजह से वैक्सीन के विकास में अनेक समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं। इससे यह बात भी समझ में आती है कि जब कभी भी इंफूलएंजा फैलता है तब हर बार नई वैक्सीन की खोज करनी पड़ती

है क्योंकि उससे रक्षा करने के लिए एकदम सही—सही, उसी किस्म के, वायरस से ही, जो लोगों में रोग फैला रहा है, वैक्सीन तैयार करनी जरूरी होती है।

पर जहां तक एच.आई.वी. वायरस का प्रश्न है, एक ही इलाके में अनेक उपप्ररूप बड़ी संख्या में फैले होते हैं। अब तक नौ ऐसे उपप्ररूपों को पहचाना जा चुका है। थाईलैंड में “ई” उपप्ररूप प्रभावी हैं, भारत में “सी” उपप्ररूप और संयुक्त राज्य अमेरिका में “बी” उपप्ररूप।

इन्हीं कारणों से अब तक सब प्रायोगिक वैक्सीनें मरीज के शरीर में प्रबल रोगक्षम प्रतिक्रियाएं उत्पन्न कराने में असफल रही हैं। ये वैक्सीनें जो एंटीबॉडी उत्पन्न करती हैं वे एच.आई.वी. के सब उपप्ररूपों से रक्षा करने में असमर्थ होती हैं। वर्तमान वैक्सीनों को प्रभावशाली बनाने के लिए शोधकर्ताओं को ऐसे तरीके दूढ़ने हैं जिनसे रोगक्षम प्रतिक्रियाओं को प्रोत्साहित किया जा सके। इसका एक तरीका है वैक्सीन के उन अंशों को काट देना जो अनुपयोगी एंटीबॉडी बनाते हैं। ऐसा करने के लिए आजकल आनुवंशिक इंजीनियरी तकनीकों का उपयोग किया जा रहा है। इन तकनीकों का उपयोग करके वैज्ञानिक एच.आई.वी. के सदृश एक ऐसा अणु तैयार करने की कोशिश कर रहे हैं जिसमें इस वायरस का रक्षी घटक तो मौजूद हो पर मनुष्यों को हानि पहुंचाने वाले घटक अनुपस्थित हों। इस संबंध में पहला कदम यह मालूम करना होगा कि किन घटकों को बचाना है और किन्हें काट देना है।

वैक्सीन के प्रभाव को बढ़ाने का दूसरा तरीका है उसमें सह-औषधि मिलाने का। ये सह-औषधि किसी वैक्सीन के लिए विशेष नहीं होती और किसी खास एंटीजन के प्रभाव को बढ़ाने के लिए इस्तेमाल की जाती हैं। उक्त दोनों तरीकों को मिलाकर यथा नए तरीके से डिजाइन किए गए एंटीजन को तथा अधिक प्रभावशाली एंटीजन का उपयोग करके, किसी विशेष वैक्सीन द्वारा शरीर के रोगक्षम तंत्र द्वारा प्रदान की जाने वाली सुरक्षा में बढ़ोत्तरी की जा सकती है। परंतु फिर भी एच.आई.वी. के विरुद्ध अधिकतम सुरक्षा प्रदान करने हेतु उनके विशेष क्षेत्र में महामारी उत्पन्न करने के विशिष्ट गुणों के आधार पर विभिन्न किस्म के वैक्सीनों की जरूरत होगी।

## एच.आई.वी. संचरण की रोकथाम में बाधाएं

यह जानने के लिए कि एच.आई.वी. का संचरण क्यों नहीं रुक पाता अनेक अध्ययन किए गए हैं। इनसे पता चला है कि इस कार्य में निम्न बाधाएं हैं:-

- अधिकांश लोगों को एड्स के बारे में पूर्ण और सही जानकारियाँ नहीं होती।
- अधिकांश लोगों को यौन संचरित रोगों और एड्स के बीच सीधे संबंध के बारे में स्पष्ट जानकारी नहीं है।
- लोगों को यह विश्वास है कि एच.आई.वी. संक्रमण और एड्स केवल कुछ विशेष लोगों को जैसे विदेशियों, संमलिंगी लोगों, वेश्याओं तथा नशेबाजों को ही होता है।
- कुछ लोगों को यह भी भ्रांति होती है कि “मुझे एड्स नहीं हो सकता” और “आमतौर से भारत में एड्स विकराल समस्या नहीं है”।

## नियंत्रण

एच.आई.वी. के नियंत्रण की रणनीति के मुख्य पहलू हैं :

- एच.आई.वी. से लोगों को संक्रमित होने से रोकना।
- एच.आई.वी. के संक्रमण के सामाजिक और व्यक्तिगत प्रभाव को कम करना।
- एड्स के विरुद्ध राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास करना और उन प्रयासों के बीच तालमेल बैठाना।

## एच.आई.वी. संक्रमण की रोकथाम

एच.आई.वी. संक्रमण पूर्ण इलाज करने वाली औषधियों और रोकथाम करने वाली वैक्सीनों की अनुपस्थिति में जीवनपर्यंत बना रहता है। इसका मुकाबला करने पर व्यय होने वाली मानवीय, सामाजिक और आर्थिक शक्ति को बचाने का एक ही तरीका है और वह हैं संक्रमण की रोकथाम।

एड्स मुख्य रूप से एक यौन संचरित रोग है जो इस समूह के कुछ अन्य

रोगों की भाँति रक्त से और पीड़ित स्त्री से उसके अजन्मे (गर्भस्थ) शिशु को लग सकता है।

यौन क्रियाओं द्वारा होने वाले एच.आई.वी. के संचरण को निम्न प्रकार से रोका जा सकता है :

- न केवल अनेक स्त्रियों/पुरुषों से यौन संबंध रखने वाले व्यक्तियों में वरन् स्त्रियों सहित सब व्यक्तियों में बिना डिझेक्ट और शार्म के रोग के बारे में सूचनाओं का खुला आदान-प्रदान।
- यौन संचरित रोगियों का पता लगाने और उनका इलाज करने के लिए स्वास्थ्य और सामाजिक सेवाएं उपलब्ध कराना।
- ऐसे वातावरण का निर्माण जिसमें यौन संचरित रोग फैलें ही नहीं, जैसे एक ही स्त्री/पुरुष से यौन संबंध, कंडोम का उपयोग आदि।
- एच.आई.वी. संक्रमण/एड्स से पीड़ित होने के संदेह के दायरे में आने वाले लोगों को कलंकित न करना अथवा उन्हें हेय ट्रृष्टि से न देखना।
- गरीबी उन्मूलन, क्योंकि गरीबी के कारण ही –

  - (1) लोगों को, अपने परिवार को छोड़कर, रोजगार की तलाश में दूर-दूर जाना होता है।
  - (2) लोग अपने दुखों से छुटकारा पाने के लिए नशे का सहारा लेते हैं।
  - (3) जिंदगी बसर करने के लिए स्त्रियां और बच्चे वेश्यावृत्ति अपना लेते हैं।

एक आम भ्रांति यह है कि यौन क्रियाओं में दोनों भागीदारों का सक्रिय सहयोग होना चाहिए और यौन रोगों के संचरण की रोकथाम किसी भी भागीदार द्वारा की जा सकती है। यह सही है कि दो भागीदारों के बिना यौन क्रियाएं नहीं हो सकती पर व्यवहार में यह बात सही नहीं कि ये क्रियाएं सदैव ही दोनों की रजामंदी से होती हैं। गरीबी, शिक्षा का निम्न स्तर और सामाजिक मान्यताएं, आमतौर से स्त्रियों को पुरुष से सहवास करने के लिए मना करने अथवा कंडोम का इस्तेमाल करने का अनुरोध करने से रोकती हैं। इसलिए यौन संचरित रोगों की रोकथाम के दीर्घकालीन उपायों में स्त्रियों का सामाजिक और आर्थिक रूप से उत्थान भी शामिल किया जाना चाहिए।

इस बारे में विकसित करने योग्य अल्पकालीन उपायों में शामिल है

(क) एक ऐसी क्रीम का विकास जिसे योनि में लगाने पर वायरसों को नष्ट किया जा सके, और (ख) स्त्रियों के प्रयोग के लिए कंडोम का विकास, जिसे स्वयं स्त्री नियंत्रित कर सकें, जैसे उपायों को भी यौन संचरित रोगों की रोकथाम में शामिल किया जाना चाहिए। एच.आई.वी. संक्रमण से पीड़ित होने वाले व्यक्तियों में किशोर लड़के-लड़कियों की संख्या सबसे अधिक होती है। इसलिए स्कूल और कालेज के विद्यार्थियों को इस संक्रमण और एड्स के बारे में स्पष्ट शब्दों में जानकारियां दी जानी चाहिए। वैसे उन किशोरों को भी, जो स्कूल-कालेज के विद्यार्थी नहीं हैं, ये जानकारियां पहुंचाना जरूरी है।

भूषण और नवजात शिशुओं की एच.आई.वी. संक्रमण से रक्षा करने का सर्वोत्तम उपाय है, बच्चे पैदा कर सकने योग्य उम्र की स्त्रियों को इस संक्रमण से बचाना। यदि ऐसा नहीं हो पाता और इस उम्र की स्त्री एच.आई.वी. संक्रमण से पीड़ित हो जाती हैं तब उसे बच्चे पैदा नहीं करने चाहिए। ऐसी स्त्री को गर्भनिरोधक दिए जाने चाहिए तथा यह सलाह दी जानी चाहिए कि परिवार के कल्याण के लिए उसका बच्चा न पैदा करना ही श्रेयस्कर है।

एच.आई.वी. संक्रमण को रोकने के लिए यह जरूरी है कि रक्त आधान में केवल एच.आई.वी. से मुक्त रक्त ही दिया जाए। यदि किसी रक्त दाता के रक्त में एच.आई.वी. पाए जाते हैं तब उस रक्त का उपयोग नहीं करना चाहिए।

अस्पतालों में शल्यक्रिया के दौरान एच.आई.वी. संक्रमण को रोकने के बारे में हर संभव प्रयत्न किया जाना चाहिए। इस सिलसिले में नशे के आदी लोगों पर विशेष ध्यान देना जरूरी है। ऐसे व्यक्तियों को इंजेक्शनों द्वारा मनोस्क्रिय नशीले पदार्थ लेने अथवा संदूषित इंजेक्शन पदार्थ के इस्तेमाल से एच.आई.वी. संक्रमण का बहुत खतरा रहता है। उन्हें नशे से दूर रखने के लिए, उनका मनोबल बढ़ाने के लिए, और बिना नशे के जिदंगी बसर करने के लिए जितना संबल दिया जा सकता है, सब देना चाहिए।

अध्याय सात

## एच.आई.वी./एड्स का प्रबंधन

एच.आई.वी. पॉजिटिव और पूर्ण विकसित एड्स रोग में अंतर करना और उसको जानना अत्यंत आवश्यक है। स्वस्थ व्यक्ति के भीतर एच.आई.वी. वायरस के प्रविष्ट हो जाने मात्र से और उसके परीक्षण में एच.आई.वी. पॉजिटिव हो जाने भर से एड्स रोग नहीं होता। एच.आई.वी. पॉजिटिव व्यक्ति, सामान्य यौन संपर्कों, रक्त दान एवं गर्भवती महिला के गर्भस्थ शिशु को एच.आई.वी. वायरस से संक्रमित कर सकते हैं। लेकिन बहुत लम्बे समय तक ये व्यक्ति अपने आप में स्वस्थ रहते हैं और केवल दूसरे व्यक्तियों को ऊपर वर्णित तरीकों से एच.आई.वी. ग्रस्त कर सकते हैं। इसलिए ऐसे व्यक्तियों के लिए नितांत आवश्यक हो जाता है कि वे अपने व्यवहार में गुणात्मक परिवर्तन लाएं जिससे कि ये रोग उनके स्वस्थ संपर्की व्यक्तियों में न फैलने पाए। इस संदर्भ में एच.आई.वी. पॉजिटिव अथवा ऐसे संभावित व्यक्तियों को उचित समय रहते उचित परामर्श की अपेक्षा रहती है। प्रभावी एच.आई.वी. - प्रतिरोधी औषधियों के उपलब्ध हो जाने से अब एच.आई.वी. संक्रमण की विकसित अवस्था और संक्रमित व्यक्ति के रक्त में अधिक वायरस भार को भी इन औषधियों से कम किया जा सकता है और न केवल उसकी आयु की अवधि को बढ़ाया जा सकता है अपितु, उसको स्वस्थ व्यक्ति की भाँति जीने का भी अवसर मिलता है। रोगप्रतिरोधी-क्षमता को कम करने के कारण एच.आई.वी. पॉजिटिव व्यक्तियों को अनेक अवसरवादी संक्रमण आ पकड़ते हैं, जिन्हें समय रहते इलाज कर काबू में लाया जा सकता है।

अब मात्र एच.आई.वी./एड्स की चिकित्सा में जो कठिनाई है, वह है इन औषधियों को व्यक्ति को लम्बे अरसे के लिए सस्ते दामों में उपलब्ध कराने की, क्योंकि अभी ये औषधियां लोगों की पहुंच के बाहर हैं।

### एच.आई.वी. संक्रमण में परामर्श का महत्व

सभी रोगी स्वस्थ एवं विशेषकर संक्रमित रोगी व्यक्तियों के लिए रोगों

के संक्रमण के तरीकों के बारे में जानकारी एवं उसके बचाव के उपाय जानना आवश्यक होता है। ऐसा करने से जहां स्वस्थ व्यक्ति रोग की चपेट से बच जाते हैं, वहीं रोगी और उसके निकट संपर्कियों को संक्रामक रोगों से बचने के उपायों की जानकारी मिल जाती है। इस प्रकार की जानकारी का प्रसारण जन सूचना संसाधनों यथा, समाचार पत्र, रेडियो, टीवी आदि के माध्यम से निरंतर दी जाती है। इसको हम स्वास्थ्य शिक्षा कहते हैं। इसमें मोटे तौर पर रोगों के विषय में बताया जाता है। जबकि परामर्श अथवा रोग विशेष के लिए दिए जाने वाले सलाह—मशविरा में स्वस्थ, निकट संपर्की, संभावित व्यक्ति जिनके रोग से आक्रान्त होने की संभावना हो, अथवा एच.आई.वी. ग्रस्त व्यक्ति को — रोग के बारे में जानकारी व्यक्तिगत रूप से दी जाती है और इसमें इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि व्यक्ति अपने बारे में उचित निर्णय लेने में स्वयं सक्षम हो जाए। इसमें केवल एच.आई.वी. जैसी भयंकर बीमारी के बारे में, और उसके प्रसारण को रोकने के तरीकों की जानकारी दी जाती है। उसके ऊपर किसी प्रकार की रोग अथवा निर्णय थोपने की कोशिश नहीं रहती है। ऐसा करने से जहां रोग के प्रसारण को सीमित करने में सहायता मिलती है वहीं व्यक्ति को मानसिक संबल भी मिलता है।

परामर्श समस्या का हल निकालने की दिशा में एक सहायक कदम है। इसमें व्यक्तियों को अपनी आवश्यकताओं, शक्ति एवं सामर्थ्य, सीमाओं और संसाधनों के अनुरूप निर्णय लेने में सहायता मिलती है। ऐसे में व्यक्ति को अपेक्षित मानसिक शक्ति के साथ-साथ अपनी शंकाओं का निवारण करने का अवसर भी मिल जाता है।

एच.आई.वी. के बारे में परामर्श कोई भी व्यक्ति, चिकित्सक, परा-चिकित्सक, समाज सेवी, दूसरों की समस्याओं का निवारण करने में रुचि रखने वाला कोई समान्य व्यक्ति भी हो सकता है। अच्छे परामर्श के लिए निम्न बातें आवश्यक हैं।

1. परामर्श के लिए आने वाले व्यक्ति का स्वागत करें।
2. उसको आश्वस्त करें।
3. व्यक्ति में परामर्शदाता को लेकर पूर्ण विश्वास होना चाहिए और उसको इस बात का पूरा भरोसा रहना चाहिए कि उसकी बताई हुई जानकारी

गोपनीय रखी जाएगी।

4. परामर्शदाता को व्यक्ति की बातें ध्यानपूर्वक सुननी चाहिए।

5. उसके बोलने अथवा बात करते समय उसको ठोकें मत और उसको अपनी बात पूरी तरह कह लेने दें।

6. जितना भी हो उसकी समस्याओं के बारे में अधिकाधिक जानकारी उपलब्ध करें।

7. आवश्यक नहीं है कि केवल एक बैठक में ही परामर्श का काम पूरा कर दें। इसके लिए व्यक्ति से कई बार बात करना भी आवश्यक हो सकता है। उससे सदा सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार बनाए रखें।

8. जिस विषय में उसको जानकारी चाहिए हो उसके बारे में उसे पूरी और तथ्यपूर्ण जानकारी प्रदान करें।

9. अपनी समस्या के बारे में निर्णय लेने में उसे सक्षम बनाएं।

10. समय-समय पर उसके स्वास्थ्य के बारे में पूछते रहें और आश्वस्त करते रहें।

11. जहां तक संभव हो व्यक्ति को अपनी समस्या के बारे में परिवार के सदस्यों पति/पत्नी के साथ जानकारी बांटने के लिए प्रोत्साहित करें।

संक्षेप में परामर्श के दौरान व्यक्तियों की बातों को सुनने की इच्छा, परामर्श के लिए आए व्यक्ति की मान-मर्यादा का ध्यान, अपनी बात को प्रभावी ढंग से समझा पाने की क्षमता, पूर्वाग्रहविहीन रुझान (अपने विचार, मान्यताओं को न थोपने में रुचि), गोपनीयता का निर्वाह, आत्म विश्वास जाग्रत करना, पारिवारिक और सामाजिक संबंधों को सुधारना और सुदृढ़ करना, अच्छे परामर्शदाता के लिए आवश्यक है।

## परामर्श का उद्देश्य

### (क) रोकथाम

परामर्श का मुख्य प्रयास एच.आई.वी. संक्रमण को फैलने को रोकना है। जिसके अंतर्गत मुख्य कदम यह है :

- सुनिश्चित करें कि व्यक्ति/वर्ग विशेष का व्यवहार और तौर-तरीके

रोग फैला सकते हैं।

- लोगों को जानने की चेष्टा करें।
- उनके व्यवहार और जीवन पद्धति को समझें।
- अपने व्यवहार को बदल सकने की सामर्थ्य के प्रति उन्हें जागरुक करें।
- ऐसे वर्ग विशेष एवं व्यक्तियों के साथ एकजुट होकर उनको सम्बल देने और उनको अपना व्यवहार बदलने के लिए प्रोत्साहित करें।

### स्वास्थ्य संवर्धन

ऐसे व्यक्ति जो कि एच.आई.वी. के खतरों के प्रति अधिक अपेक्षित सक्रिय व्यवहार करते हैं, लेकिन जानकारी न होने के कारण अनभिज्ञ हैं, परामर्श द्वारा उनको इन खतरों के प्रति जागरुक करने की आवश्यकता रहती है। परामर्श के द्वारा उनके व्यवहार को ध्यान में रखते हुए उसमें बदलाव लाने का प्रयत्न किया जाता है और समय-समय पर व्यवहार में परिवर्तन की समीक्षा भी की जाती है।

### बचाव

एच.आई.वी. संक्रमित व्यक्तियों को ऐसी जानकारी और उपाय बताने की आवश्यकता है जिससे कि उनके द्वारा यह संक्रमण अन्य निरोगी संपर्कियों को न लग पाए। उनको एच.आई.वी. पॉजिटिव के आघात से उबारना भी परामर्शदाता का ही काम है। चूंकि व्यवहार में तुरंत बदलाव आना कठिन होता है। इसलिए उन्हें संक्रमण फैलने के विशिष्ट तरीकों से अवगत कराना भी आवश्यक होता है। यथा :

- वे अपना रक्त दान न करें।
- यौन संभोग के दौरान 'कंडोम' का प्रयोग करें।
- सांझी सुझियों और इन्जेक्शनों का प्रयोग न करें।

### सामाजिक-मानसिक सामर्थ्य

जिन लोगों में एच.आई.वी. संक्रमण एवं एच.आई.वी. से जुड़ी हुई बीमारियों का निदान किया जाता है उनके सामने कई तरह की समस्याओं का अम्बार लग जाता है। ऐसे व्यक्तियों को मानसिक सांत्वना एवं दैनिक जीवन की रोजमरा की जरूरतों को पूरा करने के लिए सहायता की

आवश्यकता होती है। ऐसे व्यक्तियों को अस्पताल में भर्ती होने से लेकर इस बीमारी के साथ जुड़ी बदनामी के कारण मानसिक तनाव रहता है जिसके लिए उन्हें उचित परामर्श की आवश्यकता होती है। परामर्श का उद्देश्य उपयोगी और सभी तरह से खुशहाल जीवन जीने की क्षमता उत्पन्न करना है जिससे वे अपने बारे में स्वयं ठीक-ठीक निर्णय कर सकें और अपनी जीवनर्चर्या संयमित रख सकें। इसमें उनके परिवार के निकट संबंधी और मित्र समुदाय भी उनकी स्वास्थ्य एवं समाज सेवी संस्थाओं पर न आश्रित रहने में मदद कर सकते हैं और इससे भी अधिक आवश्यक मानसिक एवं सामाजिक परेशानियों का बोझा काफी मात्रा में कम कर सकते हैं।

**एच.आई.वी.** संक्रमण उचित दवाइयों और रोकथाम के उपायों के बिना उत्तरोत्तर बढ़ता ही रहता है। इसलिए परामर्श का सिलसिला नियमित रखना चाहिए और रोग की अवस्था के अनुरूप व्यक्ति की देखभाल करनी चाहिए। इस बारे में परामर्शदाता का यह भी कर्तव्य है कि वह रोगी को चिकित्सा सुविधाओं की उपलब्धता और सामाजिक सुविधाओं की जानकारी और जीवन के रहने-सहने के तरीके के बारे में उसे बराबर सलाह और निर्देश देते रहें।

### एच.आई.वी. टेस्ट से पहले परामर्श

टेस्ट से पूर्व टेस्ट के तकनीकी पहलुओं के बारे में व्यक्ति को जानकारी देना आवश्यक होता है। इसके साथ-साथ वैयक्तिक प्रभाव, टेस्ट की चिकित्सकीय प्रणाली पर सामाजिक प्रभाव और टेस्ट के पॉजिटिव अथवा निगेटिव होने की दशा में उसके मनोवैज्ञानिक प्रभाव को आंकना भी परामर्शदाता का कर्तव्य होता है। यह सब जानकारी सरल भाषा में पूर्णतः और ठीक-ठीक दी जानी चाहिए। इस बात का भी पूरा ध्यान रखना चाहिए कि टेस्ट का परिणाम गुप्त रखा जाएगा।

### टेस्ट-पूर्व परामर्श के मुख्य आधार :

1. व्यक्ति के बारे में जानकारी और खतरे का निरूपण, यथा -

**यौन व्यवहार :** एक से अधिक यौन संपर्की, वेश्याओं से संपर्क, संभोग के दौरान कंडोम का प्रयोग न करना, समलैंगिकता, दोनों प्रकार के लैंगिक संपर्क।

- सुई द्वारा नशीली दवाओं का सेवन
- रक्ताधान
- अंग प्रत्यारोपण

## 2. कारणों का निरूपण और जानकारी :

- टेस्ट के लिए क्यों आग्रह किया जा रहा है?
- व्यक्ति को अपने व्यवहार/लक्षणों में किन विशेष बातों के प्रति चिन्ता है?
- टेस्ट और इसकी उपयोगिता के बारे में जानकारी?
- टेस्ट के पॉजिटिव अथवा निगेटिव होने की दशा में उसका क्या रुख होगा।
- एच.आई.वी. के प्रसरण के बारे में विचार।
- टेस्ट के बाद परिवार का क्या व्यवहार होगा?

## टेस्ट के बाद परामर्श

**निगेटिव होने की दशा में :** टेस्ट के निगेटिव होने की दशा में जहां टेस्ट करवाने वाले व्यक्ति को काफी राहत महसूस होती है और मानसिक दबाव कम हो जाता है वहीं परामर्शदाता को सचेत रहना चाहिए, क्योंकि साधारणतः किया गया एच.आई.वी. इलीसा टेस्ट पक्के तौर पर संभावित एच.आई.वी. के संपर्क के तीन माह बाद ही पॉजिटिव होता है। इससे पहले टेस्ट के परिणाम के बारे में निश्चित रूप से कुछ भी कह सकना कठिन है। फिर यदि यौन संबंधों में लापरवाही बरतते रहें, एकाधिक यौन—संपर्कियों से संबंध रखें और संभोग के दौरान ‘कंडोम’ का प्रयोग नहीं किया जाता है अथवा नशे के लिए साँझी सुइयों का प्रयोग करते हैं तो इस टेस्ट के निगेटिव होने पर भी भविष्य में एच.आई.वी. पॉजिटिव होने को नहीं ठाला जा सकता। किसी भी संभावित एच.आई.वी. संक्रमण के बाद और बीच में यदि अन्य कोई एच.आई.वी. संक्रमित यौन संपर्क न हुआ हो, तो 6 माह के अन्त में किए

एच.आई.वी. निगेटिव टेस्ट से ही तब तक के एच.आई.वी. निगेटिविटी को घोषित किया जा सकता है। परामर्शदाता द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को सुरक्षित यौन संबंधों के बारे में जानकारी देना और उसके उपाय बताना अत्यन्त आवश्यक है।

पॉजिटिव (धनात्मक) होने की दशा में ऐसे सभी व्यक्तियों को उनकी एच.आई.वी. जांच का परिणाम उन्हें पूरी तरह विश्वास में लेकर गोपनीय तरीके से बताना चाहिए। किसी भी व्यक्ति को एच.आई.वी. पॉजिटिव घोषित करने से पहले तीन विभिन्न प्रणालियों से एच.आई.वी. एलाइज़ा टेस्ट करने की सिफारिश की गई है। टेस्ट का परिणाम जानने के लिए आए व्यक्ति को उसका परिणाम आत्मसात करने के लिए कुछ समय देना चाहिए और उसके बाद परामर्शदाता को उसको साफ शब्दों में तथ्यों पर आधारित जानकारी देनी चाहिए। रोग की भयावहता और अब जीने के लिए कितना समय शेष रह गया है – जैसी बातों को इनमें शामिल नहीं करना चाहिए। इसके साथ–साथ एच.आई.वी. पॉजिटिव व्यक्ति को ऐसी बातें यथा एच.आई.वी. रोधी औषधियों की प्रभावात्मकता और चिकित्सा सुविधाओं के स्थान एवं चिकित्सकों की भी जानकारी देनी चाहिए।

परामर्श का एक प्रमुख उद्देश्य एच.आई.वी. संक्रमित व्यक्ति को आश्वस्त करना है, क्योंकि ऐसे व्यक्तियों को मानसिक परेशानी अधिक होती है। जिसके कारण भविष्य में उनके स्वास्थ्य की स्थिति, जीवन अवधि, पारिवारिक जिम्मेदारियों का निर्वाह आदि कई बातों प्रभावित होती है। इसलिए परामर्श में ऐसे सभी निकट संपर्कियों, संबंधियों और सामाजिक कार्यकर्ताओं को भी शामिल करना चाहिए जो एच.आई.वी. पॉजिटिव व्यक्ति को भविष्य में इस स्थिति तथा इससे उत्पन्न होने वाली जटिलताओं से जूझने में सहायता कर सकते हैं।

### वायरस (विषाणु) प्रतिरोधी औषधियां

पिछले कुछ सालों में एच.आई.वी. विषाणु प्रतिरोधी औषधियों की खोज और उपलब्धता के संदर्भ में अभूतपूर्व सफलता मिली है। जहां पहले केवल

‘जिडोवुडीन’ नामक एक ही औषधि उपलब्ध थी, वहां अब 14 से अधिक औषधियों को एच.आई.वी. संक्रमण में प्रयोग के लिए मान्यता प्राप्त हो गई है। इनमें से अब 8 एच.आई.वी. प्रतिरोधी औषधियां भारत में भी उपलब्ध हैं। एच.आई.वी. विषाणु के शरीर में गुणित होने की प्रक्रिया की जानकारी ने हमें इन प्रभावशाली औषधियों की खोज में काफी सहायता प्रदान की है। इन रोगों के आधार पर एच.आई.वी. संक्रमण को अप्रभावशाली बनाने के लिए ‘आक्रामक विषाणु-प्रतिरोधी नाति’ अपनाई जाती है। क्षय रोगी चिकित्सा की भाँति एकाधिक एच.आई.वी. प्रतिरोधी औषधियों का सामूहिक प्रयोग विषाणु की घनात्मकता को प्रभावशाली ढंग से कम करने और शरीर के भीतर की रोग प्रतिरोधी शक्ति को बढ़ाने वाली कोशिकाओं ‘सीडी<sup>4</sup>’ में प्रभावशाली ढंग से बढ़ोत्तरी करता है।

### विषाणु-प्रतिरोधी औषधियों की क्रिया-विधि

एच.आई.वी. विषाणु अपने आप में एक विशिष्ट वर्ग का रोगोत्पादक विषाणु है जिसकी संरचना एक विशेष – ‘इन्जाइम’ रिवर्स ट्रान्सक्रिप्ट्स’ की सहायता से कोशिका के आर.एन.ए. को डी.एन.ए. में परिवर्तित कर मानव शरीर की स्वस्थ कोशिकाओं के डी.एन.ए. का अभिन्न अंग बनकर नई स्वस्थ कोशिकाओं के स्थान पर विषाणु संक्रमित कोशिकाओं का निर्माण करती हैं। इस विषाणु के संक्रमण से प्रभावित होकर भविष्य में बनने वाली शरीर की सभी कोशिकाएं एच.आई.वी. संक्रमित हो जाती हैं। इस प्रकार मानव शरीर की रोग से लड़ने वाली कोशिकाओं के क्षीण होने के कारण मानव की साधारण संक्रमणों से लड़ने की शक्ति का भी ह्लास हो जाता है। इसी को ध्यान में रखकर एच.आई.वी. विषाणु को नष्ट करने वाली औषधियों की खोज और निर्माण किया गया है। एच.आई.वी. प्रतिरोधी औषधियों को उनकी संरचना और प्रभावोत्पादक प्रक्रिया के अनुसार निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया गया है :

(क) एन.आर.टी.आई. (नयुकिल्योसाइड एनालॉग रिवर्स ट्रान्सक्रिप्ट्स इन्हिबिटर) में औषधियां विषाणु डी.एन.ए. के साथ संलग्न हो, उसकी संरचना को रोकने में मदद करती हैं। इस औषधि के साथ संलग्न कोशिका डी.एन.

ए. के अधूरा होने के कारण नए विषाणुओं के उत्पादन में अक्षम हो जाती है। इस वर्ग में प्रमुख औषधियां जिडोवुडीन, लेमीवुडीन, डाइडेनोसीन, जेलसिटाबीन, स्टेवुडीन हैं।

(ख) एन.एन.आर.टी.आई. (नान-न्युकिलयोसाइड रिवर्स ट्रान्सक्रिप्टेस इन्हिबिटर) में औषधियां सीधी रक्त विषाणु की रिवर्स ट्रान्सक्रिप्टेस इन्जाइम से जुड़कर विषाणु को आर.एन.ए. से डी.एन.ए. में नहीं परिवर्तित करने देती हैं और इस प्रकार एच.आई.वी. के विषाणुओं के गुणित होने की प्रक्रिया रुक जाती है। इस ग्रुप में निविरपिन, डेलाविराडिन और इफाविरेन्ज औषधियां आती हैं।

(ग) प्रोटिएस इन्हिबिटर ग्रुप की औषधियां एच.आई.वी. विषाणु को संग्रहीत होने और संक्रमित सीडी-4 कोशिकाओं के बाहर न आने देने में मदद करती हैं। इस वर्ग में साग्निनाविर, रिटोनाविर, इन्डिनाविर, नेलफिनाविर, एमप्रिनाविर औषधियां प्रमुख हैं।

**जिडोवुडीन (एजेडटी)** – एच.आई.वी. संक्रमण और एड्स में सबसे पहले प्रयुक्त होने वाली औषधियों में जिडोवुडीन प्रमुख है। इस दवा के प्रमुख दुष्प्रभाव उल्टी होना, भूख और नींद न आना, सिरदर्द, अस्थिमज्जा के कार्य में धीमापन आना और मांस-पेशियों की विकृतियां और कमजोरी प्रमुख हैं। एकमात्र इसी औषधि के रोग-निवारण के लिए प्रयोग करने से औषधि का रोग-निवारक प्रभात क्षीण होने लगता है।

एच.आई.वी. के विरुद्ध प्रयुक्त औषधियों के प्रतिरोधी प्रभावों के विकसित होने के कारण अब आम राय यह है कि ये औषधियां केवल एक-एक प्रयोग न कर एक साथ एकाधिक प्रयोग की जानी चाहिए। इससे औषधियों के प्रति एच.आई.वी. विषाणु प्रतिरोधी शक्ति विकसित करने में अक्षय हो जाता है और इन औषधियों के दुष्प्रभाव भी कम हो जाते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्य दिशानिर्देशों के अनुसार निम्न स्थितियों में विषाणु-रोधी औषधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(1) एच.आई.वी. संक्रमित सभी लाक्षणिक रोगी, भले ही उनकी 'सीडी-4 कोशिकाओं और वायरस-गहनता कुछ भी हो।

(2) सभी ऐसे रोगी जिनके सीडी-4 कोशिकाओं की संख्या घटकर 350 मिमी<sup>3</sup> हो गई है (सामान्य एवं स्वस्थ व्यक्तियों में यह संख्या 1000 मिमी<sup>3</sup> होती है)।

(3) ऐसे रोगी जिनकी वायरस गहनता अधिक हो गई है (30,000 कॉपी/निल)।

औषधि संस्थापन के पूर्व और दौरान रोगी की नैदानिक जांच कर उसके एच.आई.वी. संक्रमित होने की अवधि, सभी पूर्व के संक्रमणों का वृत्त और रोगी के नैदानिक लक्षणों को ध्यान में रखा जाता है। इस के अंतर्गत पूर्व में हुए क्षय रोग के लक्षणों, उसकी चिकित्सा तथा सफलता, यौन संचरित रोगों के लक्षणों पर विशेष ध्यान दिया जाता है। स्त्रियों में गर्भाधान की संभावना को भी ध्यान में रखना आवश्यक होता है क्योंकि एच.आई.वी. संक्रमण न केवल मां को प्रभावित करता है, अपितु गर्भस्थ शिशु पर भी अपने दुष्प्रभाव छोड़ सकता है। विषाणु रोधी औषधि के पूर्व और दौरान रोगी को एच.आई.वी./एड्स के बारे में परामर्श देते रहना आवश्यक है जिसके अंतर्गत न केवल रोगी के अपने स्वास्थ्य एवं कार्य-कलापों के प्रति अवगत कराया जाता है बल्कि उसके निकटस्थ संबंधियों यथा उसकी पत्नी, बच्चों, आदि को भी इसमें शामिल करना आवश्यक होता है।

एच.आई.वी. रोधी औषधियां अब उपलब्ध होने और प्रभावकारी होने पर भी काफी महंगी हैं क्योंकि इन औषधियों को लम्बे समय और कभी-कभी तो शेष जीवन भर बराबर लेते रहना होता है। इसलिए ये जन-साधारण की पहुंच से बाहर हैं। इनके दोनों में कमी लाने के सतत प्रयत्न किए जा रहे हैं, जिससे भविष्य में ये औषधियां अधिक से अधिक लोगों को सुलभ हो सकें।

**एच.आई.वी. पाजिटिव गर्भवती मां से गर्भस्थ शिशु को एच.आई.वी. संक्रमण से बचाने के उपाय:**

एच.आई.वी. पाजिटिव गर्भवती मां से गर्भस्थ शिशु में एच.आई.वी. प्रेषण की समानता 13.60 प्रतिशत आंकी गई है। गर्भवती स्त्रियों के एच.आई.

वी. पॉजिटिव रहने की बढ़ती हुई संभावनाओं को देखते हुए और अमरीका और थाइलैंड में हुए सफल प्रयोगों को ध्यान में रखते हुए भारत में भी एच.आई.वी. पॉजिटिव गर्भवती महिलाओं को भी ग्यारह अध्ययन केंद्रों में ऐसी चिकित्सा उपलब्ध कराने की व्यवस्था राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन की गयी है।

इसके अन्तर्गत इन सभी केन्द्रों पर गर्भधान के दौरान आई महिलाओं को एच.आई.वी. के बारे में जानकारी देने और उनकी पूर्व सहमति के पश्चात उनके रक्त की एच.आई.वी. पॉजिटिव के लिए जांच की जाएगी। एच.आई.वी. पॉजिटिव पाई गई गर्भवती महिलाओं को 36 सप्ताह की गर्भधारण की अवधि के उपरान्त 300 मिग्रा. दिन में दो बार ए.जेड सी दवाई दी जाएगी, जिसकी मात्रा प्रसव के दौरान 300 मिग्रा प्रति 3 घंटे की जानी है। नवजात शिशु को दवाई नहीं दी जानी और नवजात शिशु की एच.आई.वी. के लिए पीसी आर जांच 48 घंटे और दो महीने पश्चात की जानी है। मां को सभी संभावनाओं से परिचित करा देने के पश्चात नवजात शिशु को स्तनपान कराने आथवा न कराने की इच्छा मां पर छोड़ दते हैं।

इस अध्ययन के एक साल बाद पूरा हो जाने के बाद उसको बेहतर रूप से ऐसी सभी एच.आई.वी. गर्भवती महिलाओं पर लागू किए जाने पर विचार किया जाएगा।

अभी हाल ही में मिले परीक्षणों के परिणामों से ज्ञात हुआ है कि एच.आई.वी. पॉजिटिव गर्भवती महिलाओं को औषधि देने की अवधि और मात्रा में एक अन्य एच.आई.वी. निरोधी औषधि 'निविरापिन' के देने से भारी कमी आ जाएगी। इस औषधि की केवल एक खुराक प्रसव से पहले एच.आई.वी. पॉजिटिव गर्भवती स्त्री को दे दी जाएगी और उसके नवजात शिशु को भी 1-2 मिग्रा/किग्रा. वजन के अनुसार 'निविरापिन' की खुराक दी जाएगी। पूर्व किए गए परीक्षणों से उपलब्ध जानकारी से ज्ञात हुआ है कि इससे एच.आई.वी. पॉजिटिव गर्भवती मां से नवजात शिशु को एच.आई.वी. संक्रमण में भारी कमी आई है। केवल एक बार मां और नवजात को औषधि देने से नियमित और उचित मात्रा में औषधि-सेवन की समस्या भी प्रभावी ढंग से हल हो जाएगी।

## स्वास्थ्य कर्मियों के लिए कामकाज के दौरान बचाव के उपाय

अस्पतालों, चिकित्सा संस्थानों, डिस्पेंसरियों आदि में काम करने वाले सभी चिकित्सकों, परा-चिकित्सा तथा अन्य स्वास्थ्य सेवा कर्मियों को गहन प्रशिक्षणों के द्वारा एच.आई.वी. विषाणु के संक्रमण के तरीकों के बारे में जानकारी दी जाती है और उसको रोकने के उपायों की विधियों से भी अवगत कराया जाता है। इसके लिए सभी स्वास्थ्य कर्मियों को रोगियों एवं उनके शारीरिक स्रावों, यथा, रक्त, मवाद आदि को स्पर्श करने के दौरान बहुविध सावधानियां बरतने का परामर्श दिया जाता है। अर्थात्, सभी स्वास्थ्यकर्मी प्रत्येक रोगी अथवा उसके शारीरिक स्राव को सम्भावित एच.आई.वी. संक्रमित समझते हुए सतत जागरुक रहें और व्यापक सावधानियों में किसी प्रकार की कमी न आने दें। इसके लिए परीक्षणों के बाद साबुन से हाथ धोकर, हाथों तथा अन्य अंगों पर लगी चोट अथवा खरोंच को भली प्रकार देखकर और ढक कर, काम के दौरान यदि आवश्यक है, तो हाथों पर सर्जीकल दस्ताने पहन कर अपने को रोगी की देखभाल के दौरान बचाए रखें। उपयोग में आए सभी उपकरणों, रोगी द्वारा प्रयोग में आने वाले बिस्तर की चादर आदि को ब्लीच घोल में डालकर निर्जर्मित करने की सलाह और सक्रिय रूप से प्रयोग में लाने की हियादत दी जाती है और अनुपालन करने को कहा जाता है। फिर भी आपात स्थितियों और काम की जल्दी में कभी-कभी दुर्घटना होने की आशंका को बिल्कुल नकारा नहीं जा सकता। ऐसी परिस्थिति में एच.आई.वी. संक्रमण से स्वास्थ्य कर्मियों पर पड़ने वाले सम्भावित दुष्प्रभावों को रोकने के लिए रोगनिरोधी औषधियों की उपलब्धि एवं सेवन की मार्गदर्शक रूपरेखा तैयार की गई है। निर्दिष्ट सिद्धांतों और आवश्यकता के अनुसार इन औषधियों को प्रयोग किया जा सकता है। सभी चिकित्सा संस्थानों को इन औषधियों की आपात स्थितियों में उपलब्ध रखने की हिदायत की गई है। ऐसी सभी औषधियों पर हुए खर्च का वहन राज्य एवं जिला स्तरीय एड्स सोसाइटियां करेंगी।

स्वास्थ्य कर्मियों की काम-काज के दौरान एच.आई.वी. संक्रमण से प्रभावित होने की संभावना यद्यपि अत्यधिक कम मात्रा में होती है। फिर भी

एच.आई.वी. निरोधक टीके और सीमित समय में प्रभावी पूर्ण रूप से रोग मुक्त करने वाली औषधियों का अभाव स्वास्थ्य कर्मियों को एड्स के लगने के प्रति आशंकित किए रहता है।

**एच.आई.वी. संक्रमण निम्न कारकों पर आश्रित होता है :**

- काम-काज के दौरान संक्रमित रक्त की मात्रा का संपर्क।
- संपर्क के दौरान रोगी के रक्त में एच.आई.वी. विषाणुओं की मात्रा।
- संभावित एच.आई.वी. संपर्क के पश्चात एच.आई.वी. निरोधी औषधियां समय से ली गई अथवा नहीं।

काम-काज के दौरान नुकीली सुईयों और औजारों को बरतने में निम्नलिखित सावधानी रखें :

- (क) इन्जेक्शन के प्रयोग में आने वाली सुईयों का प्रयोग करते समय अत्यधिक सावधानी बरतें।
- (ख) सिरिंज पर सुई दोबारा न लगाएं। यदि आवश्यक हो तो केवल एक हाथ का ही प्रयोग करें।
- (ग) ट्रॉली, पलंग, आदि पर सुईयां न छोड़ें।
- (घ) तीखी धार की तरफ से नुकीले औजार दूसरे व्यक्ति को न दें।
- (च) उंगली की जगह ऊतक सिलने के दौरान चिमटी का प्रयोग करें।
- (छ) प्रयोग के बाद तेज धार वाली वस्तुओं को मजबूत न कट सकने वाले डिब्बों में नष्ट करने के लिए भेजें।

**संक्रमित रक्त के संपर्क के बाद क्या करें?**

**तुरंत बाद :**

- (1) सुई अथवा घाव के स्थान को साबुन पानी से धो दें।
- (2) नाक, मुँह अथवा त्वचा पर पड़े खून के छीटों को साफ पानी से अच्छी तरह धो डालें।
- (3) आंखों का साफ पानी, सेलाइन अथवा निर्जर्मित घोलों से भली प्रकार धो दें।
- (4) सुई चुभी उंगली को मुँह के अन्दर न डालें।

**संभावित संक्रमित रक्त अथवा साव के संपर्क के बाद तुरंत पूर्व निश्चित**

अधिकारी को आपात-स्तरीय विधि से सूचना दें और एच.आई.वी. संक्रमित संपर्क के पश्चात् दी जाने वाली औषधियों को वरीयता के अनुसार “पहले दो घंटों के भीतर” प्रारंभ कर देना चाहिए। लेकिन किसी भी दशा में यह देरी 72 घंटे से अधिक नहीं होनी चाहिए।

संक्रमित रक्त/स्राव की मात्रा यथा, (क) कुछ बूदें और थोड़ी देर को संपर्क (ख) काफी मात्रा में रक्त स्राव और कई मिनटों तक, इसका श्लेष्मा अथवा अमेदनशील त्वचा के संपर्क में रहने (ग) अत्याधिक तीव्र - मोटी और खोखली सुई से हुआ गहरा घाव जिसके ऊपर रोगी का रक्त दिखाई दे रहा था अथवा ऐसी सुई जिसका रोगी पर अन्तःशिरा अथवा अन्तःधमनी के रूप में प्रयोग किया गया हो।

ऊपर के (क), (ख) एवं (ग) परिस्थितियों के अनुसार एच.आई.वी. संक्रमण की तीव्रता आंकी जाती है। इसके साथ-साथ संभावित एच.आई.वी. रोगी, स्रोत की रोग अवस्था, उसमें एच.आई.वी. वायरस की मात्रा, (रोग की अलाक्षणिक अथवा लाक्षणिक अवस्था) और उसके सीड़ी 4 संख्या के अनुपात के अनुसार भी स्वास्थ्य कर्मी के एच.आई.वी. प्रभावित होने की संभावना होती है।

प्रभावन (Exposure) दशा और रोगी की रोग दशा दोनों को देख कर प्रस्तावित एच.आई.वी. निरोधी औषधि का निर्णय किया जाता है। कम तीव्रता वाले प्रभावन की दशा में 600 मिग्रा. ‘जिडोवुडीन’ प्रतिदिन (दो अथवा तीन विभक्त खुराकों में) और ‘लामिवुडीन’, 150 मिग्रा. दिन में दो बार, चार सप्ताह के लिए देना पर्याप्त होता है। जबकि तीव्र प्रभावन की स्थिति और एच.आई.वी. संक्रमण के अधिक जोखिम में प्रसारित औषधि निदान की सिफारिश की जाती है, जिसके अंतर्गत उपरोक्त औषधियों के अतिरिक्त इन्डिविर 800 मिग्रा. दिन में तीन बार अथवा नेलफिनाविर, 750 मिग्रा. दिन में तीन बार की सिफारिश की गई है।

गर्भवती महिलाओं को प्रथम तिमाही को छोड़कर दूसरी और तीसरी तिमाही में जिडोवुडीन एच.आई.वी. निरोधी औषधि निरापद समझी जाती है। लेकिन ऐसे में नैदानिक चिकित्सक से परामर्श करना आवश्यक होता है।

एच.आई.वी. निरोधी औषधियों को शुरू करने से पहले स्वास्थ्य कर्मी

का रक्त एच.आई.वी. जांच के लिए जांच पूर्व सलाह—मशविरा के बाद ले लिया जाता है। और फिर एच.आई.वी. जांच के लिए रक्त 6 सप्ताह, 12 सप्ताह और अन्तिम बार प्रभावन के 6 माह बाद संग्रह किया जाता है। इस दौरान स्वास्थ्यकर्मी की रोग दशा के लिए अवलोकन करते रहना और उसको एच.आई.वी. संक्रमण को रोकने के सभी उपायों, यथा, संभोग की मनाही, संभोग के दौरान उचित ढंग से कंडोम प्रयोग, स्तन पान कराती महिला स्वास्थ्यकर्मी को इसकी मनाही, आदि का कड़ाई से पालन करने को कहा जाता है।

संस्थान के संक्रमण नियंत्रण अधिकारी को ऐसी सभी व्यावसायिक प्रभावनों की सूचना राज्य एड्स सोसाइटी को देना आवश्यक है। ये सभी राज्य एड्स सोसाइटियां क्रमशः इसकी सूचना राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन को भेजती रहती हैं जहां इन्हें संग्रहीत कर राष्ट्रीय स्तर पर नीति निर्धारण के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

• • •

## यौन समस्याएं

### मानव मनोविज्ञान और यौन

मैथुन के रूप में सम्पन्न होने वाली सामान्य यौन क्रियाएं तथा उनके प्रति स्वस्थ और संतोषजनक दृष्टिकोण अनेक कारकों पर निर्भर होता है (तालिका-3)। यौनमानसिक समस्याएं ऐसी विकृतियां हैं जिनमें या तो मनोविकारों के फलस्वरूप यौन क्रियाएं गड़बड़ा जाती हैं अथवा यौन असंतोष के परिणामस्वरूप मनोविकार उत्पन्न हो जाते हैं। यौन-मानसिक समस्याओं वाले व्यक्ति स्वयं ही इनसे पीड़ित नहीं होते वरन् यौन क्रियाओं में अपने भागीदार व्यक्ति को, और अपने माता-पिता को भी अपने दुख में सहयोगी बना लेते हैं। स्वयं रोगी तो तकलीफ महसूस करता ही है क्योंकि वह समझ नहीं पाता कि उसके साथ ऐसा क्यों हो गया, विशेष रूप से उस समय जब उसके शरीर में बाह्य रूप से कोई असामान्यता प्रतीत नहीं होती और जब उसके दोस्तों, संबंधियों और साथियों के यौन संबंध सुखी और सामान्य होते हैं।

वैवाहिक संबंध में दंपति के बीच, यौन संबंध एक अनिवार्य कड़ी है। दक्षिणी एशिया के वातावरण में शादी से पहले लड़की को आमतौर से अपनी घनिष्ठ सहेलियों से ही यह आभास होता है कि वह भी एक समय उन्मुक्त रूप और खुशी से वैवाहिक यौन संबंधों का आनन्द उठा सकेगी। जब वह ऐसा नहीं कर पाती तब उसका यौन असंतोष अनेक शारीरिक व्याधियों यथा सिर दर्द, पीठ दर्द, थकान, कष्टदायक मासिक चक्रों के रूप में अथवा चिड़चिड़ापन, चिंता, अवसाद और निराशा जैसे मानसिक लक्षणों के रूप में प्रकट होने लगता है। नवविवाहित दंपति के माता-पिता भी, यदि उन्हें पोते-पोती, जिनसे उनकी वंश परंपरा आगे बढ़नी है, नहीं मिल पाते तब चिंताग्रस्त हो जाते हैं।

यौन संबंधित मनोविकारी समस्याओं से पीड़ित रोगी यह नहीं जानते

**सारणी – 3 : मनोवैज्ञानिक कारक जिन  
पर सफल मैथुन निर्भर होता है**

कारक	प्रभाव
1. आयु	आयु के बढ़ने के साथ यौन इच्छा और क्षमता घट जाती है।
2. सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभाव	हिन्दू परंपरा में एक पत्नी प्रथा, एक आयु विशेष तक ब्रह्मचर्य का पालन और पति/पत्नी के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति के साथ मैथुन करने पर मनाही।
3. औषधि या अल्कोहल	उच्च रक्त दाब के नियंत्रण के लिए ली जाने वाली औषधियां यथा स्टीरायड, प्रति अवसादक और अल्कोहल यौन इच्छा को कम कर सकती हैं।
4. व्यक्तित्व	बहिर्मुखी व्यक्ति में आकस्मिक यौन संबंध की अधिक प्रवृत्ति होती है।
5. यौन वरीयता	समलैंगिक व्यक्ति अपने सहभागी अधिक तेजी से बदलते हैं।
6. आसक्ति	किसी व्यक्ति के प्रति आसक्ति के फलस्वरूप भी उसके साथ मैथुन हो सकता है।
7. असाधारण परिस्थितियां/अवसर	छुट्टियों में अथवा लंबे समय तक चलने वाली सामजिक या व्यावसायिक बैठकों के दौरान लोगों से मिलने और उनसे घनिष्ठता बढ़ने के अवसर मिलते हैं। ये भी आकस्मिक सहवास में परिणत हो सकते हैं।
8. मनोविकारी रोग	यौन क्रियाओं को मंद कर देता है। अल्पोन्नाद यौन क्रियाओं को बढ़ा देता है।

कि वे मदद के लिए किस के पास और कहां जाएं। वे अपनी समस्या के बारे में किसी से बात करने में भी शर्माते हैं। कभी—कभी वे चिकित्सक भी, जिनके पास ये लोग समाधान के लिए जाते हैं, उनकी बात को ध्यान से सुनने से इंकार कर देते हैं अथवा उसे कोई गंभीर समस्या मानते ही नहीं। परिणामस्पर्श ये लोग नीम—हकीमों के पास पहुंच जाते हैं जो इनकी असहाय स्थिति का नाजायज फायदा उठाकर इन्हें लूटते हैं और आमतौर से वे इनकी समस्या का कोई समाधान नहीं करते, न ही इनका इलाज करते हैं। ऐसे व्यक्तियों का इलाज करने वाले चिकित्सकों को न केवल हमदर्द और जानकार होना चाहिए वरन् उन्हें अपने मरीजों के प्रति सही दृष्टिकोण भी रखना चाहिए।

ऐसे सफल मैथुन पर जिससे दोनों भागीदार संतुष्ट हो जाएं, दोनों भागीदारों की मनस्थिति का भी प्रभाव पड़ता है। अनेक व्यक्तियों से यौन संपर्क, यौन संचरित रोगों से पीड़ित हो जाने की आशंका अथवा वास्तव में उनसे ग्रस्त हो जाना और उनके कारण दीर्घकाल तक होने वाली कठिनाइयां, उनके पुनः सक्रिय हो जाने के अवसर, भागीदार की संक्रमता आदि सब कारक संतोषजनक मैथुन में बाधा डाल सकते हैं।

बलात्कार की घटनाओं को छोड़कर यौन संचरित रोगों के अर्जन को बहुत हद तक, वास्तविक यौन संपर्क बनाने से पहले सोच—समझ कर उठाया गया कदम माना जा सकता है। मैथुन किया जाना चाहिए अथवा नहीं इस फैसले में अनेक कारक योग देते हैं।

## सामान्य यौन क्रियाएं

यौन जागृति का अर्थ है कि हम अपनी कामोत्तेजना के अनुरूप कितनी आसानी से कार्य करते हैं। इस तैयारी में लिंग के स्तंभन अथवा योनि में अधिक रक्त के प्रवाह के साथ—साथ मानसिक उत्तेजना भी शामिल होती है। पुरुष और स्त्री, दोनों में, यौन उत्तेजना रक्त में टेस्टोस्टेरोन की मात्रा में वृद्धि के साथ, संबद्ध होती है। स्त्रियों में यौन उत्तेजना की कमी “ठंडेपन” के रूप में अभिव्यक्त होती है और पुरुष में लिंग के स्तंभन न होने के रूप में। इस स्थिति में एंड्रोजन दे देने से उत्तेजना बढ़ जाती है। ‘मास्टर्स और जानसन’ तकनीक

का समुचित रूप से उपयोग करने से भी इस परिस्थिति में मदद मिल सकती है। यौन दक्षता वह क्षमता है जिससे इच्छित यौन क्रियाएं सफलतापूर्वक की जा सकें। यौन असामान्यता अथवा विषमता के लक्षणों के रूप में पुरुषों में लिंग का स्तंभन न होना (नपुंसकता), समय से पूर्व या मंदित स्खलन शामिल हैं तथा स्त्रियों में चरमावस्था दुष्क्रिया (ऑरगेस्मिक डायफंक्शन) के लक्षण हैं योनि का स्नेहन न होना और योनि आकर्ष।

### सामान्य यौन अनुक्रिया के चरण

सामान्य यौन अनुक्रिया के चार चरण होते हैं:-

- (1) उत्तेजना अवस्था : काम संवेदी क्षेत्रों के उद्दीपन के पलस्वरूप यौन उत्तेजना पैदा होती है। ऐसे संवेदी स्थल पुरुषों और स्त्रियों दोनों में, जननांगों तथा अन्य अंगों में स्थित होते हैं। आमतौर से ऐसे स्थलों पर तंत्रिकाओं का जमघट होता है। जननांगों के अतिरिक्त स्त्रियों में ऐसे स्थल होते हैं ऑंठ, चूचियां और छातियां तथा पुरुषों में जघन बाल और जांधों के अंदरूनी भाग। जननांग संवेदी स्थल हैं, यौन लिंग, बृहत और लघु भगोष्ठों के ऑंठ, भगशिशिनका और योनि के बाहरी भाग। वैसे व्यक्ति विशेष के शरीर में वे अंग जिनकों छूने से उसे आनन्द का अनुभव होता है और यौन इच्छा जागृत होती है, अलग-अलग हो सकते हैं। पति-पत्नी इन्हें अपने अनुभव से जान लेते हैं।
- (2) प्लेटो-चरण : इस चरण में हृदय के धड़कने की गति बढ़ जाती है। अनुशिथिलन रक्तचाप 10 से 20 मिमी. बढ़ जाता है। श्वसन दर भी बढ़ सकती है और पसीना आ सकता है।
- (3) चरमावस्था : इस अवस्था में मैथुन शिखर अवस्था में पहुंच जाता है। दोनों भागीदारों को मैथुन में संतोष प्राप्त होता है। पुरुषों में यह वीर्य स्खलन की अवस्था होती है।
- (4) समाप्ति : उक्त क्रिया के बाद उत्तेजना के शांत होने के लक्षण प्रगट होने लगते हैं और मैथुन के भागीदार थकान परंतु संतोष और खुशी महसूस करने लगते हैं। लिंग सिकुड़ने लगता है और स्त्री की योनि का फैलाव कम होने लगता है।

## पुरुषों में मैथुन से संबद्ध अंग और क्रियाएं

**स्तंभन :** पुरुष के शिश्न का स्तंभन दूसरे, तीसरे और चौथे संक्रमी खंड से उत्पन्न होने वाली परानुकम्पी क्रिया के फलस्वरूप होने वाले वाहिका विस्फार के कारण होता है। मुंड से केन्द्र के आवेग संक्रमी खंड तक आंतरिक गुह्य तंत्रिका के रास्ते पहुंचते हैं। ये आवेग मूत्र मार्ग के इर्दगिर्द की मांसपेशियों को संकुचित कर देते हैं जिनके फलस्वरूप शिश्न से होने वाला शिरायी प्रवाह संपीड़ित हो जाता है। इस प्रकार लिंग के कांड में रक्त फंस जाता है शिश्न कठोर हो जाता है और परिणाम होता है स्तंभन।

**उत्सर्जन :** वक्ष-कटि खंडों से उत्पन्न होने वाली अनुकम्पी क्रिया के फलस्वरूप शुक्रवाहिका का संकुचन हो जाता है।

**स्खलन :** इसमें शिश्न के मूत्रमार्ग के इर्दगिर्द की मांसपेशियों के संकुचन के फलस्वरूप योनि में वीर्य झटके से गिरता है।

## यौन संबंधी मनोवैज्ञानिक समस्याएं और विकार

ये निम्न कारणों से हो सकते हैं :-

- यौन क्रियाओं और उनके सफलतापूर्वक सम्पन्न होने से संबंधित समस्याएं
- प्राथमिक मनोविकारी रोग अवस्था
- यौन संचरित रोगों के द्वितीयक विकार
- यौन क्रियाएं और उनके सफलतापूर्वक सम्पन्न होने से संबंधित समस्याएं
- जवान व्यक्तियों की कुछ प्रचलित यौन असामान्यता/समस्याएं इस प्रकार हैं :

## पुरुषों में यौन मनोविकार

**नपुंसकता :** नपुंसकता का शाब्दिक अर्थ है “काम शक्ति की कमी”, “अयोग्यता”, “कमजोरी” “असहाय हो जाना” आदि। वैसे जिन पुरुषों में यौन क्रियाएं करने की अथवा समुचित तरीके से करने की क्षमता की कमी होती है उन्हें भी आमतौर से “नपुंसक” कह दिया जाता है। पुरुषों के लिए नपुंसकता

उसी प्रकार का लक्षण है जैसे स्त्रियों के लिए “ठंडापन”। ये शब्द सामाजिक तौर पर अपमानजनक माने जाते हैं। इसलिए मनोवैज्ञानिक इनके स्थान पर “स्तंभन असामान्यता”, “स्तंभन समस्या” और “अपूर्ण स्तंभन” जैसे शब्दों का उपयोग करते हैं। वैसे ये समस्याएं बहुत अधिक व्यक्तियों, यहां तक 50 प्रतिशत व्यक्तियों में होती हैं। ये शिश्न को तंत्रिका अथवा वाहिकाओं की सप्लाई से संबंधित कारकों से उत्पन्न होने वाली समस्याएं हैं। अन्य लोगों में इन समस्याओं का उद्गम यौन क्रिया करने के तरीके से अनभिज्ञ अथवा मनोवैज्ञानिक हो सकता है और उसी तरीके से उन्हें हल किया जाना चाहिए। उपचार करने वाले चिकित्सक को रोग की प्रकृति को मरीज और यौन क्रियाओं में रोगी के भागीदार को, भली प्रकार समझाना चाहिए, उन्हें समस्या के हल सुझाना चाहिए और दोनों के ‘मास्टर्स और जानसन’ तकनीक जैसे उपाय समझाने चाहिए।

कामेच्छा में कमी उम्र के बढ़ने के साथ बढ़ती जाती है। पुरुषों में कामेच्छा 15 से 35 वर्ष तक की आयु में शिखर पर होती है जबकि स्त्रियों में 25 से 35 वर्ष की आयु के बीच यौन कामेच्छा अपने शिखर पर होती है। 70 वर्ष की आयु में 50 प्रतिशत पुरुष नपुंसक हो जाते हैं। इसलिए यह निष्कर्ष निकालना सही होता है जैविक नपुंसकता आयु के साथ बढ़ती जाती है। एक थका हुआ, पुरुष, जिसके मस्तिष्क में समस्याओं का अंबार भरा हो, यौन क्रियाओं के प्रति कम रुझान दर्शाता है। इसे चिकित्सक “बैरिस्टर की नपुंसकता” – (बैरिस्टर्स इंपोटेंस) जैसे अटपटे नाम से पुकारते हैं। सुप्त समलैंगिकता, अपने भागीदार में रुचि न होना, अवसाद आदि कुछ अन्य ऐसे कारक हैं जिनसे व्यक्ति की यौन इच्छा कम हो जाती है। मेरुरज्जु पुच्छ (कॉड़ा इक्वीना) में रसौली और कार्टीकोस्टीरायड, उच्च रक्तचाप–रोधी और अवसादरोधी औषधियों के परिणामस्वरूप भी यौन इच्छा घट जाती है। संशोधित मास्टर्स और जॉनसन तकनीक : इसमें यौन असामान्यता के शारीरिक और मनोविकारी कारणों को अलग करके, रोगी की समस्या की, उसके भागीदार की उपस्थिति में विवेचना की जाती है। पहली दो–तीन बैठकों में पति–पत्नी को समस्या की प्रकृति समझाने की कोशिश की जाती है। बाद में उन्हें एक–दूसरे के उनके संवेदनशील अंगों की जानकारी प्राप्त कराने के

लिए उनसे एक—दूसरे के शारीरिक अंगों को (जननांगों के अतिरिक्त) छूने के लिए कहा जाता है। साथ ही उनसे यह भी बताने के लिए कहा जाता है उन्हें किस प्रकार के स्पर्श से आनंद की अनुभूति होती है। इस प्रकार की संवेदना केन्द्रित तकनीक को कुछ दिन तक आजमाने के बाद जब पति—पत्नी को एक दूसरे के प्रति आकर्षण महसूस होने लगता है तब जननांग संवेदन स्थल ज्ञात करने के लिए आदेश दिये जाते हैं, जिससे वे एक दूसरे की कामेच्छा को जागृत कर सकें। जब दो—तीन दिन तक दोनों एक दूसरे को उत्तेजित करना सीख जाते हैं, तब उनको सहवास करने के लिए कहा जाता है पर मैथुन के दौरान स्त्री ऊपर रहती है। यदि इस प्रकार से दो या तीन दिन तक, सफल मैथुन हो जाता है तब नपुसक समझे जाने वाले पुरुष को सामान्य तरीके से, अर्थात् पुरुष को ऊपर रहकर मैथुन करने के लिए कहा जाता है।

यह तकनीक यदि किसी दक्ष और अनुभवी चिकित्सक द्वारा समझायी जाती है और उन चरणों में, जिन्हें संक्षेप में ऊपर समझाया गया है, कार्यान्वित की जाती है तब औषधियों के अनावश्यक सेवन के बिना ही, बहुत लाभ हो सकता है।

**धात दोष :** सामान्यतः स्वस्थ पुरुषों में लिंग के मूत्रमार्ग के मुख पर वीर्य की कोई बूद यौन क्रिया के लिए उत्तेजना या मैथुन के समय के अतिरिक्त, कभी नहीं आती। परंतु कुछ जवान पुरुषों में मूत्र अथवा मल त्यागते समय लगभग नियमित रूप से इस स्थल पर सफेद, चिपकने वाले तरल की बूदें उभर आती हैं। यह समस्या उस समय उग्रतर हो जाती है जब व्यक्ति को कब्ज रहती है और मल त्यागने में जोर लगाना पड़ता है। बोलचाल की भाषा में इसे “धात दोष” कहा जाता है। (“धात” शब्द का अर्थ है “वीर्य”)। पश्चिमी साहित्य में इसे “बांगलादेशी संलक्षण” (बांगलादेशी सिन्ड्रोम) कहा जाता है क्योंकि यह संलक्षण ब्रिटेन/अमेरिका में रहने वाले उन बांगला देशवासियों में देखा गया था जो लंबे समय से अपनी पत्नी से अलग रह रहे थे। विचित्र बात यह है कि पश्चिमी देशों के निवासी किसी ऐसी व्याधि की शिकायत नहीं करते और उनके चिकित्सा साहित्य में इसका कोई वर्णन नहीं है।

ऐसे जवान व्यक्ति कमजोरी के, चक्कर आने की और अपनी पूरी क्षमता से कार्य न कर पाने की शिकायत भी करते हैं। कुछ लोगों में अल्कोहल तथा

गर्भ या मसालेदार भोजन, चाय, काफी आदि के सेवन से यह शिकायत बढ़ जाती है। इनमें से अनेक व्यक्ति सफाई के रूप में अत्यधिक हस्तमैथुन करने अथवा वेश्यालयों में जाते रहने के अपने इतिहास को पेश करते हैं। इनमें से चिंताग्रस्त, गरीब तबके के व्यक्ति भी होते हैं जिन्हें पर्याप्त पौष्टिक भोजन नहीं मिलता और जो अपनी नौकरी अथवा धंधे के कारण लंबे समय तक पत्नी से अलग रहने के लिए मजबूर होते हैं। मामूली सी उत्तेजना से, किसी सुंदर लड़की को देखने से, बस आदि में उसके कपड़ों या शरीर के छू जाने मात्र से मूत्र मार्ग के मुख पर आने वाले सफेद तरल का गाढ़ापन और संरचना वीर्य से भिन्न होती है। अधिकाशतः, उसमें शुक्राणु नहीं होते। कदाचित् यह तरल काऊपर और प्रॉस्ट्रैट ग्रंथियों के अत्यधिक भर जाने के फलस्वरूप होने वाला स्राव होता है जो यौन उत्तेजना के कारण अथवा भरे हुए कोलन/मलाशय या मूत्राशय द्वारा प्रॉस्ट्रैट पर पड़ने वाले दबाव के फलस्वरूप निकलने लगता है।

उक्त विकार से पीड़ित व्यक्तियों को यह समझाना जरूरी है कि चिपकने वाला विसर्जन वीर्य नहीं है वरन् ग्रंथियों से निकलने वाला एक ऐसा स्राव है जो सामान्यतः यौन क्रिया से पहले वीर्य के प्रवाह मार्ग को चिकनाईयुक्त बनाने के लिए निकलता है। इस स्राव का निकलना कोई गंभीर समस्या नहीं है क्योंकि इससे वीर्य की हानि नहीं होती। इससे बचने के लिए व्यक्ति को स्वयं को तनावमुक्त रखना चाहिए, पौष्टिक भोजन खाना चाहिए, मसालेदार भोजन नहीं खाना चाहिए तथा कब्ज न होने देना चाहिए। स्वास्थ्य में सुधार होने से मूत्राशय और कूलहें की मांसपेशियों भी बेहतर तरीके से कार्य करने लगेंगी और मूत्र मार्ग पर आ जाने वाला तरल भी लुप्त हो जाएगा।

**स्वप्नदोष :** यह विकार भी एशियाई निवासियों का विशेष विकार है और पश्चिमी देशों के निवासी इससे मुक्त रहते हैं। इस विकार में नींद के दौरान एकाएक वीर्य स्खलित हो जाता है। ऐसा होने के अवसर सप्ताह में दो या तीन से लेकर महिने में एक बार तक होते हैं। अधिकतर ऐसा जवान, अविवाहित पुरुषों के साथ होता है। आमतौर से ऐसा उस समय होता है जब व्यक्ति रात में गहरी नींद में सो रहा होता है। अनजाने में एकाएक वीर्य के स्खलित हो जाने से कपड़ों के गीले हो जाने से उनकी नींद खुल जाती है। पर अनेक

व्यक्तियों को स्खलन के पहले लड़कियों के घनिष्ठ शारीरिक संपर्क करने अथवा उनके साथ मैथुन करने के सपने आते हैं। स्वज्ञदोष चाहे किसी भी किस्म का हो उसका कोई विशेष महत्व नहीं होता और रोगी को सिवाय आश्वासन और समझाने के किसी विशेष चिकित्सा की जरूरत नहीं होती। उसे समझाना चाहिए कि शरीर में वीर्य का निर्माण हमेशा होता रहता है और जब भी उसका निर्माण आवश्यकता से अधिक हो जाता है तब उसका स्खलन हो जाता है। मैथुन या हस्तमैथुन जैसी सामान्य क्रियाओं के न होने पर प्रियतमा के बारे में सोचने और स्वज्ञ देखने के दौरान, वीर्य का स्खलन हो जाना स्वाभाविक है।

कुछ हालातों में दिन के समय भी जब पुरुष पूरी तरह जगा हुआ होता है और सिनेमा हाल, क्लास रूम अथवा दफ्तर, बस, रेल जैसे सार्वजनिक स्थलों पर, लड़कियों के संपर्क में आता है, उसका वीर्यपतन हो जाता है। कभी-कभी इससे अत्यंत आपत्तिजनक स्थिति पैदा हो जाती है और पुरुष की आजीविका पर भी बन आती है। ऐसा शायद अनुकंपी तंत्रिका तंत्र के अत्यधिक सक्रिय होने के फलस्वरूप होता है। एकाएक स्खलन को नियंत्रित करने और रोकने में मेल्लेरिल (थाओरिडाजीन) या लारपोज (लोराजेपम) मदद कर सकती है।

**हस्तमैथुन :** हस्तमैथुन का अर्थ है बाह्य जननांग को हाथ अथवा किसी यांत्रिक तरीके से उत्तेजित कराकर यौन क्रिया की चरम सीमा तक पहुंचा देना। हस्तमैथुन सार्वभौमिक रूप से सब किशोरों द्वारा शादी से पहले, अथवा मैथुन के विकल्प के रूप में, विपरीत लिंगी व्यक्ति से मैथुन करने से पहले किया जाता है। शादी के बाद भी, यह कार्य भागीदार की अनुपस्थिति में यौन तनाव की मुक्ति के लिए अथवा यौन क्रिया में विविधता लाने के लिए स्त्री द्वारा अपने पुरुष साथी के साथ किया जाता है। इस कार्य के दौरान पुरुष आमतौर से किसी कात्पनिक स्त्री पर अथवा वास्तविक जीवन की किसी घटना पर विचार केन्द्रित कर लेता है। इन हालातों में हस्तमैथुन करना असामान्य व्यवहार नहीं है। परंतु सामाजिक-सांस्कृतिक रुद्धियां हस्तमैथुन को हतोत्साहित करती हैं और उसे व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए हानिकारी मानती हैं। यह एक गलत मान्यता है कि एक बूँद वीर्य के

निर्माण के लिए रक्त की बड़ी मात्रा में आवश्यकता होती है। इसलिए वीर्य को हस्तमैथुन द्वारा नष्ट नहीं करना चाहिए। यह एकदम गलत बात है कि वीर्य का संरक्षण ही जीवन है और उसका पतन मृत्यु। जब कमजोर इच्छा शक्ति वाला व्यक्ति सामाजिक मान्यताओं के अनुसार अपनी कामेच्छा को दबाने का प्रयत्न करता है तब वह बहुत तनावग्रस्त हो जाता है, वह भली प्रकार से सो नहीं पाता और यौन कल्पनाओं में फंस जाता है। इस प्रकार के व्यक्तियों की प्रवृत्ति के बारे में स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करने में मदद की जानी चाहिए।

कभी—कभी कुछ व्यक्ति हस्तमैथुन के आदी हो जाते हैं। उनके लिए यह एक नशे के समान हो जाता है। सब के सामने हस्तमैथुन करना अथवा शादी के बाद भी विपरीत लिंगी व्यक्ति के साथ यौन क्रिया करने के विकल्प के रूप में हस्तमैथुन करने को एक असामान्य व्यवहार मानना चाहिए। इस प्रकार का व्यवहार सामान्य, परिपक्व, स्थिर तथा आत्म—विश्वास और स्वावलंबिता से भरपूर व्यक्तित्व में बाधक सिद्ध होता है। ऐसे लोगों को सलाह दी जाती है कि वे अत्यधिक हस्तमैथुन न करें और विपरीत लिंगी व्यक्ति से सामान्य यौन क्रिया करें।

**शीघ्र पतन :** इस स्थिति में योनि में लिंग प्रवेश करते समय ही अथवा प्रविष्ट कराने के बाद बहुत जल्दी ही स्खलत हो जाता है जिससे स्त्री अधिकांश बार मैथुन की चरमावस्था में नहीं पहुंच पाती। समयपूर्व स्खलन को “शीघ्र चरमावस्था प्राप्त करना” भी कहा जा सकता है। इससे स्त्री द्वारा पुरुष से की जा रही आशा और उसके (यौन) कार्य सम्पन्न करने की क्षमता में अंतर रह जाता है।

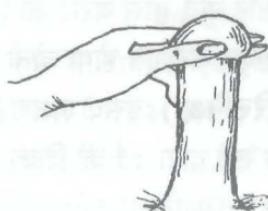
कुछ हालातों में इस प्रकार के व्यवहार के लिए मैथुन करने में नौसिखिया और अनुभवहीन होने, या मैथुन करते हुए देखे जाने का डर, अथवा स्त्री द्वारा मैथुन ठीक प्रकार से न कर पाने का दोषारोपण लगाने का भय जैसे कारण उत्तरदायी होते हैं। अन्य अवसरों पर लंबे समय तक ब्रह्मचर्य पालन करने के बाद मैथुन करना, मैथुन के भागीदारों में आपसी मन—मुटाव अथवा डायबेटीज मेलीटस (मधुमेह) जैसे तथा जननांग—मूत्राशय तंत्र के रोग और तंत्रिका तंत्र में विकार पुरुषों में शीघ्र पतन के कारण हो सकते हैं।

इस स्थिति में मैथुन के दौरान वीर्य स्खलन के पूर्व, मैथुन क्रिया को रोक

कर एक अंतराल के बाद पुनः क्रिया आरंभ करके सुधार किया जा सकता है। इससे समय-पूर्व स्खलन से बचा जा सकता है। इसे रोकने के लिए एक अन्य तकनीक भी आजमायी जा सकती है। मैथुन के दौरान, स्खलन होने से पूर्व शिश्न को योनि में से बाहर निकाल कर, लिंग की टोपी को अगूठे और अंगुलियों से 3-4 सेकंड तक दबा दें। (चित्र - 34) लिंग में आवश्यकता से अधिक भरा रक्त वापिस आ जाएगा। ऐसा होने जाने पर कुछ क्षणों के लिए रुककर फिर मैथुन क्रिया आरंभ कर दें। शीघ्र पतन के विकार पर दोनों भागीदारों के सहयोग और समझ से, काबू पाया जा सकता है।

इस स्थिति में अत्यधिक-उत्तेजना को शांत करके और शुक्रवाहिका के संपीड़न को औषधियों द्वारा-विलंबित करके भी, सुधार किया जा सकता है। इसके लिए चिकित्सक की सलाह और निर्देशन से लारपोज और लोमीप्रामीन जैसी औषधियां ली जा सकती हैं। वैसे पति-पत्नी संशोधित मास्टर्स और जॉनसन तकनीक को भी अपना सकते हैं।

**लिंग के बारे में भ्रांति :** कुछ व्यक्तियों को, पुरुष होते हुए भी, स्त्रियों के सदृश्य इच्छाएं होती हैं, उदाहरणार्थ किसी लड़के को लड़कियों के समान कपड़े पहनने की इच्छा का होना। ऐसे लोग “इतरलिंग वस्त्रकामुक” (ट्रांसवेस्टाइट) कहलाते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ व्यक्तियों के दिल में जन्मजात ही यह बात बैठी रहती है कि उनके लिंग गलत है। अगर वे पुरुष हैं तो उनके विचार से उन्हें स्त्री होना चाहिए था और यदि स्त्री हैं तब वे सोचते हैं कि वास्तव में वे पुरुष हैं इस प्रकार का विचार जन्मजात होता है। इसलिए उसे किसी भी इलाज से स्वस्थ नहीं बनाया जा सकता। आधुनिक चिकित्सा विचारधारा के अनुसार उनकी मानसिक धारणाओं के अनुसार ही उनके शरीर में संशोधन करने के प्रयत्न किए गए हैं।



चित्र 34 : निचोड़ने की तकनीक

**यौन पसंद :** विपरीत लिंगी अथवा समान लिंगी के प्रति यौनाकर्षण अपने स्वभाव के अनुसार होता है। अधिकांश व्यक्ति विपरीत लिंगी व्यक्ति की ओर यौनाकर्षित होते हैं और सामाजिक प्रथा भी यही है। पर कुछ व्यक्ति समानलिंगी व्यक्ति की ओर यौनाकर्षित होते हैं। उनके इस आकर्षण में बदलाव लाना कठिन होता है।

**वस्तुकामुकता :** इस विकार से पीड़ित व्यक्ति अपनी कल्पना की किसी वस्तु के प्रति कामुक हो जाता है। यौन क्रिया के लिए उत्तेजित होने और चरम सीमा तक पहुंचने के लिए उस व्यक्ति को उसी वस्तु या अंग की कल्पना करना जरूरी हो जाता है।

**अत्यधिक हस्तमैथुन :** कुछ व्यक्ति अत्यधिक हस्तमैथुन के आदी हो जाते हैं।

**मौखिक मैथुन :** इसी प्रकार कुछ व्यक्ति मौखिक मैथुन करते हैं।

इन सब हालातों का इलाज औषधि नहीं वरन् परामर्श है।

## स्त्रियों के यौन मनोविकार

**योनि आकर्ष :** इस हालत में सहवास के दौरान अथवा उसके प्रयत्न के दौरान ही योनि के बाहरी तिहाई भाग में ऐठन आ जाती है जिसके परिणामस्वरूप पुरुष स्त्री की योनि में अपना शिश्न प्रविष्ट नहीं करा पाता और इस प्रकार विवाहित जोड़े में विवाह का एक अनिवार्य कार्य सम्पन्न नहीं हो पाता। इस हालत को मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने पर पता चलता है कि ऐसा स्त्री के मन में अतीत में हुई बलात्कार की कोशिश अथवा गलत यौन धारणाओं से सहवास के प्रति भयानक डर बैठ जाने के फलस्वरूप होता है। इस स्थिति से उसे मानसिक संबल देकर उभारा जा सकता है। एक कोमल स्पर्श, आनन्द पहुंचाने वाली एक अदा, और पति द्वारा बरते जाने वाला धैर्य इस आकर्ष को दूर कर सकता है। इसका परिणाम होगा दोनों भागीदारों की संतुष्टि।

**कृच्छ मैथुन (डायस्पैरिचनिआ) :** इसके लक्षण हैं पुरुष के योनि में शिश्न प्रविष्ट कराने के फलस्वरूप स्त्री द्वारा दर्द की शिकायत। चिंता उत्पन्न करने वाली अनेक परिस्थितियां इस स्थिति को बढ़ावा दे सकती हैं। परंतु अनेक

शारीरिक कारकों यथा मोटा, बिना फटा योनिच्छेद भग अथवा योनि की बनावट में जन्मजात विकार, शल्य कर्म के बाद हो जाने वाला घाव, अथवा रजोनिवृत्ति आयु भी इसके कारण हो सकते हैं। भग – योनि आकर्ष से भी यह स्थिति पैदा हो सकती है। कृच्छ मैथुन के अन्य कारण हैं कूलहों पर सूजन उत्पन्न करने वाले रोग, अन्तर्गर्भाशय – अस्थानता (एन्डोमेट्रीओसिस), योनि पुनः निर्माण शल्य कर्म के फलस्वरूप योनि का छोटा हो जाना आदि।

**ठंडापन :** इस स्थिति में स्त्री यौन क्रियाओं में कोई रुचि लेती प्रतीत नहीं होती। वह अपनी जांघों और जननांगों को कस लेती है। इससे योनि में शिश्न का प्रवेश कठिन हो जाता है। कभी–कभी ऐसा इस भ्रम के फलस्वरूप भी होता है कि उसकी योनि पुरुष के लंबे और कठोर शिश्न को प्रविष्ट कराने के लिए बहुत छोटी है। पर वह एक भ्रांति है क्योंकि योनि की दीवारें बहुत लचीली होती हैं। वैसे कुछ बीमारियां यथा योनिशोथ और कूलहों पर संक्रमण होने से तथा मैथुन के दौरान दर्द होने से भी स्त्री में ठंडापन आ जाता है। इस बारे में सही कारण का सावधानीपूर्वक पता लगाया जाना जरूरी होता है। यदि ठंडापन केवल डर के कारण है तब स्त्री को समझाया जाना चाहिए।

लेकिन यदि वह किसी रोग के कारण है तब उसका इलाज किया जाना जरूरी है।

### प्राथमिक मनोविकारी रोग अवस्थाएं

**यौन संचरित रोगों का भय (वेनेरोफोबिया) –** यौन संचरित रोगों का उपचार करने वाले अस्पतालों/कन्द्रों में आने वाले अधिकांश मरीजों को यह चिंता रहती है कि यौन संपर्क करने के बाद वे इन रोगों से संक्रमित हो गए हैं। चिंता तथा तांत्रिक अवसाद वाले कुछ रोगियों के दिल में सदा यह डर बना रहता है कि वे अब भी – चिकित्सक द्वारा स्पष्ट रूप से यह बताए जाने के बाद भी कि वे यौन संचरित रोगों से एकदम मुक्ति पा चुके हैं इन रोगों से, विशेष रूप से सिफिलिस, सुजाक अथवा जननांग हर्पेज से,— पीड़ित हैं। इन हालातों में आमतौर से रोग का भय चिकित्सक के साथ, मरीज द्वारा अपनी समस्या विस्तार के साथ बताने से दूर हो जाता है और चिकित्सक

द्वारा आश्वस्त किए जाने पर कि “ उनका पूर्ण रूप से इलाज हो गया है ” दूर हो जाता है । परंतु कभी—कभी उनका यह डर जल्दी ही फिर से उभर आता है । यौन संचरित रोगों के भय को दूर करने का सर्वोत्तम उपाय है मरीज की परामर्श/सुझाव द्वारा सहमत और ट्राइसाइक्लिक प्रति — अवसादक जैसी चिंता से मुक्ति दिलाने वाली औषधियां ।

**भ्रांति :** (सीजोफ्रेनिआ और मनोअवसाद की हालातों में देखे जाने वाले मनोविकार) : इस हालत में मरीज के मन में यह भ्रम स्थायी तौर पर घर कर लेता है कि वह किसी यौन संचरित रोग से पीड़ित है । उदाहरण के तौर पर वह व्यक्ति भी जिसके सिफिलिस का पूर्ण रूप से उपचार हो गया है यह समझता रहे कि उसके भूलने की आदत और सिर दर्द तंत्रिका सिफिलिस की वजह से हैं । इसी प्रकार उन लोगों के दिमाग में, जिन्होने ऐसे व्यक्ति से यौन संपर्क किया जिसके एच.आई.वी. से संक्रमित होने के बारे में उन्हें संदेह था विचार आ जाता है कि वे एड्स से ग्रस्त हो गए हैं चाहे परीक्षणों में वे एच.आई.वी. से संक्रमित नहीं पाए गए हों । वे चिकित्सक के विस्तार से समझाने के बाद भी अपने गलत विचार नहीं बदलते । उन पर चिकित्सक के यह समझाने का किं वे किसी ऐसे रोग से पीड़ित नहीं हैं और न ही एच.आई.वी. संक्रमण से ग्रस्त हैं और न ही यौन क्रिया में उनके भागीदार के एच.आई.वी. से संक्रमित होने का डर है, उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । ऐसे मरीजों की देखभाल के लिए उन्हें मनोवैज्ञानिकों के पास भेजना चाहिए ।

### यौन संचरित रोगों के परिणामस्वरूप उत्पन्न यौन मनोविकृतियां

**सिफिलिस :** सिफिलिस की इस क्षमता को मानते हुए कि वह एक साथ शरीर के विभिन्न अंगों और संस्थानों को ग्रस्त कर सकता है, वह दिल, बड़ी वाहिकाओं, तंत्रिका तंत्र, त्वचा और हड्डियों को प्रथम संक्रमण के दस—बीस वर्ष बाद भी हानि पहुंचा सकता है । वह कैंसर से भी बदतर रोग माना जाता है क्योंकि वह मरीज के सोचने की क्षमता को भी प्रभावित कर सकता है । जन्मजात सिफिलिस के लांछन से ग्रस्त किसी युवक/युवती को जब यह पता चलता है कि उसकी यह हालत सिफिलिस से ग्रस्त उसके माता — पिता के

फलस्वरूप हुई है, तब वह बहुत अधिक बैचेन हो जाता है।

**सुजाक और गैर-सुजाकीय मूत्र मार्ग शोथ :** आजकल सुजाक तथा उसके फलस्वरूप और अन्य कारणों से उत्पन्न मूत्रमार्ग शोथ का आसानी से उपचार किया जा सकता है। उसकी उद्भवन (इन्क्यूबेशन) अवधि कम होती है। इसलिए सुजाक से पीड़ित व्यक्तियों के यौन क्रियाओं में अपने स्थायी विवाहित भागीदार के उस रोग से शीघ्र ही संक्रमित हो जाने की आशंका काफी अधिक होती है। इसलिए दोनों भागीदारों का साथ-साथ इलाज होना जरूरी होता है।

इस परिस्थिति में संक्रमण उत्पन्न करने वाला भागीदार स्वयं को न केवल अपराधी समझने लगता है, उसे अपने-आप से ग्लानि होने लगती है वरन् वह अत्यधिक मनोवैज्ञानिक दबाव भी महसूस करने लगता है। अनेक बार, कुछ समय तक यौन क्रियाओं के प्रति संयम बरतने से भी घनिष्ठ वैवाहिक संबंधों में बहुत गड़बड़ी पैदा होने लगती है, क्योंकि संक्रमित भागीदार इस परिस्थिति को भलीभाँति समझ नहीं पाता। पति-पत्नी के बीच आपसी समझदारी और चिकित्सकों द्वारा दोनों को संयुक्त रूप से रोग की चिकित्सा और रोकथाम के बारे में परामर्श देकर, हालत में सुधार किया जा सकता है। स्त्रियों में श्वेत प्रदर और जननांग विसर्जन : यदि स्त्री की योनि में से बहुत अधिक विसर्जन होने लगता है तब भी यौन संबंध असहज हो जाते हैं। यौन क्रियाओं में भागीदार व्यक्तियों में व्याकुलता उत्पन्न हो सकती है। इसलिए स्त्री के लिए अपने पुरुष साथी को विसर्जन के सही कारण (संक्रमण अथवा कोई अन्य) को पूरी तरह समझाना बहुत जरूरी होता है। अनेक संक्रामक विसर्जनों यथा ट्राइकोमोनीयता अनांकसी योनिआकर्ष और कैंडिडिआक्सिता में दोनों भागीदारों का, एक साथ, इलाज किया जाना चाहिए। जननांग कैंडिडिआक्सिता किसी गंभीर गुप्त मनोयौन विकृति यथा योनि आकर्ष से पीड़ित स्त्री के शरीर में अवसरवश ही ज्ञात होने वाला रोग है। इस स्थिति में चिकित्सक को चाहिए कि वह किसी मैलीट्स जैसे उपायकीर्णी रोग की खोज करने की कोशिश करने की बजाय पति-पत्नी की मनोयौन व्याधि के लिए उनका एक साथ उपचार करे। जननांग विसर्जन से हल्का पीठ दर्द, कूलहों का तेज दर्द, कृच्छ मैथुन बंध्यता हो सकती है अथवा प्रजनन

क्षमता कमजोर हो सकती है। चिकित्सक को चाहिए कि वह पति-पत्नी, दोनों की, एक साथ जाँच करे और उन्हें रोग के सही कारण बताए। उसे उनकी रोष भावनाओं को शांत करना चाहिए तथा उनके बीच सौहार्द्र और परस्पर विश्वास की भावना जगानी चाहिए।

**जननांग हर्पेज :** जननांग हर्पेज से पीड़ित मरीज को शुरू में, जब वह प्रथम बार उसके यौन अंगों पर प्रगट होती है, तीव्र प्रतिक्रिया होती है और उससे यौन क्रियाओं में व्यवधान उत्पन्न हो जाता है। जब स्त्री को अपने रोग की प्रकृति के बारे में जानकारी होती है—जब उसे यह पता चलता है कि उसे यह रोग किस प्रकार लगा होगा तथा वह उससे उसके यौन भागीदार को तथा अपने आने वाले बच्चे को भी पीड़ित कर सकता है, तब उसे सबसे पहले रोग लगाने वाले के प्रति दुखः और गुस्सा आता है तथा उसके दिल में कुंठा और घोर निराशा के भाव आ जाते हैं। जननांग हर्पेज से पीड़ित होने के समय मरीज की मानसिक स्थिति पर और पहले से मौजूद मनोविकारों पर उसके भविष्य में फिर से उभर आने के अवसर निर्भर होते हैं। पहले से ही किसी मनोविकार से ग्रस्त मरीज के शरीर में यह बीमारी बार-बार उभर आती है। नींद की कमी, विपरीत जीवन परिस्थितियां और स्वयं संक्रमण की उपस्थिति मरीज के यौन जीवन को छोर तक गड़बड़ा देती है। नीचे दिए गए जननांग हर्पेज से पीड़ित दो मरीजों के कथन इस तथ्य को भली-भांति प्रदर्शित करते हैं।

**पहला मरीज :** 20 वर्ष की लड़की को जो एक भद्र पुरुष के साथ डेटिंग करती थी, हर्पेज हो गया। वह कहती है “मुझे इतना गुस्सा आता है कि चीखने का मन करता है। मैंने उससे मिलना छोड़ दिया है परंतु मुझे किसी अन्य पुरुष से भी मिलने में डर लगता है। मैं किसी अन्य व्यक्ति को यह रोग देने की बजाय मर जाना ज्यादा पसंद करूँगी। वे लोग कहते हैं, वक्त सब रोगों का इलाज देता है। पर इस बारे में मैं जानती हूँ कि वक्त कोई भी इलाज नहीं करेगा। वायरस मेरे शरीर में हमेशा के लिए बस गए हैं।”

**दूसरा मरीज :** मेरी उम्र 30 साल है। 22 वर्ष की उम्र में मुझे हर्पेज हो गया था। मैं बहुत ज्यादा निराश हो गई थी मुझे शर्म आती थी। मैं गंदगी महसूस करती थी और मुझे डर लगने लगा था कि कोई भी भला आदमी मेरे से कोई भी संबंध रखना पसंद नहीं करेगा। मेरे चिकित्सक ने मुझे परामर्श दिया...।”

“हर्पेज एक बहुत गंदी बीमारी है पर यह जरूरी नहीं कि वह मेरी जिंदगी बरबाद ही कर देती। एक साल के भीतर ही मुझे एक आदमी मिला जिसने मेरे हर्पेज से पीड़ित होने का कोई बुरा नहीं माना। हमने सीख लिया कि हम इकट्ठे हो कर उसका किस प्रकार सामना कर सकते हैं। उस व्यक्ति ने मुझे मेरा आत्मसम्मान वापस दिला दिया।”

हर्पेज से पीड़ित दो मरीजों के उपरोक्त, भिन्न-भिन्न कथन बहुत कुछ जाहिर करते हैं। हर्पेज से पीड़ित व्यक्ति पहले मरीज की भाँति एकदम निराश हो सकता है अथवा दूसरे मरीज की तरह, उचित सलाह और संबल मिल जाने पर, फिर से खुश होकर समस्या के प्रति उचित दृष्टिकोण अपना सकता है। वह अपने भागीदार से संबल और प्रोत्साहन पाकर यह सीख सकता है कि रोग का मुकाबला कैसे करना है और अपने आत्मसम्मान को कैसे पुनः प्राप्त करना है। ऐसे रोगियों का इलाज करने वाले चिकित्सक को चाहिए कि वह मरीजों के साथ काफी समय बिताए, अपनी बातचीत में स्पष्ट और हमर्दद हो तथा मरीजों के मन में, बिना किसी आधार के घर कर गए गलत विचारों—हर्पेज के मरीजों को कैंसर हो जाने, बांझ हो जाने, उनका गर्भपात हो जाने अथवा भविष्य में स्थायी यौन संबंध न बना पाने के विचारों— को दूर कर दे। रोग के आरंभिक चरण में और उसके पुनः उभर आने की स्थिति में रोगी को उचित तरीके से संभालने और मनोवैज्ञातिक संबल प्रदान करने से रोग पर भलीभांति काबू पाया जा सकता है।

**एच.आई.वी. रोग :** अपने अत्यंत विनाशकारी प्रभावों और किसी पूरी तरह रोगहर, प्रतिवायरसी, औषधि के उपलब्ध न होने से सिर्फ एच.आई.वी. की उपस्थिति के विचार मात्र से ही, संक्रमण की पुष्टि होने से पूर्व ही— मन में तनाव और चिंता उभर आती है। इस रोग के संबंध में लोगों को शिक्षित करने के अतिरिक्त, एच.आई.वी. एंटीबॉडी परीक्षण करने से पहले उन मरीजों को जिन्हें रोग होने का बहुत खतरा होता है और जो संदेहास्पद व्यक्तियों से यौन संबंध स्थापित करते रहें हैं, परामर्श देना चाहिए। परामर्श के दौरान इन व्यक्तियों के साथ सब महत्वपूर्ण मुद्दों पर स्पष्ट, बिना किसी संकोच के, बात होनी चाहिए।

एच.आई.वी. एंटीबॉडी की उपस्थिति की परख करने से पहले परामर्शदाता को निम्न महत्वपूर्ण मुद्दों पर बात करनी चाहिए :—

- एच.आई.वी. रोग के बारे में सामान्य सूचना।
- एच.आई.वी. परख का नतीजा सकारात्मक निकलने की स्थिति में

उत्पन्न होने वाली जटिलताएं।

- नकारात्मक परीक्षण का महत्व।
- परखे गए व्यक्ति से परीक्षण के नतीजे को गोपनीय रखना।
- परख से उत्पन्न मानसिक तनाव को संभालने के बारे में निर्देश।
- यदि परीक्षण का परिणाम सकारात्मक होता है तब रोगी को किन सामाजिक कठिनाइयों और समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है।

उन लोगों के साथ, जिनके अपने व्यवहार के फलस्वरूप उनके एच.आई.वी. रोग से ग्रस्त हो जाने की बहुत अधिक आशंका हो जाती है, इस परख को दुहराने और यौन संबंधों के बारे में अपनी जीवन शैली बदलने पर बल देना जरूरी है। सकारात्मक परिणाम वाले लोगों के सिलसिले में चिकित्सक को उन्हें लगने वाले आधात और अवसाद पर पहले ध्यान देना चाहिए और एच.आई.वी. रोग के बारे में उसी समय बात करनी चाहिए जब उनकी मानसिक हालत सुधर जाए। परीक्षण से पूर्व दिए जाने वाले परामर्श के बावजूद लगभग 50 प्रतिशत लोगों में चिंता और तनाव उत्पन्न हो जाता है। वे थकान और निराशा महसूस करने लगते हैं। साथ ही उन्हें मनोभ्रम हो जाता है। इस अवसाद के आधारभूत कारण होते हैं – जीवन के प्रति निराशात्मक दृष्टिकोण, आने वाली आर्थिक कठिनाइयां, एड्स से होने वाली शीघ्र मृत्यु की आशंका।

यौन हर व्यक्ति के जीवन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण अंश होने के नाते यौन क्रियाओं में असफलता यथा शीघ्रपतन, नपुंसकता, धात संलक्षण अथवा संभोग से यौन संचरित रोग लग जाने का भय जैसे प्राथमिक मनोविकारी रोगों से ग्रस्त हो जाने की निर्मूल आशंका वास्तव में हर व्यक्ति और यौन क्रिया में उसके भागीदार, दोनों के लिए दुखदायी हो सकती है। पूरी तरह जानबूझकर की गई यौन क्रियाओं के फलस्वरूप यौन संचरित रोगों से ग्रस्त हो जाने से स्वयं उस व्यक्ति के लिए तथा उसके भागीदार के साथ मनोवैज्ञानिक समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। यौन संचरित रोगों के विशेष अथवा इलाज करने वाले चिकित्सक का काम शरीरिक रोग के प्रबंध मात्र तक ही सीमित नहीं रहता है। उसे मरीज की तीव्र मनोवैज्ञानिक कुठाओं पर भी ध्यान देना चाहिए और उसका संपूर्ण रूप से इलाज करना चाहिए।

## अध्याय नौ

### यौन संचरित रोगों की रोकथाम

यौन संचरित रोगों की रोकथाम स्वयं व्यक्ति पर निर्भर होती है और कानून के जोर से अथवा दंड का भय दिखाकर यौन संचरित रोग उत्पन्न करने वाली क्रियाओं में लिप्त रहने वाले व्यक्ति को रोका नहीं जा सकता। जहां एक ओर अनेक पुराने यौन संचरित रोग यथा सिफिलिस, सुजाक आदि के प्रभावी एंटीबायोटिकों के फलस्वरूप उपचार हो रहे हैं, वहां दूसरी ओर वार्ट वायरस, हर्पीज सिम्प्लैक्स वायरस, एच.आई.वी. संक्रमण तथा एड्स जैसे यौन संचरित रोगों ने समस्या को और जटिल बना दिया है। इन वायरसजन्य यौन संचरित रोगों को पूर्ण रूप से दूर नहीं किया जा सकता। अधिक से अधिक इनका उपचार किया जा सकता है।

यौन रूप से सक्रिय व्यक्तियों में बिना किसी रोकटोक के यौन क्रियाओं में लिप्त रहने वाले लोग, वेश्या, काल-गर्ल, स्ट्रीट-वाकर, नशेबाज, वेश्यागामी व्यक्ति, दलाल, कुटनियां, बच्चों के साथ यौन क्रियाएं करने वाले, नंगी तस्वीरें देखने वाले समलिंगी व्यक्ति सब शामिल हैं। यौन क्रियाएं करना एक व्यक्तिगत और निजी मामला है। इसलिए इस क्षेत्र में कानूनी कार्यवाही करना अत्यंत कठिन होता है। रोकथाम के उपाय उन लोगों के लिए उपलब्ध हैं जो स्वयं अपनी तथा उन लोगों की जिनसे वे प्यार करते हैं, परवाह करते हैं पर उन्हें इन उपायों को हर मौके पर, विशेष रूप से जब वे ऐसी यौन क्रियाओं में जिनसे यौन संचरित रोग होने के खतरे होते हैं, लिप्त होते हैं अपनाना चाहिए।

यौन संचरित रोग नियंत्रण के मुख्य उद्देश्य हैं :

- यौन संचरित रोगों के संचरण को रोकना।
- यौन संचरित रोगों के विकास और उनके परिणामों यथा खराब स्वास्थ्य, बांझपन, स्त्रियों की पीठ में दर्द, नवजात शिशुओं और बच्चों में अंधापन आदि को रोकना।

यौन संचरित रोगों की रोकथाम निम्न बातों पर आधारित है :

1. लोगों को उन व्यक्तियों के साथ, जिनके यौन संचरित रोगों से संक्रमित होने की आशंका बहुत अधिक होती है, से यौन संबंध स्थापित न करने की सलाह देकर, इन रोगों के लगाने के अवसर कम करना।
2. अलक्षणी व्यक्तियों (ऐसे व्यक्ति जिनमें बाह्य लक्षण प्रगट नहीं हुए हैं) तथा ऐसे लक्षणी (जिनमें बाह्य लक्षण प्रगट हो गए हैं), पर जिनके रोग का निदान और उपचार कराने की संभावना कम होती है, संक्रमण की पहचान कराना। ऐसा उनके भागीदारों तथा स्वास्थ्य सेवा से संबंधित व्यक्तियों द्वारा प्रोत्साहन प्रदान करके किया जा सकता है।
3. उन व्यक्तियों का, जो संक्रमित हैं तथा जिनके लक्षणी ओर अलक्षणी सहभागी यौन संचरित रोगों से पीड़ित हैं, प्रभावशाली निदान और उपचार।
4. सहवास के दौरान कान्डोम अथवा अन्य गर्भनिरोधक युक्तियों का उपयोग करके संक्रमण को रोकना।

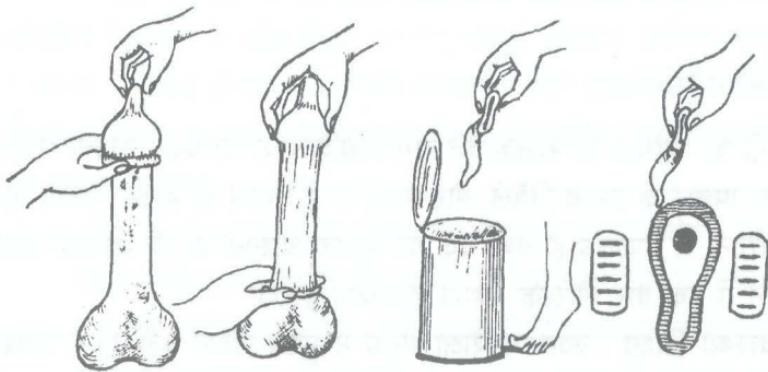
### सुरक्षित यौन क्रियाएं

ब्रह्मचर्य का पालन करने अथवा दोनों भागीदारों द्वारा पूरी वफादारी बरतने के अतिरिक्त यौन रूप से सक्रिय व्यक्तियों के यौन संचरित रोगों के बचाव का कोई अन्य रामबाण तरीका नहीं है। यौन संचरित रोगों से पीड़ित होने की आशंका को कम करने का सर्वोत्तम तरीका है सुरक्षित सहवास। इस तरीके में मैथुन हेतु अपना भागीदार चुनने और मैथुन करने में निम्न सावधानियां शामिल हैं :

- (1) गुदा मैथुन अस्वास्थ्यकारी और गंदा होता है तथा उससे अनेक यौन संचरित रोग लग सकते हैं। इसलिए शिश्न—गुदा मैथुन, मौखिक—गुदा संपर्क तथा गुदा में अंगुली नहीं करना चाहिए। मलाशयी श्लेष्मा का पृष्ठ योनि श्लेष्मा पृष्ठ की तुलना में अधिक नाजुक होता है। इसलिए गुदा—मैथुन से योनि—मैथुन की तुलना में मलाशय, योनि से अधिक फटता है। मौखिक—गुदा मैथुन न करके और यौन क्रियाओं के दौरान

गुदा में अंगुली न करके इन संक्रमणों से बचा जा सकता है।

- (2) मैथुन के दौरान कंडोम का इस्तेताल करें। (चित्र 35)



चित्र 35 : कंडोम के इस्तेमाल और फेंकने का सही तरीका

- (3) संक्रमण का खतरा महसूस होने पर मैथुन के बाद एंटीबायोटिक का उपयोग करें।
- (4) स्वच्छ स्वास्थ्यकारी विधियां अपनाए, जैसे स्नान के दौरान अपने जननांगों को भली-भांति धो लें। मैथुन के बाद उन्हें साबुन और पानी से धोने से और मूत्र त्यागने से यौन संचरित रोगों के होने की आशंका कम हो जाती है। यौन संचरित रोगों को निम्न कार्यों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है :

### (क) रोग का पता लगाना

- (1) स्क्रीनिंग – समाज में कुछ चुने हुए लोगों यथा रक्तदाता, औद्योगिक कर्मचारी, अक्सर यात्रा करने वाले लोगों, ट्रक चालकों, दूसरे स्थानों से आ बसे लोगों आदि, जो प्रत्यक्ष रूप से अपनी जांच नहीं करवाते, की सिफिलिस और एच.आई.वी. के लिए स्क्रीनिंग करके उन व्यक्तियों के इन रोगों से ग्रस्त होने की संभावना ज्ञात की जा सकती है।
- (2) अवसरवश पता लगना – अस्पताल में या प्रयोगशाला में किसी व्यक्ति

की अन्य रोगों के लिए जांच करते समय इन रोगों का पता चल जाना।

- (3) निदान – अस्पताल और प्रयोगशाला में किसी व्यक्ति की पूरी जांच करने के बाद रोगों का निदान करना।

### (ख) उपचार

रोगी को उपचार की सलाह देते समय चिकित्सक को ध्यान रखना चाहिए कि उपचार के प्रभाव विषैले और पार्श्व न हों। साथ ही इलाज सस्ता हो, आसानी से उपलब्ध हो तथा दवा की खुराक आसानी से ली जा सके यथा दिन में एक बार मौखिक अथवा इंजेक्शन द्वारा।

**स्वास्थ्य शिक्षा :** स्वास्थ्य शिक्षा संक्षेप में मुख्य संदेश देती है। ये संदेश विस्तृत नहीं होते और इनमें मरीज की अपनी यौन क्रियाओं की विवेचना नहीं होती। यौन संचरित रोगों की प्रभावशाली रोकथाम के लिए इस शिक्षा के अंतर्गत निम्न बातें शामिल की जाती चाहिए।

- (1) **सूचना :** समाज में जागृति उत्पन्न करने के लिए यौन संचरित रोगों के बारे में स्पष्ट और सही जानकारी प्रदान करना।
- (2) **शिक्षा :** इसका उद्देश्य है यौन संचरित रोगों और उनकी रोकथाम के संबंध में यौन और स्वास्थ्य के बारे में सही सूचना देना तथा स्वास्थ्य प्रदान करने वाले सकारात्मक परिवर्तन पैदा करना।
- (3) **प्रसार :** इसका उद्देश्य है अस्पताल में उपचार के बारे में दी जाने वाली हिदायतें देना यथा रोगों को दुबारा उभर आने से रोकना, कंडोम का उपयोग, यौन क्रियाओं में अपने भागीदार का परीक्षण और आवश्यक उपचार।

यौन संचरित रोगों से संबंधित स्वास्थ्य शिक्षा निम्न सिद्धांतों पर आधारित है:

- (1) श्रोताओं को दिए जाने वाले संदेश स्पष्ट, ग्राह्य और उनके अनुरूप होने चाहिए,
- (2) संदेशों की विषय-वस्तु बदलनी नहीं चाहिए, विशेष रूप से जब विभिन्न माध्यमों का उपयोग किया जाता है।

स्वास्थ्य शिक्षा के लिए इस्तेमाल की जाने वाली सामग्री और तकनीकों को वास्तविक उपयोग से पहले प्रायोगिक तौर पर परख लेना चाहिए। ऐसा यौन संचरित रोगों का उपचार करने वाले केन्द्रों के अतिरिक्त, अस्पतालों के बहिर्भूमि विभागों, मां और शिशु कल्याण केन्द्रों, परिवार कल्याण केन्द्रों, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और निजी व्यवसाय करने वाले चिकित्सकों के चैम्बरों में किया जा सकता है। स्वास्थ्य शिक्षा को विभिन्न माध्यमों से दिया जा सकता है, यथा,

- (1) **पोस्टर :** ये सरल, स्पष्ट और छोटे संदेशों के लिए उपयोगी होते हैं। विस्तार से जानकारी प्रदान करने के लिए ये उपयुक्त नहीं होते। पोस्टर ऐसे होने चाहिए कि उन्हें पढ़ने से पाठकों के दिल को ठेस न पहुंचे तथा वे उन्हें असमंजस की स्थिति में न डालें। साथ ही पोस्टर अपने आसपास के वातावरण के अनुरूप हों।
- (2) **पर्चे :** पर्चे आधारभूत जानकारियों को अधिक विस्तार से दे सकते हैं और सलाह के दौरान जानकारी को यानी यौन संचरित रोगों के संक्रमण तथा सुरक्षित सहवास आदि के बारे में जानकारियों को विस्तार से प्रस्तुत कर सकते हैं।
- (3) **वीडियो :** पर्चों की तुलना में वीडियो का न केवल अधिक प्रभाव पड़ता है वरन् वह उनसे अधिक जानकारी भी दे सकता है। वीडियों दिखाने के बाद दर्शकों के साथ वार्ता करके उनके मन के संशयों को दूर किया जा सकता है।

### (ग) परामर्श

परामर्शदाता यौन संचरित रोगों के बारे में, जिनमें एच.आई.वी. संक्रमण भी शामिल है, सूचना, शिक्षा और सलाह बगैर किसी जबरदस्ती और धौंस के दे सकता है। यौन संचरित रोगों के बारे में परामर्श निम्न सिद्धांतों पर आधारित होता है :

- (1) यौन संचरित रोगों और एच.आई.वी. से ग्रस्त होने की आशंका के बारे में जानकारियां सब लोगों को आसानी से उपलब्ध होनी चाहिए।

- (2) परामर्शदाता को ऐसा रवैया अपनाना चाहिए जिससे यह नहीं लगे कि वह न्यायाधीश की भाँति किसी का फैसला कर रहा हो। इससे रोगियों को विकल्प ढूँढ़ने और अपनी पंसद आजमाने तथा अपने फैसले स्वयं करने में मदद मिलेगी।
- (3) यह कल्पना किए बिना कि रोगी पहले से कितना जानता है, यौन संचरित रोगों और एच.आई.वी. के बारे में विस्तृत विवरण दिया जाना चाहिए। यदि पूर्ण जानकारी नहीं दी जाती तब रोगी विशेष यौन हरकतों के बारे में प्रश्न पूछने में शरमा या घबरा सकता है।
- (4) स्वास्थ्य शिक्षा और परामर्श के बारे में रोगी के विचार जानने के लिए समय—समय पर परामर्श का मूल्यांकन करना जरूरी होता है। इससे परामर्श देने की तकनीक और उसकी विषय—वस्तु में सुधार करने में भी मदद मिल सकती है।
- (5) रोगियों को परामर्श की गोपनीयता के बारे में आश्वस्त करना तथा उसे हर स्तर पर बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है।

स्वास्थ्य शिक्षा के विपरीत रोगी को परामर्श अकेले में अथवा आवश्यकता पड़ने पर भागीदार के साथ दिया जाना चाहिए। इस बारे में परामर्शदाता के पास रोगी की सब यौन संबंधी और यौन संचरित रोगों संबंधी समस्याओं पर रोगी के पूर्ण रूप से संतुष्ट होने तक, निर्लिप्त भाव और सीधे तरीके से वार्ता करने के लिए समय होना चाहिए।

### यौन संचरित रोगियों को परामर्श

यौन संचरित रोगों का निदान और उपचार, आरंभिक स्वास्थ्य संबंधी सावधानियों से लेकर विशेषज्ञ केन्द्रों तक ऐसे चिकित्सकों द्वारा किया जा सकता है जो इन रोगों के निदान और प्रबन्धन के लिए पूरी तरह तैयार और प्रशिक्षित हों। ऐसा हो सकता है कि चिकित्सक को जिस यौन संचरित रोग का इलाज करना है, उसे पूर्ण रूप से दूर किया जा सकता हो अथवा यदि रोग (वायरस द्वारा उत्पन्न संक्रमण से उत्पन्न हुआ हो) जिसका उपचार तो किया जा सकता है पर उसे पूर्ण रूप से दूर नहीं किया जा सकता हो इसलिए

परामर्शदाता को, चाहे वह चिकित्सक से लेकर सहायक चिकित्साकर्मी (पैरा मेडीकल) कर्मचारी तक, कोई भी हो सकता है, रोगी को इन रोगों से छुस्त होने की आशंका के बारे में जानकारी देने के अतिरिक्त निम्न बातें भी समझानी चाहिए :

### उपचार

- इस बारे में वास्तविक जानकारी कि संक्रमण पूर्ण रूप से दूर किया जा सकता है अथवा नहीं, यदि रोग का पूर्ण रूप से इलाज नहीं हो सकता तब रोग के दीर्घगामी प्रभाव क्या हो सकते हैं।
- रोग की जटिलताएं यदि कोई हों तो।
- रोगी फिर कब यौन क्रियाएं पुनः आरंभ कर सकता है।
- रोग की प्रजनन क्षमता और गर्भधारण करने की क्षमता पर तथा नवजात शिशु पर होने वाले प्रभाव।
- यह तथ्य कि संक्रमण यौन क्रिया में अपने भागीदार से ही प्राप्त किया गया है और अब तक वह रोगी द्वारा अपने पति/पत्नी को प्रदान कर दिया गया है।
- यह संभव हो सकता है कि जिस संक्रमित भागीदार से रोगी को संक्रमण प्राप्त हुआ है और वह भागीदार जिसको रोगी ने संक्रमित किया है अलक्षणी हों। सुजाकी और गैर-सुजाकी मूत्र मार्ग शोथ इसके उदाहरण हैं। ऐसा भी हो सकता है कि वे स्त्रियां जिन्होंने अपने पुरुष भागीदार को ये संक्रमण प्रदान किए हों और अब भी कर रही हों तब इन रोगों के बाह्य लक्षण प्रगट न करती हों।
- उस हालत में जब अनुपचारित भागीदार के साथ यौन क्रियाएं पुनः आरंभ कर दी हों तब पुनः संक्रमित होने की संभावना।
- उस भागीदार की कठिनाइयां और दुष्परिणाम जिसका समुचित उपचार न किया गया हो।
- रोगी के शरीर के अन्य गैर-निदानित यौन संचरित रोग जिनमें एच.आई.वी. भी शामिल है।

**परामर्श और एच.आई.वी. परीक्षण :** एच.आई.वी. संक्रमण और एड्स

से पीड़ित लोगों की संख्या में वृद्धि के साथ-साथ विभिन्न माध्यमों से इनके बारे में निरंतर सूचना प्राप्त होते रहने से अधिकाधिक व्यक्ति, विशेष रूप से यौन रूप से सक्रिय व्यक्ति तथा नशे का सेवन करने वाले व्यक्ति, यह जानने के लिए चिंतित होने लगे हैं कि क्या वे भी इन रोगों से पीड़ित हैं अथवा नहीं। इनके अनुरोध पर एच.आई.वी. परीक्षण करने से पहले इन्हें एच.आई.वी. रिपोर्ट के संभावित नतीजों और उसके प्रभावों से अवगत करा देना चाहिए :-

- (1) इस बारे में सबसे प्रमुख बात यह है कि एच.आई.वी. परीक्षण का अनुरोध कौन कर रहा है और इस बारे में वह क्या आशा रखता है? उसे यह सलाह देनी चाहिए कि इस परख से एच.आई.वी. संक्रमण से ग्रस्त होने की आशंका कम नहीं हो जाती। परीक्षण परिणाम की व्याख्या, व्यक्ति विशेष के यौन व्यवहार के अनुसार की जानी चाहिए। उस व्यक्ति के संबंध में जिसके आचरण ने उसे एच.आई.वी. के संक्रमण के प्रति बहुत संवेदनशील बना दिया है, परीक्षण के नकारात्मक परख का अर्थ निम्न में कोई एक हो सकता है :
- (क) अब तक वह एच.आई.वी. से संक्रमित नहीं हुआ है
- (ख) वह सीरो-नकारात्मक अवस्था में हो सकता है। यदि पक्की तौर से यह मालूम है कि वह उस व्यक्ति के साथ, जो एच.आई.वी. सकारात्मक है, यौन क्रियाएं करता है तब कुछ अंतराल के बाद इस परख को फिर से दुहराना चाहिए। इन दोनों हालातों में यह जरूरी हो जाता है कि वह व्यक्ति अपना यौन आचरण बदले। परख से पहले और उसके बाद रोग की आशंका कम करने संबंधी परामर्श अवश्य दिए जाने चाहिए।
- (2) यदि कोई व्यक्ति एच.आई.वी. से संक्रमित पाया जाता है, तब उसे इलाज की सुविधाएं प्राप्त करने में कठिनाइयां हो सकती हैं, उसका मालिक उसे नौकरी से निकाल सकता है और अगर वह विदेशों में नौकरी करना चाहता है तब वीजा या वर्क परमिट नहीं मिल सकता।
- (3) एच.आई.वी. परख के नकारात्मक और सकारात्मक, दोनों प्रकार के, परिणाम वैवाहिक अथवा अन्य मौजूदा संबंधों को प्रभावित कर सकते हैं।

(4) इसलिए परामर्शदाता की यह जिम्मेदारी है कि वह हर हालत में एच.आई.वी. परख के नतीजों की गोपनीयता बनाए रखें।

### कंडोम के उपयोग से यौन संचरित रोगों और एच.आई.वी. की रोकथाम :

भारत में परिवार नियोजन युक्ति के रूप में कंडोम का उपयोग उन लोगों के लिए सुझाया गया था जो वैस्कोटोमी या ट्यूबेक्टोमी कराने के लिए तैयार नहीं होते थे। जो कंडोम भारत में सबसे आसानी से उपलब्ध है वह है निरोध। एड्स के संदर्भ में जिसका अब तक कोई रामबाण इलाज नहीं मिल पाया है, और जो 10–15 वर्ष की अवधि अथवा उससे भी कम समय में घातक सिद्ध होने लगता है, उभर आने के बाद कंडोम की उपयोगिता सामने आने लगी। उन लोगों के लिए इसका विशेष रूप से महत्व है जो एक से अधिक व्यक्ति से यौन संबंध रखते हैं। उनके लिए एड्स से बचाव हेतु यह एक कारगर भौतिक युक्ति है।

कंडोम को सही ढंग से इस्तेमाल करना एक कौशल है। उसे सीखना पड़ता है और उसके लिए अभ्यास करना पड़ता है। अकेले में ऐसा करने में कम दिक्कत आती है। इसलिए परामर्शदाता को चाहिए कि वह कंडोम को इस्तेमाल करने के तरीकों को दर्शक के समक्ष प्रस्तुत करे। इसके लिए संतुष्टि शिश्न के मॉडल अथवा अन्य उपयुक्त आकार की किसी वस्तु यथा केले का उपयोग किया जा सकता है। ऐसा हो सकता है कि जिस व्यक्ति को कंडोम के उपयोग की सलाह दी जा रही हो उसने कंडोम को पहले कभी देखा अथवा छुआ ही न हो। इसलिए उस व्यक्ति को, इसे छूने और परामर्शदाता के सामने इस्तेमाल करने का अभ्यास करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। जहां तक संभव हो कंडोम के बारे में जानकारी देने के साथ-साथ उपयोग करने वाले व्यक्ति को कंडोम का एक पैकेट भी मुफ्त देना चाहिए। साथ ही लोगों को बाजार में उपलब्ध विभिन्न निर्माताओं के कंडोमों तथा उनकी प्राप्ति के बारे में भी बता देना चाहिए।

## कंडोम का इस्तेमाल करने वालों के लिए निर्देश

1. कंडोम का पैकेट खोलते समय सावधानी बरतें, कंडोम में नाखून आदि न लगने दें।
2. कंडोम के सिरे के लगभग आधा इंच भाग को अपने अंगूठे और अंगुली के बीच पकड़ें। ऐसा करना स्खलन के बाद वीर्य को इकट्ठा होने देने के लिए जरूरी है।
3. शिश्न की टोपी पर से खाल पीछे सरका लें।
4. शिश्न की टोपी के सिरे पर कंडोम को रखें और फिर उसे खोलते हुए लिंग की जड़ तक ले आएं।
5. यदि सहवास के दौरान कंडोम फट जाता है तब शिश्न को तुरंत योनि से बाहर निकाल लें और नया कंडोम लगा लें।
6. स्खलन के बाद कंडोम के रिंग को पकड़ लें और लिंग को स्तभित दशा में ही बाहर निकाल लें।
7. कंडोम को सावधानी से इस प्रकार निकालें कि वीर्य गिरे नहीं।
8. बाद में कंडोम को कमोट में फेंक कर फ्लश खींच दे।
9. कंडोम फेंकने के बाद भली-भांति हाथ धो लें।
10. चिपकने वाले, दरार युक्त अथवा अन्य प्रकार के कटे-फटे कंडोम को कभी इस्तेमाल न करें।
11. कंडोम को अत्यधिक गर्मी, रोशनी और नमी से बचाकर रखें।

हमारे देश में कंडोम कैमिस्टों और जनरल मर्चेटों की दूकानों पर मिल जाता है। बाजार में प्रचलित ब्रैंड हैं (1) निरोध, (2) एडम्स, (3) कोहिनूर, (4) कामसूत्र, (5) मूड्स (6) डीलक्स, (7) रक्षक, (8) पैशन और (9) मस्ती।

यदि आप के एक से अधिक व्यक्तियों के साथ यौन संबंध हैं तब ऐसा भी हो सकता है कि आपके किसी भागीदार के भी एक से अधिक व्यक्तियों के साथ यौन संबंध हों। इस प्रकार यौन क्रियाओं द्वारा संक्रमण फैलने के खतरे बढ़ते जाते हैं। यदि आपके किसी भी भागीदार में यौन संचरित रोगों से पीड़ित होने के लक्षण यथा शिश्न अथवा योनि से विसर्जन होता है या जननांग पर व्रण आदि मौजूद हों अथवा उसके किसी ऐसे व्यक्ति से यौन

संबंध रहे हों जो यौन संचरित रोगों से पीड़ित रहा हो तब उसके साथ सहवास करने से बचना चाहिए।

यौन संचरित रोगों से बचाव व्यक्तिगत जिम्मेदारी और कर्तव्य है। इस बारे में आप स्वयं अपने प्रति, और उनके प्रति जिनसे आप प्यार करते हैं और अपने बच्चों के प्रति जवाबदेह हैं। यदि आपकों संदेह हो जाता है कि आपका यौन संबंध संक्रमित व्यक्ति से हो गया है तब रोग के गंभीर लक्षणों के उभरने का इंतजार न करें। अपना इलाज स्वयं करने का प्रयत्न न करें। आपको चिकित्सक की मदद और निर्देश लेना जरूरी है।

अंत में यौन संचरित रोगों के प्रति समाज को भी अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना चाहिए। इन रोगों के पीड़ित व्यक्तियों की नैतिक प्रताड़ना करने के स्थान पर उन्हें आसानी से समुचित उपचार और परामर्श सुविधाएं उपलब्ध करानी चाहिए।



## अध्याय दस

### यौन संचरित रोगों का प्रयोगशाला निदान

यौन संचरित रोगों और एच.आई.वी. संक्रमण से भीड़ित रोगों का उपचार विभिन्न स्तरों पर किया जाता है। इनमें यौन संचरित रोगों की उपचार सेवाओं हेतु विशेष चिकित्सालयों से लेकर आम अस्पतालों के त्वचा और बहिर्भूती विभाग, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, आधुनिक तथा अन्य औषधि पद्धतियों के अनुसार इलाज करने वाले चिकित्सक आदि शामिल हैं। इन सब के दो मुख्य उद्देश्य हैं:-

(क) रोगों का शीघ्र, सरल और सही निदान, तथा (ख) सस्ता और प्रभावी इलाज।

यौन संचरित रोगों का सही निदान, जाच करने वाले चिकित्सक और रोग की पुष्टि करने वाली प्रयोगशाला पर निर्भर होता है। इन रोगों के आम बाह्य लक्षण यथा जननांग व्रण रोग, मूत्र मार्ग और योनि विसर्जन आदि के उत्पन्न होने के कारण विभिन्न हो सकते हैं। इनके उपचार भी, भौगोलिक स्थिति तथा अन्य रोगों की उपस्थिति की आशंकाओं के अनुसार, भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। अस्पताल में किए गए निदान के अनुसार इलाज आरंभ करने से पहले रोग विशेष की पुष्टि प्रयोगशाला परीक्षणों द्वारा की जाती है। यहां तक यौन संचरित रोगों का संबंध है ऐसा आसानी से हो जाता है। अस्पताल में किए गए निदान की पुष्टि प्रयोगशाला में, गीले लेप परीक्षण (वेट स्मीयर एंजामिनेशन) और सरल अभिरंजक परीक्षण (सिंपल स्टेनिंग प्रोसीजर) तथा माइक्रोस्कोप के नीचे अवलोकन करने से आसानी से हो जाती है।

यहां दिए गए प्रयोगशाला-नैदानिक-परीक्षण आसानी से किए जा सकते हैं। ये महंगे नहीं होते और अधिकांश हालातों में, इनसे आसानी से, रोग का पता चल जाता है। विशेष हालातों में विशेषज्ञों की मदद ली जा सकती है।

इन परीक्षणों के लिए न तो विशेष प्रयोगशाला की आवश्यकता होती है और न परिष्कृत औजार और युक्तियों की। पर इनसे बहुत हद तक यह

पता चल जाता है कि रोगी को यह रोग है अथवा नहीं।

## I. बिना अभिरंजन के, सीधे माइक्रोस्कोप के नीचे परीक्षण

### गीला माउंट :

यह परीक्षण मुख्य रूप से ट्रोइकोमोनीयता, कैंडिडारुगणता और बैक्टीरियाजन्य वैजिनोसिस के लिए किया जाता है।

**तैयारी :** एक साफ कॉच की स्लाइड पर नार्मल सलाइन की एक बूंद डालिए और विसर्जन को उस पर रखिए। कवर स्लिप को लगाने के तुरंत बाद कमप्रकाश में माइक्रोस्कोप की कम पावर ( $\times 10$ ) के नीचे, उसे परखें। (नार्मल सलाइन बनाने के लिए 8.5 ग्राम साधारण नमक को लगभग 90 मिलि. आसुत जल में घोल लें। बाद में घोल में और पानी मिलाकर उसके अन्तन को एक लिटर कर लें।)

**ट्राइकोमोनीयता :** ट्राइकोमोनिआसिस को ट्राइकोमोड के झटकें से गति करने के लक्षण से पहचाना जाता है। ट्राइकोमोड नासाती की आकृति और मवाद की कोशिकाओं के आकार के सूक्ष्मजीव होते हैं। इनके चार अग्र कशाभ और एक एक्सोस्टाइल होता है जो पूरे शरीर को पार करके रीढ़ तक पहुँच जाता है। (चित्र 36)

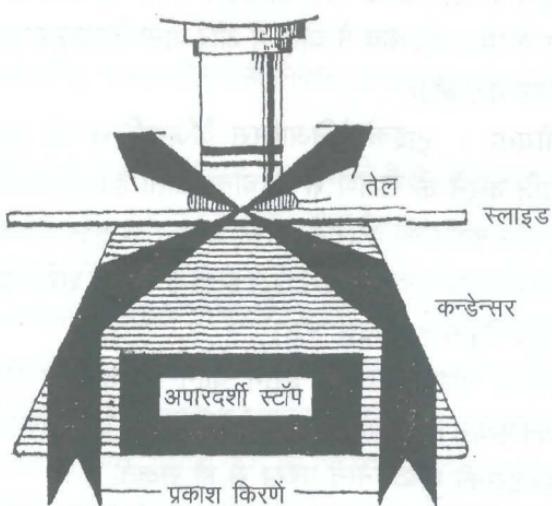
**बैक्टीरियाजन्य वैजिनोसिस :** इसमें योनि के सामान्य लैक्टोबैक्टेरियाई बैक्टीरिया का स्थान ऐसे बैक्टीरिया ले लेते हैं जिनमें योनि तरल के परिवर्तित गुण होते हैं। इसकी पुष्टि निम्न परख से हो सकती है :

- (1) गंध परख – स्लाइड पर रखे योनि विसर्जन में पोटेशियम हाइड्रोक्लोराइड के 10 प्रतिशत घोल की एक-दो बूंदें मिलाने से एमिनों के बनने के फलस्वरूप एक लाक्षणिक मांस जैसी गंध आने लगती है। ग्रैम अभिरंजन पर बैक्टीरियाजन्य वैजिनोसिस में दिखायी देने वाले अन्य लक्षण हैं :-
- (2) ल्यूकोसाइटों की संख्या सामान्य रहती है। माइक्रोस्कोप के क्षेत्र में उपकला कोशिकाओं की संख्या सफेद रक्त कोशिकाओं की संख्या से अधिक हो जाती है।

- (3) उपकला कोशिका पंक्ति अस्पष्ट होती है और इर्द-गिर्द फैले कोकोबैसिलाई जिन्हें “कलू कोशिकाएं” कहा जाता है, से ढंकी रहती है।
- (4) योनि लेप में लैकटोबैसिलाई की संख्या में कमी हो जाती है।

**कैंडिडारुगण्ठा :** कैंडिडा अल्बीकैन्स को सेलाइन माउंट पर और उससे भी बेहतर पोटैशियम हाइड्रोआक्साइड के 10 प्रतिशत घोल (यह उपकला को कोशिकाओं के डिम्बों को तोड़ने में सहायता देता है) में कलिकायुक्त और लघु हाइफाओं (छद्म हाइफाओं) सहित छोटे बीजापुओं के रूप में देखा जा सकता है।

आब्जेक्टिव



चित्र 36 : अंधेरी पृष्ठभूमि के माइक्रोस्कोप में कन्डेन्सर में से किरणों का पथ

## II. डार्क फील्ड माइक्रोस्कोपी

डार्कफील्ड माइक्रोस्कोपी अनउपचारित प्राथमिक और द्वितीयक सिफिलिस उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीवों ट्रिपोनेमा पैलिडियम को सीधे माइक्रोस्कोप के नीचे प्रदर्शित करके, रोग के निदान की पुष्टि करने वाली विधि है।

**सिद्धांत :** डार्क फील्ड माइक्रोस्कोपी में केवल वे ही प्रकाश किरणें आब्जेक्टिव तक पहुंचती हैं जो फील्ड में आने वाले सूक्ष्मजीवों अथवा अन्य कणों पर,

न्यून कोण पर आपतित होती हैं। इससे सूक्ष्मजीव और उनकी गतिविधियां अदीप्त पृष्ठभूमि पर स्वतः ही प्रदीप्त हो जाती हैं। साधारण प्रकाशीय माइक्रोस्कोप में उसके कन्डेन्सर के स्थान पर विशेष डार्क फील्ड कन्डेन्सर लगाकर उसे डार्कफील्ड माइक्रोस्कोप में बदला जा सकता है। इसके लिए सर्वोत्तम तरीका यह है कि यौन संचरित रोग, प्रयोगशाला में एक ऐसे माइक्रोस्कोप को, जिसका प्रकाश स्रोत प्रबल हो, डार्क फील्ड परीक्षणों के लिए आरक्षित किया जा सकता है।

## विधि

- (1) एक ऐसी विक्षति से, जिसके प्राथमिक अथवा द्वितीयक सिफिलिस से उत्पन्न होने का संदेह हो, साफ सीरम तरल लेकर एक कवर स्लिप के किनारों पर इकट्ठा कर लिया जाता है। फिर उसे धीरे से एक साफ, पतली कांच की स्लाइड (1 मि.मि. मोटी) पर स्थानांतरित कर लिया जाता है।
- (2) हल्के से दबाव के साथ, जिससे सीरम में हवा का कोई बुलबुला न रहे, सीरम को कवर स्लिप के नीचे एकसमान रूप से फैला दिया जाता है।
- (3) सीरम को उड़ने से रोकने लिए कवर स्लिप के किनारों को वेसलीन अथवा पैरोफीन मोम द्वारा सील कर दिया जाता है।
- (4) फिर तुरंत ही डार्क फील्ड माइक्रोस्कोप के नीचे उसका परीक्षण आरंभ कर दिया जाता है। डार्क फील्ड कन्डेन्सर के शीर्ष पर पैरोफीन मोम की एक बूंद डाल दी जाती है। कन्डेन्सर को कांच स्लाइड के नीचे की ओर झुला दिया जाता है। कन्डेन्सर के एपरचर को समायोजित करके, फालतू प्रकाश को काटकर, उसे कम शक्ति के प्रकाश ( $10\times$ ) पर उसका अवलोकन किया जाता है। फिर तेल निभ्भजन के नीचे फोकस कीजिए।
- (5) ट्रिपोनिमा पैलिडियम लाल रक्त कोशिकाओं, 6–8 माइक्रोन के आकार के धीमी गति से चलने वाले, पास-पास स्थित, नियमित कुंडलियों के रूप में दिखते हैं। माइक्रोस्कोप के नीचे इनकी विभिन्न

प्रकार की चाल, यथा, आगे बढ़ना और आकार में परिवर्तन यथा कोण बनाना, कसना, खुलना और छल्ले के रूप में सिकुड़ना और फैलना देखे जा सकते हैं।

### टिप्पणी :

1. कभी—कभी गंदे व्रणों में देखे जाने वाले, तुर्क रूपी गैर—रोगजनक, ट्रिपोनिम आकार में बड़े होते हैं, उनकी कुंडलियां ढीली होती हैं और वे जल्दी—जल्दी गति करते देखे जाते हैं।
2. परीक्षण से पहले व्रण पर एंटीबायोटिक क्रीम लगा लेने से अथवा एंटीबायोटिक लेने से आरंभिक सिफिलिस से पीड़ित रोगी के व्रणों से भी ट्रिपोनिमा पूरी तरह से गायब हो जाते हैं।
3. यदि रोगी के शरीर पर गुदा—जननांग श्लेष्मल व्रण मौजूद नहीं होते तब खाल पर मौजूद ऐसी पित्ती को जिसके द्वितीयक सिफिलिस के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने का संदेह हो, रगड़े और उससे निकलने वाले सीरम का परीक्षण करें।
4. शरीर पर किसी श्लेष्मल अथवा त्वचीय व्रणों की अनुपस्थिति में और केवल संदेहास्पद लिम्फ ग्रंथि शोथ की स्थिति में, डिस्पोजेबल सिरिज पर नुकीली सुई लगाकर उससे लसीका पर्व में 0.1 मिलि. नार्मल स्लाइन प्रविष्ट करा देनी चाहिए। लसीका पर्व की मालिश करने के बाद तरल को निकाल कर उसकी एक बूंद को स्लाइड पर रख लिया जाता है। कवर स्लिप को यथास्थान रखने के बाद उसका उसी प्रकार परीक्षण किया जाता है जैसा ट्रिपोनिम पैलिडम के अंतर्गत वर्णित है।
5. यदि ट्रिपोनिम पैलिडम को प्रदर्शित न किया जा सके तब सीरमीय परख की जानी चाहिए।

### III सिफिलिस के लिए सीरमीय परीक्षण

दो प्रकार के परीक्षण उपलब्ध हैं :—

- (1) गैर—ट्रिपोनिमीय अथवा सिफिलिस के लिए मानक परीक्षण (एस.टी एस.)

(2) ट्रिपोनिमीय अथवा सिफिलिस के लिए विशिष्ट परीक्षण।

गैर-ट्रिपोनिमीय अथवा सिफिलिस के लिए मानक परीक्षण हैं :

1. रैपिड-प्लाज्मा रीएजिन (आर.पी.आर.) कार्ड परख

2. रतिज रोग अनुसंधान प्रयोगशाला परख (वी.डी.आर.एल.)

**सिद्धांत :** यह कार्डियोलिपिन के एंटीजन के रूप में उपयोग करने पर निर्भर है। यह समझा जाता है कि संक्रमण के आरंभ में क्षतिग्रस्त परपोषी कोशिकाओं से मुक्त होने वाले लिपिडीय पदार्थ तथा ट्रिपोनिम की सतह की कोशिकाओं के लिपिड की अनुक्रिया के फलस्वरूप प्रतिलिपिड IgM और IgG का निर्माण होता है।

### रैपिड प्लाज्मा रीएजिन (आर.पी.आर.) कार्ड परख

यह परख प्रयोगशाला में बहुत से नमूने एक साथ अथवा प्रयोगशाला के बाहर क्षेत्रीय (फील्ड) परिस्थितियों में की जा सकती है। प्रत्येक किट में परख करने की विधि विस्तार से वर्णित रहती है। परख की मुख्य बातें हैं :—

- (1) एक परख कार्ड लीजिए। पिपेट का उपयोग करते हुए एक वृत्त में 0.05 मिलि. बिना गर्म किया हुआ सीरम डालिए।
- (2) डिस्पोजेबल प्लास्टिक स्टरर से नमूने को, वृत्त में, फैला दीजिए।
- (3) धीरे से आर.पी.आर. कार्ड परख एंटीजन को हिलाइए और वृत्त में भरे सीरम पर एक बूँद (1/16 मिलि.) डालिए।
- (4) गति को समायोजित करते हुए कार्ड को यांत्रिक रोटेटर पर घुमाइए। घुमाने का समय किट में दिए गए निर्देशों के अनुसार होना चाहिए।
- (5) रोटेटर से कार्ड निकालिए और तुरंत तेज रोशनी में परिणामों को खाली आंख से देखिए।
- (6) पठन : अगर छोटे-बड़े पिंड हैं तब सीरम – सक्रिय, कोई पिंड नहीं अथवा मामूली खुरदरापन है तब सीरम – गैर सक्रिय।

### रतिज रोग अनुसंधान प्रयोगशाला परख (वी.डी.आर.एल.)

वी.डी.आर.एल. सिफिलिस के निदान के लिए सर्वाधिक प्रचलित परख है।

पर इसके परिणाम को पढ़ने के लिए माइक्रोस्कोप की जरूरत होती है। परिणाम को सक्रिय अथवा धनात्मक रूप में व्यक्त किया जाता है। वह रोगी के सीरम को धनात्मकता के रूप में विभिन्न तनुताओं में व्यक्त किया जाता है यथा 1:1, 1:2, 1:4, 1:6, 1:16, 1:22, 1:64 आदि।

सिफिलिस के उपर्युक्त परख समूह एंटीजन कार्डियोलिपिन पर आधारित है। ये परीक्षण परख सिफिलिस के मरीजों की स्क्रीनिंग के लिए सर्वोत्तम हैं। शीघ्र और आसान हैं। परंतु निम्न तनुताओं में ये परीक्षण, तीव्र और दीर्घ अवधि के बैकटीरियाओं और वायरस-जन्य संक्रमणों के लिए भी धनात्मक होते हैं। इसलिए ट्रिपोनिमीय संक्रमण सुनिश्चित करने हेतु सिफिलिस की उपस्थित के लिए विशिष्ट परीक्षण किए जाने चाहिए।

### ट्रिपोनिमीय परख या विशिष्ट सिफिलिस परख

ट्रिपोनिमीय परख में ट्रिपोनिम पैलीडम का उपर्योग एंटीजन के रूप में किया जाता है। सब परखों में ट्रिपोनिम पैलीडम की एंटीबॉडी के लिए माइक्रोहीमगलुटिनेशन परख, (जिसे से टी.पी.एच.ए. कहा जाता है) आसानी से की जा सकती है। यहां एंटीजन उग्र ट्रिपोनिम पैलीडम के अल्ट्रासोनोकेट के साथ संवेदनशील बनायी गई फार्मएल्डीहाइड और कमायी गई भेड़ की कोशिकाओं का निलंबन होता है। संवेदनशील बनायी गई कोशिकाओं को प्रविष्ट कराने से पहले संकरीकरण प्रक्रिया करने वाली एंटीबॉडी को अलग करने हेतु सीरम को एक अवशोषी तनुकारी में मिलाया जाता है। संवेदनशील कोशिकाओं का धीरे-धीरे समूहन धनात्मक परिणाम दर्शाता है जबकि असंवेदी कोशिकाएं तली में, एक कठोर पिंड, बना देती हैं।

जब सिफिलिस होने के बारे में संदेह होता है तब सिफिलिस की मानक परखें यथा वी.डी.आर.एल. के परिणामों की पुष्टि और व्याख्या करने के लिए टी.पी.एच.ए. जैसे ट्रिपोनिमीय या विशिष्ट सिफिलिस परीक्षणों का महत्व सामने आता है। कम सांदर्ताओं में वी.डी.आर.एल. की धनात्मकता को सिफिलिस की अनुपस्थिति में, जैव सकारात्मकता समझने की गलती हो सकती है। इस प्रकार की परिस्थिति में टी.पी.एच.ए. से सिफिलिस की

उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति की पुष्टि की जा सकती है।

#### IV अभिरंजन के साथ प्रत्यक्ष माइक्रोस्कोपी

##### (क) ग्रैम अभिरंजन

उन चिकित्सालयों में, जहां प्रयोगशाला में माइक्रोस्कोप की सुविधाएं उपलब्ध हैं, वहां प्रचलित बैकटीरियाजन्य यौन संचरित रोगों के निदान के लिए ग्रैम अभिरंजन एक उपयोगी, सरल और शीघ्र अभिरंजन विधि है। इस विधि द्वारा नीचे दिए गए प्रचलित यौन संचरित रोगों का निदान किया जा सकता है।

(1) **सुजाक** : मूत्र मार्ग ग्रीवा, मलाशय अथवा ग्रसनी से फुरेरी पर लिए गए निसीरिया गोनोरोई को न्यूट्रोफिलों में ग्रैम नेगेटिव डिप्लोकोकी (दो-दो के समूहों में कोकस) के रूप में देखा जा सकता है। जहां तक स्त्रियों का संबंध है, लेप निदान की पुष्टि सूक्ष्मजीवों के कलचर तैयार करके करनी चाहिए। (चित्र-20)

(2) **शैंकराभ** : हीमोफिलिस डुक्रेई को ग्रैम नेगेटिव दंडाणुओं के रूप में देखा जा सकता है। परखे जाने वाले पदार्थ को व्रण के किनारे से एक सूई की फुरेरी पर लिया जाता है और स्लाइड पर, एक दिशा में  $180^{\circ}$  डिग्री पर लपेटा जाता है। लेपों में बैकटीरिया की अभिलाक्षणिक आकृति को हर परिस्थित में प्रदर्शित करना आसान नहीं होता है।

(3) **बैकटीरियाजन्य वैजिनोसिस** : लैक्टोबैसिलस के सामान्य योनि बैकटीरिया भौथंरे सिरे वाले ग्रैम पॉजिटिव बैकटीरियाओं के स्थान पर ग्रैम नेगेटिव कोकोबैसिलाई और क्लू कोशिकाओं द्वारा बड़ी संख्या में प्रतिस्थापना।

(4) **डोनोवैनोसिस** : कैलामाटो बैकटीरियम ग्रनुलोमैटिस  $1.5 \times 0.7$  म्यूमीटर आकार के ग्रैम नेगेटिव बैकटीरिया, जो बड़े ऊतक हिस्टियोसाइटिक कोशिकाओं में और कभी-कभी बहुरूपों में अथवा प्लाज्मा कोशिकाओं में देखे जाते हैं। लाक्षणिक कोशिकाओं को ऊतक लेपों में गीम्स अभिरंजन में देखा जाता है।

## ग्रैम अभिरंजन के लिए प्रतिकर्मक

प्रतिकर्मकों को तैयार करने में आसुत जल इस्तेमाल किया जाना चाहिए।

**क्रिस्टल वायलेट :** (क) 20 मिलि. एथिल अल्कोहल में 2 मिग्रा. क्रिस्टल वायलेट पाउडर मिलाएं, (ख) 80 मिली. आसुत जल में 0.8 मिग्रा. अमोनियम आक्सलेट मिलाएं। (क) और (ख) दोनों को मिलाकर छान लें।

**आयोडिन घोल :** 2 ग्रा. आयोडीन 10 मिलि. कास्टिक सोडा के घोल में मिलाएं। बाद में 90 मिलि. पानी मिलाकर घोल का आयतन 100 मिलि. कर लें।

**विवर्णी घोल (डिक्लराइजिंग सोल्यूशन) :** ऐसीटोन-एथिल अल्कोहल का 1:2 अथवा 1:4 अनुपात में मिश्रण।

**प्रति-अभिरंजन :** 1 ग्रा. सैफानिन को 20 मिलि. एथिल अल्कोहल में घोल लें। इस घोल के 10 मिलि. को 90 मिलि. आसुत जल से तनु कर लें।

## विधि

लेप को फिक्स कर लीजिए और ठंडा होने दीजिए।

1. **क्रिस्टल वायलेट – 1 मिनट :** स्लाइड पर क्रिस्टल वायलेट डालिए। स्लाइड को पूरी तरह ढंक दीजिए। एक मिनट तक ऐसे ही छोड़ दीजिए। नल के पानी के साथ खंगालिए और पानी को बहा दीजिए।

2. **ग्रैम-आयोडीन घोल – 1 मिनट :** ग्रैम-आयोडीन घोल से स्लाइड को पूरी तरह ढंक दीजिए। एक मिनट रहने दीजिए। घोल को बहा दीजिए और नल के पानी से खंगालिए।

3. **ऐथिल अल्कोहल से विवर्णित करना :** उस समय तक विवर्णित कीजिए जब तक बैंगनी रंग नहीं आ जाता। पानी के साथ अच्छी तरह खंगालिए और फिर बहा दीजिए।

4. **सैफ्रानिन घोल के साथ प्रति-अभिरंजन – 15 सैकेंड :** इस घोल को 15 सैकेंड तक स्लाइड पर रहने दीजिए। फिर एकदम पानी से धो डालिए। उसे बहा दीजिए और हवा में सूखने दीजिए। स्लाइड पर एक ब्लाटिंग पेपर

से दबाने से स्लाइड जल्दी सूख सकती है। अभिरंजन को रगड़कर नहीं छुटाएं।

### (ख) गीम्सा अभिरंजन

गीम्सा अभिरंजन एक सरल अभिरंजन विधि है जो निम्न रोगों के निदान के लिए प्रयुक्त की जाती है:

**डोनोवैनोसिस :** कणिका गुल्मीय ब्रणों के किनारें से, चिमटी से ऊतकों का एक टुकड़ा लेकर और उसे छोटे टुकड़ों में तोड़कर तथा स्लाइड पर रगड़कर ऊतक लेप तैयार किया जाता है। ऊतक लेप ब्रण का एक छोटा टुकड़ा काटकर और उसे दो स्लाइडों के बीच रखकर उन्हें एक-दूसरें पर रगड़ कर भी तैयार किया जा सकता है। इससे दोनों स्लाइडों पर लेप प्राप्त हो जाता है। अभिरंजन के बाद डोनोवैन पिंडों वाले बड़े एकल-न्यूक्लीय ऊतक हिस्टीओसाइटों को देखा जाता है। (चित्र 16)

**जननांग हर्पीज :** छोटी पुटिकाओं के आधार से लूप अथवा फुरेरी से तरल को पोंछ कर लेप लेकर उसे स्लाइड पर फैला दिया जाता है। बहुन्यूक्लीय बृहत् कोशिकाओं की उपस्थिति हर्पीज वायरसों के अप्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में देखी जाती है क्योंकि हर्पीज वायरस डी.एन.ए. वायरस है जो कोशिका के नाभिक को गुणित करता है।

### प्रतिकर्मक

निम्न वस्तुओं को मिलाकर स्टॉक घोल तैयार किया जाता है :-

- गीम्सा पाउडर 1 ग्रा.
- मेथिल अल्कोहल 66 मिलि.
- गिलसरीन 66 मिलि.
- इस स्टॉक घोल की 0.5 मिलि. मात्रा को 1.5 मिलि. अल्कोहल और 50 मिली. आसुत जल में मिलाया जाता है।

### विधि

1. लेप को सुखाकर उसे स्लाइड पर स्थायी बना लिया जाता है।

2. लेप को गिम्सा (10 गुने तनु बनाए हुए) अभिरंजन से ढंक दिया जाता है।
3. अभिरंजन को 10 मिनट तक रहने दिया जाता है।
4. फिर उसे बहते हुए नल के पानी से धो कर सूखने दिया जाता है।
5. लेप का तेल निम्मजन के नीचे परीक्षण किया जाता है।

ऊतक हिस्टिओसाइटों की बड़ी संख्या में उपस्थिति की दशा में डोनोवैन पिंडों के लिए पूरी तरह खोज की जानी चाहिए। इसमें काफी समय लगता है। यह जांच करने में कि स्लाइड पर कोई डोनोवैनोसिस बैक्टीरिया मौजूद है अथवा नहीं, विशेषज्ञों को भी 15.20 मिनट का समय लगता है। डोनोवैन पिंड एक केन्द्रक कोशिकाओं से साइटोप्लाज्म में लगभग 20.90 म्यूमीटर व्यास के कोकोबैसिलाई की भाँति दिखायी देते हैं। डोनोवैन पिंड आरंभिक रूप में पर्फल दिखायी देते हैं जबकि प्रौढ़ पिंडों का रंग गुलाबी होता है और देखने में वे बंद सेफ्टीपिन जैसे प्रतीत होते हैं।

### (ग) पैपानीकोलाउ (पी.ए.पी.) लेप

विशेष अभिरंजन की इस तकनीक में जननांगों की सतहों से श्लेष्मल लेप लेकर उसे असामान्य कोशिकाओं की उपस्थिति के लिए परखा जाता है। ये असामान्य कोशिकाएं इन अंगों में संभावित कैंसर उत्पन्न करने वाले परिवर्तनों की प्रतीक होती हैं। ग्रीवा अधिमांसों मूत्र मार्ग के गैर-सुजाकीय संक्रमणों, कैंडिडा संक्रमणों, और हर्पीज जैनीटैलिस, आदि में केवल न्यूनतम परिवर्तन परिलक्षित होते हैं। यौन संचरित रोगों से पीड़ित स्त्रियों में कैंसर के आरंभिक लक्षण जानने के लिए यह एक बहुत आसान परन्तु महत्वपूर्ण परीक्षण है।

## कुछ महत्वपूर्ण यौन संचरित रोगों के इलाज हेतु मार्गदर्शी सिद्धांत

इस खंड में कुछ महत्वपूर्ण यौन संचरित रोगों के इलाज के बारे में सूचनाएं दी जा रही हैं। आरंभिक सिफिलिस, शैंकराभ और बड़े पैमाने पर फैले ऐसी सुजाकीय मूत्र मार्ग सूजन जिसमें कोई जटिलता नहीं आयी है, के इलाज के लिए एक खुराक के सफल विधान का उल्लेख किया गया है। यह विधान 95 प्रतिशत से भी अधिक मरीजों पर कारगर सिद्ध हुआ है। अन्य यौन संचरित रोग जो लंबे समय तक चलते हैं यथा सात से अधिक दिनों तक रहने वाली सुजाकीय/गैर सुजाकीय मूत्र मार्ग सूजन, कूल्हे की सूजन और डोनोवैनोसिस तथा लिम्फोग्रेनुलोमा वैनेरियम जैसे रोगों के लिए लंबे समय तक गहन उपचार की जरूरत होती है।

रोग के आरंभिक लक्षण प्रगट होते ही चिकित्सक की सलाह लेना तथा उसके निर्देशों के अनुसार इलाज कराना और सावधानी बरतना हमेशा बेहतर होता है। यौन संचरित रोगों का इलाज कराने वाले व्यक्तियों के लिए यौन क्रियाओं में अपने भागीदार का भी, साथ-साथ इलाज कराना, बहुत आवश्यक होता है। ऐसा पुनः उसी रोग के संक्रमित हो जाने, अपने संक्रमित भागीदार के रोग को और जटिल होने से तथा समाज में यौन संचरित रोगों को फैलने से रोकने के लिए अति आवश्यक है।

### एक-खुराक उपचार मार्गदर्शन सिद्धांत

(क) आरंभिक सिफिलिस : इसमें प्राथमिक, द्वितीयक तथा ऐसी अप्रकट सिफिलिस, जो दो वर्ष से अधिक पुरानी न हो, शामिल हैं।

उपचार : बैंजाथीन पेनीसिलिन 24 लाख यूनिट का एक इंजेक्शन नितंबों पर, गहरी अंतःयेशी में, लगाया जाना चाहिए।

हमारे बाजार में इस कार्य के लिए उपलब्ध औषधियां हैं:

पेनीड्यूर एल.ए. 24 (वायथ)

लोंगासिलिन एम.ए. - 12 (दो वायल) हिंदुस्थान एंटीबायोटिक्स

इस पर इलाज की लागत लगभग 22 रु. आती है।

मरीजों के पेनीसिलिन के प्रति एलर्जिक होने की दशा में उन्हे निम्न वैकल्पिक एंटीबायोटिक दी जा सकती है :

(1) टैट्रासाइक्लिन हाइड्रोक्लोराइड 500 मिग्रा. मौखिक रूप से दिन में चार बार, 15 दिनों तक।

कुछ प्रचलित व्यावसायिक रूप से उपलब्ध ब्रैंड हैं

इडीलिन 250 मिग्रा. (आई.डी.पी.एल.)

रेस्टेक्लिन 250 मिग्रा. (साराभाई)

होस्टासाइक्लिन 250 मिग्रा. (होशैस्ट)

एलसाइक्लिन 250 मिग्रा. (अलैंबिक)

इस इलाज का कुल खर्च लगभग 150 रुपए आता है

(2) इरीथ्रोमॉइसिन गोलियां, 500 मिग्रा. मौखिक रूप से, दिन में चार बार, 15 दिन तक।

कुछ उपलब्ध भारतीय ब्रैंड हैं :

इरीथ्रोसिन 250 मिग्रा. (एबोट्ट)

एलथ्रोसिन 250 मिग्रा. (अलेम्बिक)

एमाइसिन 250 मिग्रा. (थेमिस)

एरीसेफ 250 मिग्रा. (यू.एस.वी.)

इस इलाज का कुल खर्च लगभग 400 रुपए है।

पेनीसिलिन के प्रति संवेदी गर्भवती स्त्रियों के लिए इरीथ्रोमॉइसिन पंसदीदा औषधि है।

### (ख) शैकराभ

एक ही बार में सेफट्रीआक्सोन 250 मिग्रा. का अंतःपेशी इंजेक्शन हमारे बाजार में उपलब्ध ब्रैंड है :

मोनोसेफ 250 मिग्रा. (एरिस्टो)

नोसोसेफ 250 मिग्रा. (मेरिंड)

ठोरोसेफ 250 मिग्रा. (टोरेन्ट)  
एक इंजेक्शन के दाम लगभग 50 रुपए हैं।

### (ग) सरल सुजाक (जो जटिल नहीं हुआ है)

सैफट्रीआक्सोन 250 मिग्रा. इंजेक्शन, अंतःपेशी में केवल एक बार में अथवा एमोक्सीलिन कैप्सूल 3.5 ग्रा. मौखिक रूप से। इसके सेवन के आधा घंटे पहले एक खुराक प्रोबेनेसिड जी. टैबलेट की मौखिक रूप से ली जानी चाहिए। हमारे बाजार में उपलब्ध ब्रैंड हैं :

एमोक्सीवान (खंडेलवाल)  
एमोसुल (जर्मन रैमिडिज)  
मॉक्स (गुफिक) और एमोक्सीबिड (बिड्डल-सायर)

प्रोबेनेसिड बाजार में बेनेमिड के नाम से मिलती है। दोनों औषधियों की कुल कीमत लगभग 60 रु. होती है। यदि मर्ज काफी लंबे समय से चल रहा है तब नीचे दिए गए तरीके से एंटीबायोटिकों का कोर्स दिया जाना चाहिए।

### I जटिल सुजाक

आरंभ में वे औषधियां दी जाती हैं जो "सरल सुजाक" के अंतर्गत, ऊपर बतायी गई हैं। उसके बाद निम्न औषधियां दी जानी चाहिए :— डॉक्सीसाइक्लिन, 100 मिग्रा. दिन में दो बार, मौखिक, 10 दिनों तक अथवा जब तक रोग के लक्षण पूरी तरह समाप्त नहीं हो जाते।

हमारे बाजार में उपलब्ध डॉक्सीसाइक्लिन के कुछ ब्रैंड हैं :

लायडॉक्स	100 मिग्रा. (लायका)
निओडॉक्सी	100 मिग्रा. (बायोकैम)
डॉक्सी-1	100 मिग्रा. (यू.एस.वी.)
डॉक्सीपाल	100 मिग्रा. (जगसन पाल)
कुल कीमत लगभग	100 रु.

### II डानोवैनोसिस

(1) को-ट्राइमोक्साजॉल 2 टिकियाएं, दिन में दो बार, मौखिक रूप से 14 दिन तक प्रत्येक 1 टिकिया में ट्राइमेथोप्रिम 80 मिग्रा और सल्फामिथाक्सीजोल

400 मिग्रा. होनी चाहिए।

हमारे बाजार में आमतौर से उपलब्ध ब्रैड हैं :

बैकिट्रम	(रोशे)
सेप्ट्रान	(बरोज—वेलकम)
ओरीप्रिम(कैडिला)	
सिनास्टाट	(रोसेल)

इलाज पर कुल लागत लगभग 50 रु.

अथवा

ट्रेट्रोसाइक्लिन हाइड्रोक्लोराइड 500 मिग्रा. दिन में चार बार, मौखिक, 15 दिनों तक।

### III लिम्फोग्रानुलोमा वेनेरेयम

डॉक्सीसाइक्लिन 100 मिग्रा. दिन में दो बार, मौखिक रूप से 15 दिन के लिए।

### IV विलंब से प्रगट होने वाली तथा अप्रकट सिफिलिस

इसमें ऐसी अप्रकट तथा विलंब से प्रकट होने वाली सिफिलिस शामिल हैं जिनमें रोगी दो वर्ष से अधिक समय से अथवा अनिश्चित काल से पीड़ित होता है।

उपचार के रूप में बैंजेथीन पेनीसिलिन इंजेक्शन, के 24 लाख यूनिट के तीन इंजेक्शनों, की सिफारिश की जाती है। इसे एक ही बार में, सप्ताह में एक बार, तीन सप्ताहों तक, दिया जाना चाहिए।

विलंबित सिफिलिस के उपचार का कुल खर्च लगभग 70 रु. आता है।



## पारिभाषिक शब्दावली

### अतिशीत शल्यकर्म (Cryosurgery)

अत्यधिक शीत स्पर्श में किया गया शल्यकर्म जिसमें शीघ्र हिमीकरण द्वारा ऊतकों को नष्ट किया जा सकता है। इसके लिए इस्तेमाल किए जाने वाले पदार्थ हैं :

कार्बन डाइआक्साइड ( $-79^{\circ}$  सै.)

नाइट्रो आक्साइड ( $-69^{\circ}$  सै.)

द्रव नाइट्रोजन ( $-196^{\circ}$  सै.)

### अश्लील साहित्य (Pornography)

पुस्तकों या फिल्मों के रूप में ऐसा साहित्य जिसमें यौन क्रियाओं का वर्णन होता है। इसका उद्देश्य यौन उत्तेजना पैदा करना होता है।

### आथैलिमा निओनैटोरम (Ophthalmia neonatorum)

नवजात शिशु की आँख की सूजन जो गोनोकोक्स बैक्टीरिया द्वारा उत्पन्न होती है। इस बैक्टीरिया से शिशु को जन्म के दौरान, उस समय ग्रस्त हो जाता है जब वह सुजाक पीड़ित माता की संक्रमित जन्म नालिका में से गुजरता है।

### इतरलिंगी (Heterosexual)

वह व्यक्ति जो अपने से विपरीत लिंग के व्यक्ति के साथ यौन संपर्क रखता है।

### एलिसा परख (Elisa Test)

एच.आई.वी. और अन्य रोगों की उपस्थिति का पता लगाने हेतु किए जाने वाला रक्त परीक्षण। यदि संक्रमण एच.आई.वी. का होता है तब इस परख द्वारा संक्रमण आरंभ होने के 6 सप्ताह बाद उसे पहचाना जा सकता है। यह पुष्टिकारी परीक्षण नहीं है। पुष्टि के लिए एकाधिक मित्र प्रणाली के इलाइफ वेस्टर्न ब्लाट परीक्षण करना जरूरी होता है।

## उपकला (Epithelium)

(स्तम्भाकार, रोमक, स्तम्भाकर, स्तरित पट्टकी) त्वचा, श्लेष्मा और सीरमी झिल्लियों को आच्छादित करने वाली कोशिकाओं की सतही परत। उस सरचना के अनुसार जिसे यह आच्छादित करती है, इसका आकार बदलता रहता है : उदाहरणार्थ त्वचा पर स्तरित पट्टकी, श्लेष्मा झिल्ली पर स्तम्भाकार और श्वसन श्लेष्मा झिल्ली पर रोमक स्तम्भाकार उपकला होती है।

## ऐन्यूरिज्म (Aneurysm)

किसी रक्त वाहिका, आमतौर से कोई प्रमुख धमनी यथा महाधमनी, की भित्ति का, किसी त्रुटि वश, स्थानीय रूप से फैलना। यह घटना कभी-कभी सिफिलिस के अंतिम चरण में घटती देखी जाती है।

## कपोसी/सारकोमा (Kaposi's Sarcoma)

एक प्रकार का कैंसर जो मुख्य रूप से त्वचा को प्रभावित करता है पर वह अन्य ऊतकों में भी फैल सकता है। इसके बाह्य लक्षणों के रूप में टांगों और पैरों पर लाल नीले से बैंगनी रंग के धब्बे हो जाते हैं। एड्स से पीड़ित व्यक्तियों के शरीर पर आमतौर से ऐसे धब्बे उभर आते हैं।

## काला आजार (Kala-azar)

परजीवी लीशमैनिआ डोनोवानी द्वारा उत्पन्न संक्रामक रोग जिसमें बुखार आता है और यकृत के आकार में वृद्धि हो जाती है। इसमें त्वचा काली पंड़ सकती है। इसीलिए इसका नामकरण “काला-आजार” पड़ा। यह बिहार और पश्चिम बंगाल में आम फैलता है।

## क्रिप्टोकोक्सिस (Cryptococcosis)

नियोफार्मान्स गहरा कवक संक्रमित व्यक्तियों में यह अवसरवादी संक्रमण की भाँति कार्य करता है

संक्रमण से मस्तिष्क और उसको ढंकने वाली झिल्ली के प्रभावित हो जाने के कारण इसके आम लक्षण हैं थकावट, वजन में कमी, सिर दर्द, उल्टी

और गर्दन का अकड़ जाना। ये सूक्ष्मजीव फेफड़ों, गुर्दों, त्वचा, आँखों के फंडस तथा अन्य अंगों मे भी फैल सकते हैं और वहां भी ये अपने लक्षण उत्पन्न कर सकते हैं।

### **कैंडिडिअल वेजीनाइटिस (Candidal Vaginitis)**

यीस्ट द्वारा उत्पन्न यौनि संक्रमण जिसमें खुजली होती है और सफेद पानी विसर्जित होता है। कभी-कभी ऐसी हालत डायबेटीज से पीड़ित महिलाओं में भी हो जाती है।

### **गर्भ (Foetus)**

गर्भधारण के 8 सप्ताह बाद गर्भस्थ शिशु को मानव के रूप में पहचाना जा सकता है। सप्ताह से पहले यह भ्रूण कहलाता है।

### **गर्भपात (Abortion)**

गर्भावस्था के 28 सप्ताह से पहले गर्भ का निष्कासन। वह स्वतः हो सकता है अथवा कृत्रिम साधनों से कराया जा सकता है।

### **गर्भाशय (Uterus)**

वह अंग जिसमें जन्म से पहले शिशु पलता है।

### **गर्भाशयग्रीवा (Cervix)**

गर्भाशय की ग्रीवा जो योनि में खुलती है।

### **गुदा-मलाशय क्षेत्र (Ano-rectal region)**

वह क्षेत्र जिसमें खाद्य/नाल का निचला सिरा भी शामिल होता है गुदा कहलाती है। जहाँ से मल शरीर से बाहर निकलता है।

### **चक्कता (Plaque)**

उभरी या दबी हुई सपाट विक्षति जिसकी चौड़ाई गहराई से अधिक होती है।

### **जननाग (Genitals)**

लैंगिक अंग। पुरुषों में इनमें शिश्न, वृषणकोष और वृषणीय पदार्थ शामिल होते हैं तथा स्त्रियों में बृहत् भंगोष्ठ, लघु भंगोष्ठ सहित भग तथा भंगशिंगका शामिल होते हैं।

### **जन्मजात (Congenital)**

शरीर अथवा अंगों की वे असामान्यताएँ जो जन्म के समय से अथवा उससे पूर्व से ही मौजूद होती हैं। ये असामान्यताएँ आनुवंशिक रोगों या गर्भावस्था में कुछ औषधियों के प्रभावस्वरूप तथा संक्रमण द्वारा, अथवा स्वतः उत्पन्न हो जाती हैं।

### **ट्राइकोमोनस वेजिनेलिस वेजिनाइटिस (Trichomonas Vaginalis Vaginitis)**

परजीवी द्वारा उत्पन्न योनि का ऐसा संक्रमण जिसके कारण खुजली होती है और दुर्गंधित सफेद तरल विसर्जित होता है।

### **डार्कफील्ड सूक्ष्मदर्शी (Dark Field Microscope)**

सिफिलिस उत्पन्न करने वाले रोगाणुओं को पहचानने हेतु इस्तेमाल किए जाने वाला सूक्ष्मदर्शी। इसमें पृष्ठभूमि में अंधेरा होता है और उस पर चमकदार, गतिशील, सूक्ष्मजीवों को स्पष्ट देखा जा सकता है।

### **द्विलिंगी (Bisexual)**

वह व्यक्ति जिसके स्त्री और पुरुष, दोनों से यौन संबंध होते हैं।

### **दुर्दम्य (Malignant)**

ऐसे कैंसर जो स्थानीय तौर पर मौजूद होते हैं अथवा आंरभ होने वाले स्थल से दूर के अंगों तक फैल भी सकते हैं। दूसरी अवस्था में अन्य अंग कैंसरग्रस्त हो जाते हैं और मरीज की मृत्यु तक हो सकती है।

### **नपुंसकता (Impotence)**

काम शक्ति से हीन पुरुष। आमतौर पर यह शब्द अपमानजनक समझा जाता

है। इसलिए चिकित्सक आजकल ऐसे व्यक्ति को “स्तंभन समस्या से ग्रस्त व्यक्ति” कहते हैं। स्वयं को नपुंसक समझनेवाले व्यक्तियों में से लगभग 50 प्रतिशत पुरुष सहवास करने की सही विधि से अनभिज्ञ होते हैं।

## नवजात शिशु (New Born)

एक महीने की आयु तक का नया जन्मा शिशु।

## नालवण (fistula)

त्वचा से किसी आंतरिक अंग का जानेवाला एक असामान्य मार्ग।

## पापानिकोलाऊ (पैप) लेप (Papanicolan (pap) Smear)

कैंसर संक्रमण और कोशिकाओं की किस्म ज्ञात करने हेतु योनि और गर्भाशय ग्रीवा के स्रावों से तैयार किया गया लेप। इसे सूक्ष्मदर्शी द्वारा परखा जाता है।

## प्रत्यक्ष दूरदर्शी (Direct Microscopy)

सूक्ष्मदर्शी के नीचे उत्तक कोशिकाओं का वर्धित दृश्य।

## प्रमस्तिष्ठक मेरु रज्जू तरल (Cerebrospinal fluid -CSF)

मस्तिष्ठक और मेरु रज्जू के इर्द-गिर्द मौजूद तरल जिसमें ये अंग डूबे रहते हैं और जो झटके-सह्य (शॉक-एब्सोबर) युक्ति की भाँति कार्य करता है।

## प्रसवोत्तर (Post-partum)

प्रसूति के एक महीने बाद की अवधि।

## फेलोपी नलिकाएँ (Fallopian tubes)

नलिकाएँ जो डिम्ब ग्रंथि से गर्भाशय को जाती हैं। डिम्ब और शुक्राणु का निषेचन इन्हीं के द्वारा होता है।

## बंध्यता, बांझपन (Infertility)

शिशु को जन्म देने में अक्षमता। स्त्रियों में ऐसा अपर्याप्त डिम्ब उत्पादन,

फेलोपी नलिकाओं में अवरोध या गर्भाशय में संक्रमण हो जाने के फलस्वरूप हो सकता है। पुरुषों में बंध्यता शुक्राणुओं के अपर्याप्त या त्रुटिपूर्ण उत्पादन के फलस्वरूप वृषण के रोगों अथवा वाहिका में बाधा आ जाने के कारण भी ऐसा हो सकता है।

### **बंध्यता (Sterility)**

शिशु को जन्म देने में अक्षमता। यह पुरुष या स्त्री में अन्य रोगों के कारण भी हो सकती है।

### **बैलैनिटिस जेरोटिका (Balanitis Xerotica)**

वह अवस्था जिसमें शिश्न की टोपी में झुर्रियां पड़ जाती हैं, वह सफेद और कांचीय सद्वश्य हो जाता है इससे उस पर खाल नहीं चढ़ पाती। विषम परिस्थितियों में यह व्याधि मूत्र मार्ग में भी फैल जाती है। उस समय यह अवस्था बैलैनिटिस जेरोटिका ओब्लीटेरन्स कहलाती है।

### **भग शिश्नका (Clitoris)**

स्त्री के जननांगों का एक लघु उच्छायी अंग जो लघु भगोष्ठ (लाबिया माइनोरा) के सामने संगम पर स्थित होता है। पुरुषों के शिश्न का प्रतिअंग (काउंटरपार्ट)।

### **माइकोबैक्टीरियाई संक्रमण (Mycobacterial infections)**

माइकोबैक्टीरिया नामक बैक्टीरिया के किसी समूह द्वारा उत्पन्न संक्रमण। इनसे क्षय रोग और कोढ़ जैसे रोग हो सकते हैं।

### **मूत्र मार्ग (Urethra)**

मूत्राशय से लेकर मूत्र करने के बाह्य अंग तक का मार्ग जिसमें से मूत्र गुजरता है। स्त्रियों में यह मार्ग छोटा, लगभग 4 सेमी.लंबा, होता है परंतु पुरुषों में यह लंबा होता है और अग्र तथा पश्च भागों में विभक्त होता है।

### **मृतजात (Still-birth)**

गर्भधारण के 28 सप्ताह बाद ऐसे शिशु का जन्म जिसमें श्वसन या अंग

संचालन जैसा जीवन दर्शाने वाला कोई लक्षण मौजूद नहीं होता।

## योनि (Vagina)

गर्भाशय ग्रीवा से भग तक का मार्ग। इसमें संक्रमण होने से वेजिनाइटिस रोग हो जाता है जिसमें सफेद तरल विसर्जित होता है।

## योनि आकर्ष (Vaginismus)

योनि का पीड़ायुक्त संकुचन।

## यौगिकीकृत औषधि विस्फोट (Fixed drug eruption)

त्वचा या श्लेष्मा झिल्ली पर किसी औषधि यथा सल्फा, एस्प्रीन आदि के प्रति एलर्जी से उत्पन्न गहरे धूसर नीले रंग के गोल चक्कते। हर बार जब व्यक्ति इस प्रकार की आक्रमक औषधि लेता है, तब ये चक्कते शरीर के एक अंग विशेष पर ही उभरते हैं।

## रिट्रोवायरस (Retrovirus)

रिट्रोविरिडाई कुल के वायरस। “रिट्रो” का अर्थ है “पश्य”, “विपरीत दिशा में”। ये आर.एन.ए. वायरस होते हैं परंतु इसमें एक विशिष्ट एंजाइम, रिवर्स ट्रांसक्रिप्टेज, जो एक आर.एन.ए.—आश्रित डी.एन.ए. पालीमरेज होती है, की मदद से आर.एन.ए. को डी.एन.ए. में परिवर्तित करने की क्षमता होती है।

## रोहे (Trachoma)

बैक्टीरिया—जन्य आँखों का संक्रमण जिससे नेत्रश्लेष्मला और कोर्निया प्रभावित हो जाते हैं। इसमें दर्द होता है, आँखों में से पानी बहता है, और वे लाल हो जाती हैं। अगर अधिक दिनों तक यह रोग चलता रहता है तब रोगी अंधा भी हो सकता है।

## लाइचेन प्लैनस (Lichen planus)

त्वचा या श्लेष्मा झिल्लियों को प्रभावित करने वाला एक रोग जिसमें त्वचा पर बैंगनी रंग की विक्षतियां और श्लेष्मा झिल्ली पर सफेद फीते—सदृय पैटर्न

उभर आते हैं। ये विक्षितियां आमतौर से बाहों, टांगों और पीठ के निचले हिस्से में उभरती हैं और उनमें खुजली लगती है।

### **लेजर (Laser)**

(लाइट एम्प्लीफिकेशन बाई स्टीमुलेटेड एमीशन आफ रेडियेशन) इस एकवर्णीय प्रकाश से बहुत तीव्र उष्मा उत्पन्न होती है जो ऊतक संरचनाओं को नष्ट कर सकती है। लेजर के इस्तेमाल से यह लाभ होता है कि ऊतक विशेष को, आसपास के सामान्य ऊतकों को हानि पहुंचाए बिना ही, नष्ट किया जा सकता है।

### **वाहिका विस्फार (Aneurysm)**

रक्त वाहिका, आमतौर पर महाधमनी सदृश्य किसी प्रमुख धमनी की दीवार का किसी स्थानीय त्रुटि के फलस्वरूप स्थानीय विस्फार। कभी-कभी ऐसा सिफिलिस के अंतिम चरण में देखा जाता है।

### **विक्षति (Lesion)**

रोगों के फलस्वरूप शारीरिक ऊतकों में होने वाली विकृति।

### **शिशु (Infant)**

एक वर्ष तक की उम्र का बालक/बालिका।

### **संदर्भ रोगी (Index Patient)**

यौन संचरित रोगों से पीड़ित ऐसा व्यक्ति जो स्वेच्छा से चिकित्सक के पास जाता है अथवा जिसे पारिवारिक चिकित्सक द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा भेजा जाता है।

### **समलिंगी (Homosexual)**

वह व्यक्ति जो अपने ही लिंग के व्यक्ति के साथ यौन संपर्क रखता है।

### **सोरिआसिस (Psoriasis)**

त्वचा का ऐसा रोग जिसमें चांदी जैसी पपड़ी वाली लाल विक्षितियां हो जाती

हैं। ये आमतौर से खोपड़ी, पीठ, कोहनी और घुटनों पर होती हैं। ये सर्दी की ऋतु में बढ़ जाती हैं और इनमें संधियां भी संबद्ध हो सकती हैं।

### स्ट्रीट वाकर (Street Walker)

वेश्याएं अथवा अन्य व्यक्ति जो किसी भी व्यक्ति की यौन लिप्सा मिटाने को तैयार हो जाते हैं।

• • •

परिशिष्ट दो

## तकनीकी शब्दावली

अंग	Organ
अंगधात/लकवा	Paralysis
अंतर्गर्भाशय अस्थानता	Endometriosis
अंतर्गर्भाशय कला	Endometrium
अंतर्गर्भाशय ग्रीवा	Endocervix
अंतर्गर्भाशय युक्ति (आई.यू.डी.)	Intrauterine device(IUD)
अंतःपेशी	Intramuscular
अंतरालीय	Interstitial
अंतर्रोध	Occlusion
अंतस्थ	Terminal
अंतःशिरा	Intravenous
अंतःस्नावी रोग	Endocrinal disease
अग्र	Aterior
अग्रच्छद	Foreskin
अधिमांस	Wart
अधिवृष्ण	Epididymis
अधिवृष्ण शोथ	Epididymitis
अणु	Molecule
अतिपूरित	Engroged
अनुक्रिया/प्रतिवेदन	Response
अनाँक्सीय	Anaerobic
अनुकम्पी	Sympathetic
अनुशिथिलन	Diastolic
अपरा	Placenta
अपवाही	Effarent

अपारदर्शिता	Opacity
अभिरंजन	Stain
अमीबारुगणता	Amoebiasis
अमीबी संक्रमण	Amoebic infetion
अलक्षणी	Asymptomatic
अल्वपोन्माद	Hypomania
अवकाशिका/ल्यूमेन	Lumen
अवसाद	Depression
असंक्रामी	Non-infective
असंयमित	Indiscriminate
अहानिकारी	Innnocous
आन्त्रशोथ	Enteritis
कार्कष/ऐंठन	Spasm
आधान	Transfusion
—रक्ताधान	- Blood-transfusion
आनुषंगिक	Concomitant
आवेग	Impulse
आशयिक	Splanchnic
आसुत जल	Distilled water
आसाव/विसर्जन	Discharge
इंद्रिय	Organ
अतरलिंग वस्त्र कामुक	Transvestite
इतरालिंगी	Heterosexual
उग्र	Virulent
उच्छायी	Erectile
उदासीन रागी कोशिका	Neutrophil
उद्दोषित करना	Stimulate
उत्सर्जन	Emission
उपकला	Epithelial

उपरिस्थ	Superficial
उरसंधि/जांघ का जोड़	Groin
ऊष्मायम	Incubation
एंटीबायोटिक	Antibiotic
एक-केन्द्रक	Mononuclear
एक्सोस्टाइल	Axostyle
एच.आई.वी.	HIV (Human
(मानव रोग क्षमहीनता वायरस)	Immunodeficiency
एड्स	AIDS (Acquired immuno
(अर्जित रोगक्षम हीनता संलक्षण)	Deficiency Syndrome)
ऐंठन	Cramp
ऐन्यूरिज्म	Aneurysm
औषध/भेषज, आयुर्विज्ञान कायचिकित्सा	Medicinal
औधधि/नशीली वस्तु	Drug
कंद	Bulb
कणिका गुल्मीय	Granulomatious
कटाव	Erosion
कटि	Lumbar
कवक	Fungal
कवक तंतु	Hypha
कशाम	Flagellae
कांड	Shaft
कामोत्तेजक/कामोद्दीपक	Erotic
कूट श्लीपद/मिथ्या फील पांव	Pseudoelephantiasis
किरीटी	Coronal
कृच्छ मैथुन/पीड़ायुक्त मैथुन	Dyspareunia
कोष्ण/गुनगुना	Warm
क्षतिज	Traumatic
क्षणिक	Transient

क्षय रोग, तपेदिक	Tuberculosis
क्षीण	Atropic
खंड	Lobe
खरोंच	Abrasion
खातिका	Groove
खुजली	Itching
खुराक	Dosage
गर्तिका	Dimple
गर्भाधारण	Conception
गर्भनिरोधक	Conception
गर्भाशय	Uterus
गर्भाशय ग्रीवा	Cervix
गर्भाशय ग्रीवायी	Cervical
गर्भाशयग्रीवा शोथ	Cervicitis
बहूवर	Cavernosa
ग्रंथिल	Glandular
ग्रसनी	Pharyngeal
गुह्य	Pudendal
गुद	Anal
गैर-विशिष्ट	Non-specific
गैर-सुजाकी मूत्रमार्ग-शोथ	Non-gonococcal urethritis
घटना	Incidence
घर्षण	Abrade
चकते	Plaque
चमड़ी/शिशनमुण्डशोथ	Balanitis
चिरकारी	Chronic
चिह्न	Sign
जघन	Pubic
जघनास्थ	Pubis

जघन शैल	Mons pubis
जघन संधावक	Pubic symphysis
जघन यूकारोग	Pediculosis pubics
जठरांत्र शोथ	Gastroenteritis
जनन	Reproductive
जनन मूत्र	Genito-urinary
जननांग	Genitals
जननेंद्रिय	Genitalia
जन्मजात	Congenital
जानपदिकरोग विज्ञानी	Epidemiologist
जालक	Plexus
जीवाणु/सूक्ष्मजीव	Organism
ज्वर उत्पन्न करने वाले कारक	Pyrogenic
झल्लरित	Fimbriated
झिल्ली	Membrane
झुलसना	Scalding
ट्राइकोमीनीयता	Trichomoniasis
ट्यूबक्टोमी	Tubectomy
ठंडापन	Frigidity
डिम्ब ग्रंथि	Ovary
डोनोवैनोसिस	Donovanosis
तंतु	Fibre
तंत्र	System
तंत्रिका	Nerve
तंत्रिका-तंत्र सिफिलिस	Neurosyphilis
ताल	Tone
तीव्र	Acute
तुर्करूप	Fusiform
त्वचा	Cutaneous

त्वरणसीय	Sebaceous
तोरणिका	Fornice
दाहक	Caustic
दुबधिक्य	Congestion
दुर्दम्यता	Malignancy
दुष्क्रिया	Dysfunction
दृढ़ता	Rigidity
दौर	Stage
दौरा	Fit
नलिका	Tubule
धड़	Trunk
धमनी	Artery
नवजात	Neonatal
नवजात नेत्रामिष्यन्द	Ophthalmia neonatorum
नालवण	Fistule
निकोचन	Strictures
निगरानी केन्द्र	Surveillance Centre
निदान	Diagnosis
निपात	Collapse
निम्भजन	Dmmersion
निरोधक	Preventive
निर्जर्मित	Sterilised
निष्क्रिय	Passive
निस्त्वचन	Excoriation
नेत्रश्लेष्मला शोथ	Conjunctivitis
नैदानिक	Clinical
पट्टकी/शाल्की	Squamous
पपड़ीयुक्त	Scaly
परानुम्पी	Parasympathetic

परामूत्र पथ	Paraurethral
परिसरीय	Peripherally
परजीव	Parasite
परजीवी	Parasitic
परपोषी	Host
परिगलित	Necrotic
परिवर्ती	Transitional
पर्विका, गांठ	Nodule
पश्च	Posterior
पश्चगामी वायरस	Retro-virus
पारसाव	Transudate
पाश्व प्रभाव	Side effect
पिंड	Corpus
पित्ती	Rash
पुटक	Fold
पटिका	Vesicle
पुनरावृति	Recurrence
पूतिता	Sepsis
पृष्ठभूमि	Background
पोषण	Alimentary
पुरःस्थ/प्रोस्ट्रेट	Prostrate
प्रकाश सह्यता	Photophobia
प्रकुंचन	Systolic
प्रधाण	Vestibule
प्रति अवसादक	Antidepressant
प्रति उच्चरक्तदाबी	Antihypertensive
प्रतिगमन	Retraction
प्रजनन शक्ति	Fertility
प्रतिकवक	Antifungal

प्रतिरोपण	Transplant
प्रतिवर्त	Reflex
प्रतिवायरसी	Antiviral
प्ररूप	Type
प्रशाखा	Ramus
प्रसृत/विकीर्ण	Disseminated
प्रॉस्ट्रेट	Prostrate
फाहा	Swab
फेलोपी नलिका	Fallopian tube
फोड़ा	Avscess
फ्रीनुलम	Frenulum
बंध्यता	Sterility
बर्हिमुखी	Extrovert
बहुरूपी	Polymorphous
बांझपन	Infertility
बाह्य त्वचा	Epidermis
बर्हिगर्भाशय ग्रीवा	Excervix
बर्हि-परजीवी	Ectoparasite
बीजाणु	Spore
बुद्धन/फँडस	Fundus
भग	Vulva
भगशोथ	Vulvitis
भगशिशिनका	Clitoris
भगांजलि	Fourchette
भगोष्ठ	Labium
-बृहत	-Majora
-लघु	-Minora
मनोअवसाद	Psychotic depression
मनोभ्रम	Dementia

मनोविकारी	Psychiatric
मनोसक्रिय	Psychoactive
मलाशय	Rectum
मलाशय शोथ	Proctitis
मवाद	Pus
माउंट	Mount
मुख/मौखिक	Oral
मुख	Os
मुण्ड	Glans
मूत्रप्रजनन	Urogenital
मूत्रमार्ग	Urethra
मूत्रमार्ग शोध	Urethritis
मूत्राशय	Bladder
मूलाधार	Perineum
मृत्युदर/मृत्यु संख्या	Mortality
मृतोतक	Slough
मेरुदंड/रीढ़	Spinal
मैथुन	Sexual intercourse/esitus
यौनि	Vagina
यौनि आकर्ष	Vaginismus
योन्च्छद	Hymen
योनिमार्ग	Vaginal canal
योनिद्वार	Introitus
योनिशोथ	Vaginitis
योन संचरित रोग	Sexually transmitted disease
रक्त वाहिका	Blood vessel
रक्तधर पिंड	Corpora Cavernosa
रक्तधर	Spongiosum
रक्ताधिक्य	Congestion

रजोनिवृति	Menopause
रज्जु	Cord
रतिज कणिकागुल्म	Granuloma venereum
रतिज लसीका – कणिकागुल्म (लिम्फोग्रैनुलोमा वेनेरियम)	Lymphogranuloma venereum
रतिज रोग	Veneral diseases
रोगक्षम हीनता	Immunodeficiency
रोगनिरोधी	Prophylactic
रोगहर उपचार	Curative treatment
रोगाणु	Pathogen
रोहे	Trachoma
लक्षण	Symptom
लसीका पर्व	Lymphnode
लसीका पर्व विकृति	Lymphadenopathy
लाक्षणिक	Symptomatic
लेप	Smear
लैंगिक परिपक्वता	Sexual maturity
श्वेतकोशिका/ल्यूकोसाइट	Leukocyte
वक्ष	Thoracic
वस्तुकामुकता	Fetishism
वासकटोमी	Vasectomy
वार्ट/अधिमांस	Wart
वाहिकाविस्फार	Vasodilation
विकार	Disorder
विकृति	Disorder
विकृति/अस्वस्थता	Morbidity
विक्षति	Lesion
विक्षिप्ति/पागलपन	Insanity
विच्छेदन	Amputation

विधान	Regimen
विदर	Cleft
विदार	Laceration
विवर/साइनस	Sinus
विवृत/खुला हुआ	Patent
विरल	Lax
विषालुता/जहरीलापन	Toxicity
विसर्जन	Discharge
वीर्य	Semen
वृषण	Testes
वृषणीय	Spermatic
वृषण उत्कर्षिका (पेशी)	Cremaster(muscle)
वृषणकोष	Scrotum
व्रणचिन्ह	Scar
व्रण/दाह	Sores
व्रणीय	Ulcerative
व्रणोत्पति/व्रणीभवन	Ulceration
शरीर क्रिया विज्ञान	Physiology
शिरिका	Venule
शारीररचना विज्ञान	Anatomy
शिथिल	Flaccid
शिरा	Vein
शिश्नालाभीय	Sinusoidal
शिश्न	Penis
शिश्नमुण्डच्छद	Prepuce
शुक्र	Seminal
शुक्रवाहिका	Vas deferens
शुक्राणु	Sperm/Spermatozoa
शैंकराभ	Chancroid

शोथ	Inflammation
शोफ	Oedema
इलेष्मा	Mucous
श्वेत प्रदर/सफेद पानी	Leucorrhoea
श्रोणि	Illa
श्रोणि/कूल्हे	Pelvis
संकटपूर्ण	Hazardous
संक्रमी	Infective
संचारी	Communicable
संदमनकारी	Intibitor
संदूषित	Contaminated
संधिशोथ	Arthritis
संयम बरतना/संयमित	Discxriminate
संयोजित	Fused
संलग्न	Adjacent
संलक्षण	Syndrome
संबंदित	Convoluted
संवेदी	Sensory
सांसार्गिक	Contagious
समलिंगी कामुकता	Homosexuality
समजात	Homologues
सर्पिल	Spiral
सहअौषध	Adjuvent
सहकारक	Cofactor
सांसार्गिक	Contiguous
साहनरा/शिरानाल/विदर	Sinuses
सिफिलिस	Syphilis
सुग्राह्यता	Susceptibility
सुजाक	Gonorrhoea

सुजाकीय	Gonococcal
सुप्त	Latent
सुमेद्ध	Vulnerable
सूक्ष्मजीव/रोगाणु	Microbes
सूजन	Swelling
सेक्रमी	Sacral
स्खलन	Ejaculation
स्खलनीय	Ejaculatory
स्तम्भन	Erection
स्तरभाकार	Columnar
स्नायु	Ligament
स्त्रीसमलिंग कामुकता	Lesbianism
स्वक्षम	Auto immune
स्वैर (अनेक व्यक्तियों में यौन संबंध)	Promiscuous
स्वसंचालित	Autonomic
हर्पेज जननांग	Herpes genitalis
हर्पेज/परिसर्प	Herpes
हारमोन	Hormone
हिमशल्य क्रिया	Cryosurgery
हिस्टियोसाइटी	Histiocytic

• • •

## चित्रों की सूची

चित्र 1 : यौन संचरित रोगों से पीड़ित होने वाले व्यक्तियों की कुल संख्या की तुलना में चिकित्सकों के पास आने वाले मरीजों की संख्या हिमखंड के पानी की सतह के ऊपर दिखने वाले अंश के समान है।.....	9
चित्र 2 : शिश्न की लम्बवत काट .....	14
चित्र 3 : पुरुष के लैंगिक अंग .....	15
चित्र 4 : जनन—मूत्र तंत्र की उपकला सतहें .....	17
चित्र 5 : पुरुष यौन प्रतिवेदन का तंत्रिका नियंत्रण .....	19
चित्र 6 (क) और (ख) : स्त्री लैंगिक अंग .....	21
चित्र 7 : गर्भाशय, फैलोपी नलिका और डिम्बग्रंथियां .....	22
चित्र 8 : स्त्री यौन प्रतिवेदन का तंत्रिका नियंत्रण .....	24
चित्र 9 : सिफिलिस उत्पन्न करने वाल सूक्ष्मजीव ; द्विपोनेमा पॉल्जीडम .....	27
चित्र 10 : सिफिलिस का प्राथमिक घाव .....	30
चित्र 11 : द्वितीयक सिफिलिस के त्वारकितमायुक्त उभरी विक्षति .....	30
चित्र 12 : तृतीयक सिफिलिस में महाधमनी का ऐन्च्यूरिज्म .....	31
चित्र 13 : शैकराभ उत्पन्न करने वाला सूक्ष्मजीव : हीमोकिल्लस ड्यूक्रोबैर्झ .....	31
चित्र 14 : शैकराभ के व्रण .....	37
चित्र 15 : डोनोवैनोसिस के व्रण .....	37
चित्र 16 : डोनोवैनोसिस उत्पन्न करने वाला सूक्ष्मजीव : डोनोवैन के पिंड .....	40
चित्र 17 : एल.जी.वी. के पीड़ित स्त्री जननांगों का ऐलीफेंटाइसिस श्लीपद .....	40
चित्र 18 : हर्पेज जेनीटैलिस से पीड़ित पुरुष के कांड शिश्न पर क्षुद्र कोष्ठिकी विक्षतियां .....	50
चित्र 19 : सुजाक से पीड़ित पुरुष के मूत्रमार्ग के सिरे पर विसर्जन .....	50
चित्र 20 : मवाद कोशिकाओं में ग्रैम नेगेटिव डिप्लोकोकार्ड ; सुजाक उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव .....	51
चित्र 21 : ट्राइकोमोनास वैजीनैलिस .....	52
चित्र 22 : गुद—मलाशय क्षेत्र .....	58

चित्र 21 : ट्राइकोमोनास वैजीनैलिस .....	52
चित्र 22 : गुद-मलाशय क्षेत्र .....	58
चित्र 23 : स्कैबीज के माइट (सैरकोप्टेज़ स्कैबीई) .....	60
चित्र 24 : स्कैबीज : जननांग विक्षतियां .....	66
चित्र 25 : जनानांग अधिमांस .....	66
चित्र 26 : मोलस्कम कांटेजिओसम .....	67
चित्र 27 : देह्यूका और जघन यूका .....	69
चित्र 28 : विश्व में एच.आई.वी. जन्य रोग कहां-कहां फैले हैं? .....	75
चित्र 29 : विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा विभिन्न देशों में एच.आई.वी. रोग फैलने के अनमान .....	
	76
चित्र 30 : एच.आई.वी. व्यवस्थात्मक चित्र .....	78
चित्र 31 : एच.आई.वी. शरीर में कैसे प्रवेश करता है .....	80
चित्र 32 : विंडो पीरियड और एच.आई.वी. एन्टीबॉडी .....	81
चित्र 33 : टी-4 कोशिकाओं की संख्या और एच.आई.वी./एड्स .....	82
चित्र 34 : निचोड़ तकनीक .....	117
चित्र 35 : कंडोम के उपयोग की और फैंकने की सही विधियां .....	127
चित्र 36 : डार्क ग्राउंड माइक्रोस्कोप के कंडेंसर में से किरणों का पथ .....	138

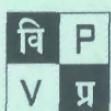
## सारणियां

---

सारणी – 1 : विभिन्न रोग उत्पन्न करने वाले यौन संचरित रोगाणु .....	5-7
सारणी – 2 : दक्षिण-पूर्वी एशियाई क्षेत्र में एड्स और एच.आई.वी. के संक्रमण से पीड़ित व्यक्तियों की संख्या .....	74
सारणी – 3 : मनोवैज्ञानिक कारक जिन पर सफल मैथुन निर्भर होता है .....	108

---

यह पुस्तक विज्ञान प्रसार स्वास्थ्य शृंखला की एक कड़ी है। इसमें लेखक ने यौन संबंधी समस्याओं और यौन संचरित रोगों के बारे में युवा पाठकों की जानकारी के लिए बड़ी महत्वपूर्ण सामग्री प्रस्तुत की है। यौन और उसके रचना विज्ञान तथा क्रियाविज्ञान – विषय को इसमें भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में प्रस्तुत किया गया है। आम लोगों में इन विषयों संबंधी अत्यधिक अज्ञान और गलत धारणाएं विद्यमान हैं। यौन संचरित रोगों को विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा दिए गए इनके सरक्षण संबंधी निर्देशों के अनुरूप प्रस्तुत किया गया है, जैसे कि जननांगी व्रण रोगों, जननांगी सावों आदि। इस सत्य को ध्यान में रखते हुए कि एशियाई और अफ्रीकी देशों में एच.आई.वी. संक्रमण का सबसे अधिक कारण यौन संचरण है, लेखक ने इन क्षेत्रों में एच.आई.वी. संक्रमण और एड्स के तेजी से फैलने के कारणों पर विस्तार से प्रकाश डाला है। यौन संचरित रोगों की रोकथाम और उपचार के उपायों संबंधी जानकारी इस पुस्तक को अधिक उपयोगी बनाती है और यह चिकित्सा विज्ञान से जुड़े लोगों के लिए भी उतनी ही उपयोगी है। इतना ही नहीं यह पुस्तक परा-चिकित्सा कार्यकर्ताओं, नर्सों, प्रयोगशाला तकनीशियनों, स्वास्थ्य समाजसेवकों तथा अन्य लोगों के लिए भी बहुत उपयोगी है।



## विज्ञान प्रसार

सी-24, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया  
नई दिल्ली-110016